श्री दुर्गा सप्तशती

श्री शिला माता शक्तिपीठ प्रकाशन, आमेर (जयपुर)

CSUJPR
11712

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, जयपुर परिसर

पुस्तकालय

पुस्तक संख्या .....

वर्गीकरण संख्या .....

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, जयपुर

परिसर 11712

वर्गीकरण सं. .....

पुस्तक सं. ..... दिनाङ्क.....

यह पुस्तक नीचे अङ्कित तिथि या उससे पूर्व लौटा दी जानी चाहिये। यदि पुस्तक निर्धारित तिथि से अधिक समय तक पाठक अपने पास रखेंगे तो 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क देय होगा।

12 1 SEP 2018		
2018 OCT 30		

1.1H

SV-2024

॥ श्रीः ॥

दुर्गा–सप्तशती

प्रभाख्यया हिन्दीव्याख्यया आंग्लानुवादेन च समवेता

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

महामहोपाध्याय-विद्यारत्न–**पण्डित–गङ्गाधर–द्विवेदी**

व्याकरणसाहित्याचार्यः

पूर्वप्राचार्यः, महाराजसंस्कृतकालेजः,

मोदमन्दिर–धर्मसभाध्यक्षः, जयपुरम्

प्रकाशक :

मन्त्री, **श्री शिलामाता ट्रस्ट**

आमेर (जयपुर)

२०४३ वि० (१९८७ ई०)

श्रीशिलामाता-आगम-ग्रन्थावली

संख्या-१

दुर्गा-सप्तशती

(हिन्दी व्याख्या एवं अंग्रेजी अनुवाद सहित)

व्याख्याकार एवं सम्पादक :

पं० गङ्गाधर द्विवेदी

प्रथम संस्करण २०००

© प्रकाशक

वि० संम्वत् २०४३

१९८७ ई०

प्रकाशक :

मन्त्री, श्री शिलामाता ट्रस्ट

आमेर (जयपुर)

मुद्रक :

ललित शर्मा, पण्डित प्रिन्टर्स, मणिहारों का रास्ता,

जयपुर (राजस्थान)

मूल्य : राज संस्करण ३००.०० रुपये

साधारण संस्करण २५०.०० रुपये

CSUJPR

11712

DURGĀ SAPTAŚATĪ

Edited

With commentary PRABHA in Hindi and English translation

By

Mahāmahopādhyāya Vidyāratna **Pandit Gangadhar Dvivedi**

Vyākarana-Sāhityāchārya

Principal (*Retd.*)

MAHĀRĀJĀ'S SANSKRIT COLLEGE

and

President, Modmandir-Dharmasabhā

JAIPUR

Published by :

The Secretary, SHRI SHILĀMĀTĀ TRUST

ĀMBER (Jaipur)

Rājasthān

1987 A. D. (2043 V. S.)

Shri Shilāmātā Āgam Series

No. 1.

Durgasaptashati

with Hindi Commentary and English translation

Edited by : **M.M. Pt. Gangadhar Dvivedi**

First edition : **2000**

2043 V. S. (**1987** A.D.)

© The Publisher.

Price : Delux edition Rs. **300.00**

Ordinary edition Rs. **250.00**

Published by :

The Secretary, **Shri Shilamata Trust**

Amber (Jaipur)

Printed by :

LALIT SHARMA,

Pandit Printers, 389, Maniharon-Ka-Rasta,

JAIPUR–302003

(Rajasthan)

श्री शिलामाता शक्तिपीठ ट्रस्ट, आमेर

ग्रन्थांक : १ 'दुर्गा सप्तशती' सम्पादक : म. म. पं. गङ्गाधर द्विवेदी, जयपुर

उद्देश्य :

१. शक्ति उपासना सम्बन्धी आर्ष साहित्य तथा लोकोपयोगी आगम ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद के साथ सम्पादन एवं प्रकाशन।

२. शक्ति–साधना से सम्बन्धित प्रामाणिक एवं दुर्लभ, प्राचीन साहित्य का गवेषणात्मक अध्ययन के साथ सरल सुबोध विवरण सहित प्रकाशन।

३. दश महाविद्याओं के यान्त्रिक विग्रहों का वर्गीकरण एवं उनकी परम्परागत साधना का अनुसन्धान तथा आवश्यक विश्लेषण।

४. शाक्त परम्परा के मान्य आचार्यों तथा महामनीषियों द्वारा प्रणीत स्तोत्र साहित्य का हिन्दी व्याख्या के साथ सम्पोषण तथा प्रकाशन।

५. आमेर, जयपुर के राजवंश द्वारा शक्ति पीठ की स्थापना एवं उपासना के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान की ऐतिहासिक सामग्री का प्रामाणिक संकलन और उसका प्रकाशन।

SHRI SHILAMATA SHAKTI-PEETH TRUST PUBLICATION SERIES.

Book-I. SHRI DURGA SAPTASHATI

Editor : M.M. Pandit Ganga Dhar Dvivedi, Jaipur.

AIMS

1. Publication of critically edited texts, alongwith Hindi translation of authentic literature related to Shakti worship and Agam books, for public welfare :
2. Publication of research studies into the ancient, authentic and rare literature related to Shakti-worship and practice, alongwith easily intelligible commentaries thereon.
3. Research, analysis and classification of the *Yantrik* images associated with the ten *Maha-vidyas*, according to the traditional method of practice.
4. Publication and conservation of the Hymn Literature produced by acknowledged masters of the Shakta tradition and great thinkers, alongwith Hindi commentaries.
5. Compilation of authentic historical material concerning the significant contribution made by the Ruling House of Amber-Jaipur in the creation of the Shakti-peeth and the fillip given to Shakti devotion and worship, and publication of such material.

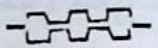

श्रीशिलाम्बाचरणाराधकस्य वर्तमान-जयपुरराजवंशधुरस्य कर्नल सवाई भवानीसिंह भूपतेः

श्रद्धा-समर्पणपद्यानि

वन्दे निर्व्याजकरुणां आम्बेरपुरवासिनीम् ।
भवार्त्तिशमनीं दुर्गां चण्डिकां चण्डविक्रमाम् ।
मार्कण्डेयमहर्षिणा निगदिता या कल्पवृक्षोपमा
'दुर्गासप्तशती' परा विजयते भव्या तवाम्ब ! प्रिया ।
तामेतां विधिसंस्कृतां सुरुचिरां प्रीत्योपहारीकृतां
मातः ! स्वीक्रियतां यतः प्रतिफलेत् सङ्कल्पसिद्धिर्मम ।।
न कोऽप्यालम्बो मे नहि च रुचिरन्यत्र मनसो
भवानीसिंहस्य त्वमसि च शरण्या ननु शिवे ! ।
अतोऽहं त्वां याचे सकलजननि ! त्वच्चरणयोः
कृपोदञ्चद्हृद्या भवतु मम भक्तिः शिखरिणी ।।

DEDICATION

In reverential dedication to Shri Shila Amba, by her ardent devotee, Maharaja Col. Sawai Bhawani Singh, MVC of Jaipur.

'I offer prayer to Bhagwati Chandika, who is compassion incarnate, residing at Amber, the healer of the sins and miseries of the world, the fierce form of Durga and endowed with tremendous might.

'O Mother ! the grand and excellent *Durga Saptashati,* very dear to you, as revealed by Maharshi Markandeya, verily like a *Kalpa-Vriksha*, is offered with love, as a gift after properly being completed by me. O Mother, deign to accept it, so that my resolve may attain fulfilment.

'There is no other refuge for me in this wide world, nor is my mind attached anywhere else. Thou art the sole giver of shelter to me. Therefore, O Mother of the Universe, the only boon that I seek from Thee, is that my utmost devotion at Thy lotus-feet, may continue unabated, by Thy merciful grace.'

विषय-सूची

1.	Preface —H. H. Sawai Bhawani Singh	11
2.	प्रस्तावना Introduction	I I
3.	सप्तशती की मन्त्रगणना Count of Shloks & Mantras	XXXII XXXIII
4.	जगदम्बा जयवाद	1
5.	देव्यथर्वशीर्ष मूल	6
6.	देव्यथर्वशीर्ष–हिन्दी अनुवाद	11
7.	सप्तशती मूल	1
8.	देवी कवच Devi's Kavach	2 3
9.	अर्गला स्तुति Argala Hymns	28 29
10.	देवी कीलक The Keelak	42 43

CONTENTS

11.	रात्रिसूक्त The Vedic Ratri Sukta	52 53
12.	सप्तशती प्रथम अध्याय First Chapter	58 59
13.	द्वितीय अध्याय Second Chapter	106 107
14.	तृतीय अध्याय Third Chapter	142 143
15.	चतुर्थ अध्याय Fourth Chapter	166 167
16.	पंचम अध्याय Fifth Chapter	200 201
17.	षष्ठ अध्याय Sixth Chapter	250 251
18.	सप्तम अध्याय Seventh Chapter	264 265

19. अष्टम अध्याय 280
Eighth Chapter 281

20. नवम अध्याय 314
Ninth Chapter 315

21. दशम अध्याय 338
Tenth Chapter 339

22. एकादश अध्याय 356
Eleventh Chapter 357

23. द्वादश अध्याय 394
Twelfth Chapter 395

24. त्रयोदश अध्याय 416
Thirteenth Chapter 417

25. ऋग्वेदोक्त देवीसूक्त 430
Devi Sukta 431

26. प्राधानिक रहस्य 438
Pradhanik Rahasya 439

27. वैकृतिक रहस्य 456
Vaikritik Rahasya 457

28. मूर्ति रहस्य 480
Murti Rahasya 481

29. श्री चण्डीपूजा पद्धति 496

30. श्री चण्डीपूजा पद्धति का हिन्दी अनुवाद 516

31. शतचण्डी पाठपद्धति 534

32. शतचण्डी विधान का हिन्दी अनुवाद 538

34. सम्पादक परिचय 541
The Editor

45. श्लोकानुक्रमणिका 1

46. सार्धनवदुर्गा प्रयोग 30

CITY PALACE
JAIPUR

PREFACE

I have great pleasure in writing the Preface of the famous hymn, Shri Durga Saptashati, which has been brought out by Shri Shila Mata Trust, Amber.

The *Murti* of Shri Shila Mata was brought by my ancestor Raja Man Singh from Jessore after gaining victory over the rulers thereof in the 16th century. He installed it in his Palaces at Amber with all rituals of worship. Since then Shri Shila Mataji has been our Family Deity. The present temple, as it stands within the sanctums, was constructed by Mirza Raja Jai Singh when he erected the adjacent Palace. My father, His late Highness Maharaja Sawai Man Singh II, who was also an ardent devotee of Shri Mataji, rennovated Her temple by installing marble slabs on the floor, walls and decorating both sides of the inner gate with beautiful plantain-trees of the same material. The artistic silver-plated doors were also installed during his time.

Saptashati, a part of *Markandeya Purana* which narrates the deeds of Durga, commands the highest honour in the country. It is regarded as an eternal hymn and not a product of human effort.

By reciting these seven hundred mantras of this text people accomplish various merits. This volume presents the text from *Markandeya*

Purana, Devyatharvashirsha and *Jagadamba Jay-vad,* lyrical eulogy to Durga composed by the late M. M. Pandit Durga Prasadji Dvivedi.

This volume has been compiled by Mahamahopadhyay Pandit Shri Gangadhar Dvivedi, a descendant of late Pandit. Sarayu Prasadji Dvivedi, a famous scholar and veteran Agamic litterateur. He was brought to Jaipur by my ancestor, the late Maharaja Sawai Ram Singh II.

The late Panditji composed the authentic and universally applauded work "*Saptashati-Sarvasva*" which the present author has made a base for his commentary. Besides, he has enhanced the utility of this edition with his scholarly introduction, adaptation of English translation and enlightening explanations of the modes of worship and recitation of the Durga Saptashati.

I congratulate Pt. Gangadharji for accomplishing this onerous task successfully.

I hope that all those who read this beautiful hymn of Durga Saptashati will enjoy it and derive pleasure and spiritual solace from it.

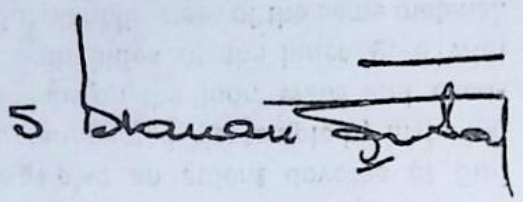

(Sawai Bhawani Singh of Jaipur MVC)
4. 2. 87

प्रस्तावना

भारत अनादिकाल से अध्यात्म साधना का केन्द्र रहा है। मानव की अन्तर्निहित आत्मशक्ति के जागरण और विकास के लिए इससे बढ़कर अन्य किसी मार्ग की कल्पना नहीं की जा सकती। भारतीय ऋषि-मुनियों ने मानवमात्र के कल्याण तथा धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष अथवा पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति के लिए ईश्वरोपासना करने का उपदेश दिया है। साधकों और आराधकों ने इन तपःपूत आप्तपुरुषों से प्रेरणा लेकर, सगुण और निर्गुण अर्थात् साकार और निराकार दोनों प्रकार के उपासना मार्गों का अवलम्बन कर आशातीत सफलता प्राप्त की है। उनकी उस दिव्य ज्ञानज्योति का जो प्रकाश संसार में फैला वह आज भी अविच्छिन्न गति से प्रवाहित है। आस्तिक-समाज अपनी अपनी श्रद्धा और विश्वास के सहारे उसका यथेष्ट लाभ ले रहा है। किसी भी देश-काल या परिस्थिति में आत्मिक शक्ति का आश्रय लिये बिना मानव के अपेक्षित विकास तथा सुख-शांतिमय जीवन की कल्पना कभी सार्थक नहीं हो पाती। इसीलिए 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः' उपनिषदों का यह कथन सत्य सिद्ध होता है।

वास्तव में देखा जाय तो शक्ति सम्पन्न हुए बिना पुरुषार्थ का लाभ ले पाना सचमुच दुष्कर और कठिन कार्य हो जाता है। अतएव सभी सम्प्रदायों तथा धर्मावलम्बियों ने एक स्वर से ईश्वरोपासना को मानव के सम्पूर्ण विकास के लिए सर्वोत्तम साधन के रूप में स्वीकार किया है।

हमारे देश में उपासना की सगुण और निर्गुण दोनों धाराएं खूब फली-फूली हैं और आपस में एक दूसरे की पूरक और सहायक रही हैं। किन्तु दोनों ओर अधिकार और पात्रता के औचित्य का विचार किये बिना, ऐच्छिक प्रवृत्तिमात्र से लाभ की अपेक्षा हानि की सम्भावनाएं अधिक रहा करती हैं। अतएव शास्त्रकारों और आचार्यों ने उपासना के क्षेत्र में, मार्गदर्शक अथवा गुरु की अनिवार्य आवश्यकता का उल्लेख किया है। यहाँ तक कि किसी सद्गुरु से उपदेश या दीक्षा लिये विना उपासना निरर्थक हो

जाती है और उससे अभीष्ट सिद्धि नहीं हो पाती। वैदिक तान्त्रिक या दोनों की संमिश्रित साधना पद्धति में गुरु का सर्वोपरि महत्व है।

श्रुति स्वयं कहती है :—

'तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्' ॥

आशय यह है कि ईश्वरीय रहस्यों के ज्ञानार्थ गुरु की शरण लेना एक आवश्यक कर्त्तव्य है उसके बिना परमार्थ बोध असम्भव होता है।

भारतीय शास्त्र या यों कहिये कि आगम-निगम की वर्तमान उपलब्धि का क्रमिक इतिहास गुरु-शिष्य परम्परा पर ही आधारित रहता आया है। स्वच्छन्दतन्त्र के निम्नलिखित श्लोक में यही बात बतलाई गई है :—

'गुरुशिष्यपदे स्थित्वा स्वयमेव सदाशिवः।
प्रश्नोत्तरपरैर्वाक्यैस्तन्त्रं समवतारयत् ॥

अर्थात् स्वयं भगवान् सदाशिव ने गुरु और शिष्य की भूमिका का निर्वाह करते हुए तन्त्रों की अवतारणा की है।

कल्पसूत्र में भी इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है :—

'भगवान् परमशिवभट्टारकः श्रुत्याद्यष्टादश-विद्याः सर्वाणि दर्शनानि लीलया तत्तदवस्थापन्नः प्रणीय संविन्मय्या भगवत्या भैरव्या स्वात्माभिन्नया पृष्टः पञ्चाम्नायान् प्रणिनायेति।'

अर्थ यह कि ज्ञानस्वरूपिणी अर्द्धाङ्गिनी भगवती भैरवी द्वारा पूछने पर भगवान् परमशिव भट्टारक ने वेद आदि अठारह विद्याओं तथा समस्त दर्शनों को अपनी लीला के द्वारा, उन उन अवस्थाओं में पहुँच कर निर्माण किया और अपने पाँचों मुखों से पाँच-आम्नायों को प्रकट किया।

सगुणोपासना का मार्ग सांसारिक मानव के लिए सुगम, सरल और अधिक लाभदायक माना गया है। क्योंकि थोड़े श्रम से भी उसका लाभ लिया जा सकता है। इसके अन्तर्गत प्रधान रूप से शिव, शक्ति, विष्णु, गणेश और सूर्य इन पाँच प्रमुख देवों की अलग अलग स्वतन्त्र रूप से या पंचायतन के रूप में अपनी अपनी श्रद्धा और आस्था के अनुरूप एक को

प्रधान मानकर अन्य देवों की उनके सहयोगी के रूप में पूजा एवं उपासना का विधान वेदों और शास्त्रों में वर्णित है। वर्तमान युग में, पंचायतन पूजा का प्रचार प्रायः कम ही देखने में आता है और अधिकांश में एक देवोपासना ही सर्वत्र प्रचलित है। साकारोपासना या मूर्तिपूजा की सफलता का रहस्य श्रद्धा और विश्वास में निहित होता है। इसके अभाव में अभीष्ट फल की प्राप्ति दुर्लभ होती है। महात्मा तुलसीदास ने इसी बात को लक्ष्य में रखकर—

'भवानीशंकरौ बन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम्॥

का रामचरितमानस के आरम्भ में उल्लेख किया है।

महर्षि पतञ्जलि ने अपने 'योगदर्शन' में यौगिक क्रियाओं की सिद्धि के लिए यम-नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के रूप में जिस अष्टाङ्ग योग का निर्धारण किया हैं उसकी सफलता के लिए अलग से एक स्वतन्त्र सूत्र की रचना की है, जो न केवल योगसिद्धि बल्कि उपासना तथा अन्य लौकिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भी समान रूप से अत्यावश्यक और बड़े महत्व की है :—

'स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः।'

इसका आशय यह है कि योगाभ्यास, आराधना आदि साधनों की सिद्धि तभी होती है जब उन्हें श्रद्धापूर्वक नियमित रूप से लम्बे समय तक बिना किसी व्यवधान के सम्पन्न किया जाए।

इससे यह सहज ही जाना जा सकता है कि **'आराध्यदेव'** के अनुग्रह किंवा प्रसन्नता के लिए जब-तक विधि-विधान के अनुसार संयम और श्रद्धा से किसी पूजा या अनुष्ठान का सम्पादन नहीं किया जाता तब तक उससे अभीष्ट फल की आशा कैसे की जाए? प्रायः यह देखा गया है कि लोग अपने प्रज्ञापराध के कारण शास्त्रीय विधि का पालन करने में असमर्थ होकर, जैसे-तैसे, उसे पूरा करके फल प्राप्ति की अभिलाषा से वंचित होने पर स्वयं का दोष न मानते हुए शास्त्र की मनमानी आलोचना

करने पर उतर जाते हैं और वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन नहीं करते, यह सर्वथा अनुचित और निन्दनीय है। अस्तु। इस प्रसंग में यहाँ यह बतला देना भी आवश्यक ह कि सगुणोपासना के अभ्यास और सफलता के क्रम में आत्मसन्तोष और अन्तःकरण की शुद्धि के बाद ही निर्गुण ब्रह्म की आराधना का मार्ग प्रशस्त होता ह। इसलिए पूर्व भूमिका के रूप में शास्त्रकारों ने इसकी आवश्यकता का प्रतिपादन किया है। व्याकरणशास्त्र के सुप्रसिद्ध आचार्य भर्तृ-हरि ने अपने **वाक्यपदीय** में इस भूमिका के अभिप्राय को व्यक्त करते हुए लिखा है —

'उपायाः शिक्षमाणानां बालानामुपलालनाः।
असत्ये वर्त्मनि स्थित्वा ततः सत्यं समीहते॥

अर्थ– बालकों का अक्षराभ्यास आदि प्रारम्भिक क्रियाओं के द्वारा जो शिक्षा दी जाती है, वह उनके रुचिवर्धन की भूमिका मात्र होती है क्योंकि कल्पित या असत् के माध्यम से ही सत्यस्वरूप शब्द-ब्रह्म की प्राप्ति होती है। इसका मतलब यह है कि साकार उपासना के द्वारा अभ्यास की दृढ़ता होने पर निर्गुण-निराकार परब्रह्म के स्वरूप को परखा और पहचाना जा सकता है। इसके बाद ही 'एकमेवा-द्वितीयं ब्रह्म' 'नेह नानास्ति किंचन' 'ईशावास्यमिदं सर्वम्' 'तत्त्वमसि।' 'अहं ब्रह्मास्मि' आदि अद्वैत-परक श्रुतियों का यथार्थ तत्व बोधगम्य होता है।

शक्ति की उपासना

अतिप्राचीन काल से परब्रह्मस्वरूपिणी भगवती दुर्गा की आराधना का हमारे देश में सर्वोपरि महत्व रहता आया है। वास्तव में लौकिक-भोग, ऐश्वर्य और निःश्रेयस् की प्राप्ति के लिए करुणामयी मातृ-शक्ति से बढ़कर सांसारिक लोगों के लिए अन्य कोई आश्रय–स्थल उपलब्ध हो सकना नितान्त असम्भव है। क्योंकि भोग और मोक्ष दोनों को एक साथ प्रदान करने का सामर्थ्य, वात्सल्यमयी मां के सिवा अन्यत्र कहाँ मिल सकता है ?

जगज्जननी महामाया दुर्गा की उपासना की सफलता और उसके द्वारा होने वाली अनेक

प्रकार की अभीष्ट सिद्धि के लिए उनका प्रधान और महत्वपूर्ण मन्त्रात्मक स्तोत्र 'सप्तशती' या 'दुर्गापाठ' के नाम से हजारों वर्षों से समूचे भारत में प्रसिद्ध चला आ रहा है। देश के विभिन्न प्रान्तों, नगरों और गाँवों तक में संकट-निवारण और विभिन्न कामनाओं की पूर्ति के लिए इसके पाठ और अनुष्ठान का व्यापक प्रचार है। दूसरे शब्दों में इसे कल्पवृक्ष कहलाने का गौरव प्राप्त है। इसके द्वारा आस्थावान भक्तों को क्या कुछ नहीं मिलता? इसकी लोकप्रियता का इससे अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है? आज के इस भौतिक विज्ञान के युग में भी लाखों करोड़ों लोग इसके प्रति अटूट विश्वास और आस्था से जुड़े हुए हैं।

चैत्र और आश्विन के नवरात्रों में प्रत्येक सद्-गृहस्थ आत्मकल्याण के लिए संक्षिप्त किंवा वृहद् रूप में भगवती दुर्गा की पूजा-अर्चना में निरत देखे जाते हैं। इस अवसर पर भगवती की प्रसन्नता के लिए विशेष रूप से इसका पाठ किया जाता है या स्वयं असमर्थ होने पर किसी योग्य ब्राह्मण द्वारा पाठ कराये जाने का भी वही लाभ है। इस तरह यह अनेक संकटों और विघ्न-बाधाओं से मुक्ति दिलाने का अमोघ अस्त्र है। यहाँ एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि अन्य पौराणिक स्तोत्रों की अपेक्षा इसका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व और महत्व है। मार्कण्डेय पुराण के अन्तर्गत होते हुए भी वेदों के समान इसे अनादि और अपौरुषेय माना गया है। ईश्वरीय प्रेरणा से जिस प्रकार समाधि की दशा में ऋषियों के हृदय में वैदिक मन्त्रों का अवतरण हुआ है उसी प्रकार महर्षि व्यास को इस मन्त्रात्मक स्तोत्र की उपलब्धि हुई है उनके द्वारा इस का आविर्भाव होने से ही इसे व्यासरचित कहा गया है। इसके विषय में अनेक प्रमाण वाक्य आर्ष ग्रन्थों में पाये जाते हैं। इस तथ्य की पुष्टि के लिए "सप्तशती सर्वस्व" के प्रस्तोता आगमाचार्य पूज्यपाद पं० सरयूप्रसाद जी द्विवेदी द्वारा इसके बारे में जो शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत किया गया है, उसे यहाँ अविकल रूप में उद्धृत कर देना इस सम्बन्ध की भ्रान्ति के निवारणार्थ

आवश्यक प्रतीत होता है :—

'अथेदं सप्तशतीस्तोत्रं मार्कण्डेय उवाचेत्यारभ्य सावर्णिर्भविता मनुरित्यन्तं त्रयोदशाध्यायात्मकं मार्कण्डेयपुराणान्तर्गतं सर्वकामदुघं न केनचिन्निर्मितमिति । किंतु वेदवदनाद्येव । तदुक्त भुवनेश्वरीसंहितायाम् :—

'यथा वेदो ह्यनादिर्हि तद्वत् सप्तशती स्मृता ।'

मेरुतन्त्रेऽपि :—

'सप्तशत्याश्च सकलं तत्त्वं वेद्म्यहमेव हि ।
पादोनं श्रीहरिर्वेत्ति वेत्त्यर्धं तु प्रजापतिः ॥
व्यासस्तुर्याशकं चेत्ति कोट्यंशमितरे जनाः ।'

व्यासेन प्रकटीकृतत्वात्तु लोके व्यासकृतमिति-व्यवहारः ।

रुद्रयामलेऽपि :—

'अस्ति गुह्यतमं देव्या माहात्म्यं सर्वसिद्धिदम् ।
वाक्यैरर्थैश्च पद्यैश्च सप्तशत्यात्मकं शुभम् ।
सविशेषपरं साक्षाच्चिच्छक्तिमहिमाश्रयम् ।
तात्पर्यगत्या तत्कृत्स्नं निर्विशेषचिदाश्रयम् ॥

चिदम्बरसंहितायामपि :—

'का च सप्तशती नाम देवी दारिद्र्यनाशिनी ।
तस्याः स्वरूपं मे ब्रूहि तत्त्वतः परमेश्वर ॥

शिव :—

'शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सप्तशत्या महोदयम् ।
यस्याश्च पठनान्मन्त्री त्यजेज्जन्मदरिद्रताम् ॥
या चिन्मयी परा देवी त्रिपुरा त्रिविधाभवत् ।
देवकार्यसुसिद्ध्यर्थमसुराणां वधाय च ॥
महत्यापदि संप्राप्ते देवाः संतुष्टुवुर्भृशम् ।
तदा सा चिन्मयी शक्तिः कालीरूपा बभूव ह ॥
सैव कालान्तरे लक्ष्मीस्तथैव च सरस्वती ।
तासां कथानकं भद्रे त्रिदशाध्यायरूपकम् ॥
मार्कण्डेयपुराणोक्तं स्तवं सप्तशताभिधम् ।
स्तवस्य तस्य पठनात् सर्वसौख्यं लभेद् ध्रुवम् ॥
तस्मिन् देव्याः स्तवे पुण्ये मन्त्राः सप्तशतं शिवे ।
तस्मात् सप्तशती नाम स्तवं परमदुर्लभम् ।
स्तवस्य पठनादेव सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥

डामरतन्त्रेऽपि :—

'यथाश्वमेधः क्रतुषु देवानां च यथा हरिः ।

स्तवानामपि सर्वेषां तथा सप्तशतीस्तवः ॥
नातः परतरं स्तोत्रं किंचिदस्ति वरानने ।
भुक्तिमुक्तिप्रदं पुण्यं पावनानां च पावनम् ॥

इन प्रमाणों के उल्लेख से यह स्वतः सिद्ध हो जाता है कि प्राचीन भारत में इस स्तोत्र का कितना गौरवपूर्ण स्थान रहा होगा। यही नहीं, इसके प्रति इतनी अधिक श्रद्धा का भाव था कि हस्तलिखित पुस्तक के द्वारा ही समाज में इसका पाठ प्रचलित था और उसकी विधिवत् पूजा करके ही इसके पारायण की सर्वमान्य प्रक्रिया अपनायी जाती थी। किन्तु मुद्रणकला के विकास और समय के परिवर्तन के साथ यह प्रक्रिया लुप्त होती चली गई। अब तो लेखकों का अभाव हो जाने के कारण न चाहते हुए भी मुद्रित पुस्तकों के ही उपयोग की बाध्यता और अनिवार्यता सर्वसमक्ष है।

पिछले चालीस वर्षों के अन्तराल में और खासकर देश के स्वतन्त्र होने के बाद प्रायः सभी क्षेत्रों में परिवर्तन का जो अन्धाधुन्ध दौर चला उससे कोई भी क्षेत्र भला अछूता कैसे रह सकता था ? शिक्षा, धर्म और संस्कृति के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में चाहे अनचाहे बदलाव का जो प्रवाह चला, उससे और कुछ हुआ हो या न हुआ हो किन्तु प्राचीन मान्यताओं और उससे सम्बद्ध मौलिक तत्वों को ऐसा गहरा आघात लगा कि उनका मूलरूप उत्तरोत्तर विकृत होता चला गया और वह लाभ के बदले हानिकारक अधिक सिद्ध हुआ। इसका प्रतिकूल प्रभाव खासतौर से हमारी धार्मिक संस्कृति और उसकी जीवनपद्धति पर भी पड़ा जिसका परिणाम आज सबके सामनें है। भारत की वर्तमान नई पीढ़ी भारतीय संस्कारों से कटकर अलग-थलग पड़ गई और उसके सामने अब आचरण और विश्वास का भयंकर संकट उपस्थित है। कोई कुछ भी क्यों न कहे किन्तु सत्य यह है कि पाश्चात्य संस्कृति के प्रति अनावश्यक मोह और उसके अन्धानुकरण का ही यह दुष्परिणाम है जो देश की नई पीढ़ी को भुगतना पड़ रहा है और निकट भविष्य में इससे छुटकारा पाना सम्भव नहीं दिखाई देता।

दुर्गा की उपासना का विधान

तन्त्रशास्त्र में ब्रह्म तथा माया की एकरूपता मानी जाती है। इसलिए प्रणव या ॐकार ब्रह्मबोधक होने पर भी माया का भी वाचक होता है। इसी प्रकार माया बीज जो 'ह्रीं' कार से संकेतित है ब्रह्म तथा माया दोनों का बोधक है। जैसा कि ब्रह्माण्ड-पुराण के '**ह्रींकार उभयात्मकः।**' इस लेख से स्पष्ट है। आचार्य शंकर ने भी "प्रपंचसार" में—"**तदा तां तारमित्याहुरोमात्मेति बहुश्रुताः। तामेव शक्तिं ब्रुवते हरीमात्मेति चापरे।**" यह प्रमाण वाक्य उद्धृत किया है। निष्कर्ष यह कि प्रणव या मायाबीज की अपनी विशिष्ट स्थिति होने से इन दोनों का व्यापक अर्थ मायायुक्त ब्रह्म होता है। **वेदान्त दर्शन** में इसको ही माया शबल ब्रह्म कहा जाता है। तन्त्र की परिभाषा में 'बिन्दु' पद से मायायुक्त ब्रह्म का ग्रहण किया गया है। अतएव "शारदा तिलक" में—**आसीच्छक्ति स्ततो नादो नादाद् बिन्दुसमुद्भवः।**" यह निर्देश मिलता है। तात्पर्य यह कि प्रणवोत्पत्ति के प्रकरण में शिव को इसका अधिष्ठातृदेवता बताया गया है। "**गोपथ ब्राह्मण**" में शिव का ही रुद्र के नाम से उल्लेख किया गया है। आचार्य शंकर ने भुवनेश्वरी की स्तुति में "**नमस्ते समस्तेशि विन्दुस्वरूपे**" कहकर मायाबीज की देवता भुवनेश्वरीको बतलाया है। मायाबीज का ही नामान्तर भुवनेश्वरी बीज है। फलतः जिस प्रकार बीज से अंकुर, शाखा, पुष्प, फल के रूप में वृक्ष की सृष्टि हुई है उसी प्रकार मायाबीज से संकेतित बिन्दु के द्वारा इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया के रूप में क्रमशः रौद्री, ज्येष्ठा तथा वामा शक्तियों का प्रादुर्भाव हुआ है। इन शक्तियों का ही नामकरण महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती देवता के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। इन त्रिशक्तियों के मन्त्रों में नवार्ण और सप्तशती इन दोनों की प्रधानता मानी गई है। अतएव उपासना के क्षेत्र में दोनों का ही प्रधान और गौण रूप स्वीकार किया गया है। जहाँ नवार्ण की प्रधानता होती है वहां सप्तशती का उसके अङ्गरूप में पाठ करने का विधान है। मेरुतन्त्र आदि कई तन्त्रों में इस व्यवस्था

का उल्लेख पाया जाता है। इसके अनुसार जो साधक नवार्ण मन्त्र की दीक्षा लेता है वह नवार्ण यन्त्र में नवार्ण देवताओं के पूजन के साथ नवार्ण मन्त्र का जप करके अनन्तर उसके अङ्गरूप में सप्तशती का पाठ करता है। किन्तु यदि कोई साधक सप्तशती माला-मन्त्र से दीक्षा ग्रहण करता है तो उसे रहस्योक्त प्रक्रिया के अनुसार पूर्वोक्त यन्त्र में सप्तशती की देवताओं का अर्चन कर पाठ के आद्यन्त में नवार्ण मन्त्र का जप करके सप्तशती का पाठ करना चाहिए।

कीलकाध्याय में इन दोनों प्रकारों का स्पष्ट उल्लेख किया गया है।

सप्तशती एवं सप्तसती का निर्वचन

सप्तशती स्तोत्र के दो नाम प्रचलित हैं, प्रथम तालव्य शकार घटित "सप्तशती" दूसरा दन्त्य सकार घटित "सप्तसती"। मेरुतन्त्र में तालव्य शकार घटित सप्तशती के सन्दर्भ में निम्नलिखित विवरण उपलब्ध है—

"सप्तशत्याः चरित्रे तु प्रथमे पद्मजो मुनिः।
छन्दो गायत्रमुदितं महाकाली तु देवता॥
वाग्बीजं पावकस्तत्वं धर्मार्थे विनियोजनम्।
प्रयोगाणां तु नवतिर्मारणे मोहनेऽत्र तु॥
उच्चाटे स्तम्भने चापि प्रयोगाणां शतद्वयम्।
मध्यमेऽथ चरित्रे स्यात् तृतीयेऽथ चरित्रके॥
विद्वेषवश्ययोश्चात्र प्रयोगारिकृते मताः।
एवं सप्तशतं चात्र प्रयोगाः संप्रकीर्तिताः।
तस्मात्सप्तशतीत्येव प्रोक्तं व्यासेन धीमता॥

आशय यह है कि षट्कर्मों की सिद्धि के लिए इसमें सात सौ मन्त्रों के प्रयोग बतलाए गए हैं। इसलिए यह "सप्तशती" कहलाती है। इसके साथ ही इसके अन्तर्गत सात सतियों का चरित्र भी वर्णित है इसलिए इसका नामकरण "सप्तसती" के रूप में प्रचलित है। निम्नलिखित श्लोकों में व्यास जी ने यह स्पष्टीकरण किया है—

"महाविद्येत्यादि सत्यः सप्तकल्पे तथादिमे।
ब्रह्मेन्द्रगुरुशुक्राणां विष्णुरुद्रसुरद्विषाम॥

उपास्या देवता जातास्ताश्चात्र ब्रह्मणा स्तुताः ।
तस्मात् सप्तसतीत्येव व्यासेन परिकीर्तिता ॥'

इस लेख के अनुसार प्रथम चरित्र में काली, तारा, छिन्नमस्ता, सुमुखी, भुवनेश्वरी, बाला एवं कुब्जा तथा मध्यम चरित्र में लक्ष्मी, ललिता, काली, दुर्गा, गायत्री, अरुन्धती और सरस्वती एवं उत्तर चरित्र में ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही और इन्द्राणी इन सात सतियों के चरित्रों का वर्णन है ।

तीनों चरित्रों की इन इक्कीस सतियों की समष्टि के रूप में नन्दा, शताक्षी, शाकम्भरी, भीमा, रक्त-दन्तिका, दुर्गा एवं भ्रामरी नामक सात सतियाँ बतायी गयी हैं । ये ही मूलदेवी की षडङ्ग देवियाँ हैं जिनका स्वरूप मूर्ति रहस्य में वर्णित है ।

इस प्रकार "सप्तशती" तथा "सप्तसती" इन दोनों नामों की पृथक्-पृथक् सार्थकता है ।

दुर्गापाठ के विभिन्न क्रम

दुर्गा सप्तशती के पाठ का क्रम अनेक तन्त्रों में प्रतिपादित होने से विविध रूपों में पाया जाता है । इस भेद का कारण गौड़, केरल, काश्मीर की परम्पराएं हैं जो भिन्न-भिन्नरूपों में उपलब्ध होती हैं। अतएव इसके पाठ में अपनी गुरुपरम्परा का ही अनुगमन करना श्रेयस्कर है । कुछ मुख्य तन्त्रों के प्रचलित पाठक्रम इस प्रकार हैं—

मरीचिकल्प के अनुयायियों के पाठक्रम में पहले रात्रिसूक्त फिर सप्तशती स्तोत्र एवं अन्त में देवीसूक्त का पाठ किया जाता है । जैसा कि नीचे के श्लोक में बतलाया गया है :—

"रात्रिसूक्तं पठेदादौ मध्ये सप्तशतीस्तवम् ।
प्रान्ते तु पठनीयं वै देवीसूक्तमिति क्रमः ॥

वेदागम का प्रकार निम्नलिखित है :—

"कवचं बीजमादिष्टमर्गला शक्तिरुच्यते ।
कीलकं कीलकं प्राहुः सप्तशत्या महामनोः ॥

इसका आशय यह है कि समस्त मन्त्रों के विनियोग में जैसे बीज, शक्ति एवं कीलक का पूर्व में उच्चारण किया जाता है वैसे ही सप्तशती के पाठ में सर्वप्रथम कवच, कीलक एवं अर्गला का पाठ करना चाहिये।

इसके विपरीत चिदम्बरसंहिता का पाठक्रम इस प्रकार है :—

"अर्गलं कीलकं चादौ पठित्वा कवचं पठेत्।
जपेत् सप्तशती पश्चात् सिद्धिकामेन मन्त्रिणा॥
रहस्यत्रयमप्यन्ते पठितव्यं प्रयत्नतः।
मध्ये नवार्णपुटितं कृत्वा स्तोत्रं सदाभ्यसेत्॥

अर्थात् सर्वप्रथम अर्गला, कीलक एवं कवच का पाठ करके सप्तशती, तदनन्तर तीनों रहस्यों का पाठ तथा आदि अन्त में नवार्ण मन्त्र का सम्पुट लगाना चाहिए।

सम्पुट के सन्दर्भ में "डामर तन्त्र" में लिखा है—

"शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं नवार्णकम्।
चण्डीं सप्तशतीं मध्ये सम्पुटोऽयमुदाहृतः॥

सप्तशती के दैनिक पाठ का विधान

ऊपर बतलाए गए सभी क्रमों में सन्ध्योपासनादिक नित्यकृत्य सम्पन्न करने के बाद आसनशोधन, आचमन, शिखा बन्धन, प्राणायाम एवं संकल्प करने के अनन्तर यथाशक्ति मातृका आदि न्यासों को करने के बाद, श्रीदेवी का ध्यान करके नवकोष्ठात्मक यन्त्र में देवी का पूजन कर कवच, अर्गला, कीलक एवं रात्रिसूक्त का पाठ कर विनियोगपूर्वक ऋषि, छन्द, देवता का न्यास कर पहले अष्टोत्तरशत (१०८) नवार्ण मन्त्र का जप करे। अनन्तर, सप्तशती स्तोत्र का मूल पाठ करके इसके अन्त में पुनः नवार्णमन्त्र का अष्टोत्तरशत जप करके ऋष्यादि न्यास के साथ देवी को पाठ समर्पण कर देवीसूक्त एवं रहस्यत्रय का का आवर्तन कर, सर्वान्त में प्रार्थना मन्त्रों से देवी से क्षमायाचना एवं प्रणाम के साथ यह कृत्य समाप्त करे।

पाठ के इस क्रम में यह उल्लेखनीय है कि रात्रिसूक्त एवं देवीसूक्त वैदिक एवं तान्त्रिक दोनों

रूपों में उपलब्ध होते हैं। वैदिकों के लिए दोनों वेदोक्त ही मुख्य माने गये हैं। किन्तु सामान्य रूप से इन दोनों में से स्वेच्छानुसार किसी एक को लिया जा सकता है। वास्तव में वेद मन्त्रों का उच्चारण सर्वसाधारण के लिए कठिन पड़ता है। तथा वे उदात्त, अनुदात्त एव स्वरित पर आधारित होते हैं इनके उच्चारण में त्रुटि हो जाना स्वाभाविक है। अतः अपनी उच्चारण क्षमता के अनुसार दोनों में से किसी एक का पाठ किया जाना आवश्यक है।

ऋग्वेद के वैदिक रात्रिसूक्त "ओं रात्री व्यख्यदायती....." तथा वैदिक देवीसूक्त की "अहं रुद्रे भिर्वसुभिः....." आदि आठ ऋचाएं सुप्रसिद्ध हैं।

सप्तशती के प्रथमाध्याय की 'विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं" से आरम्भ होकर "हन्तुमेतौ महासुरौ" तक की ब्रह्मस्तुति तान्त्रिक रात्रिसूक्त कहलाता है। तथा पञ्चमाध्याय के "देवा ऊचुः 'नमो देव्यै महादेव्यै" इस मन्त्र से लेकर "सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः" तक की देवस्तुति तान्त्रिक देवीसूक्त कहलाता है।

पुरश्चरण का क्रम

दुर्गासप्तशती का मुख्य पुरश्चरण मरीचिकल्प के अनुसार निम्नलिखित है—

"कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णाचतुर्दशी।
वृद्धचैकोत्तरया जाप्यं पूर्वसम्पुटितं तु तत्।
एवं देवि मया प्रोक्तः पौरश्चरणिकः क्रमः।
तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पावके॥
रात्रिसूक्तं प्रतिऋचं तथा देव्याश्च सूक्तकम्।
हुत्वान्ते प्रजपेत् स्तोत्रं आदौ पूजादिकं मुने॥

आशय यह कि देवी का पहले अर्चन करे और फिर कृष्णपक्ष की अष्टमी से कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तक एकोत्तर पाठवृद्धि के साथ नवार्णसम्पुटित पाठ और रात्रिसूक्त एवं देवीसूक्त सहित मन्त्रों का हवन करना चाहिए।

शापोद्धार

सप्तशती के पाठ के उपक्रम में शापोद्धार का तान्त्रिक प्रकार निम्नलिखित है—

"अन्त्या १३ द्या १ र्क १२ द्वि २ रुद्र ११ त्रि ३ दि १० गब्ध्य ४ ङ्के ९ ष्वि ५ भ ८ र्तवः । ६ अश्वो ७ ऽश्व ७ इति सर्गाणां शापोद्धारो मनोः क्रमः ।।"

इस श्लोक की अर्थयोजना इस प्रकार है— तेरहवां और पहला, बारहवां और दूसरा, ग्यारहवां एवं तीसरा, दसवां और चौथा, नवां एवं पांचवां, आठवां एवं छठा इन अध्यायों की एक साथ आवृत्ति करके सातवें अध्याय का दो बार पाठ करना चाहिए। इस क्रम से इसका शापोद्धार बतलाया गया है।

उत्कीलन विधान

"उत्कीलने चरित्राणां मध्याद्यन्तमितिस्थितिः।"

आशय यह है कि सर्वप्रथम मध्यम चरित्र उसके बाद प्रथम चरित्र अनन्तर तृतीय चरित्र का पाठ कर लेने पर इसके उत्कीलन की पूर्ति होती है।

शापाद्धार तथा उत्कीलन के सम्बन्ध में सप्तशती सर्वस्वकार का मत विशेष रूप से यहां उल्लेखनीय है—

"वस्तुतस्तु एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह"

इति रहस्याध्यायवचनेन यस्यैकपाठावसरो नास्ति तस्य मध्यमचरित्रपाठाभ्यनुज्ञानात्तादृशस्य पुरुषस्य पूर्वोक्तशापोद्धारकीलकानुष्ठानस्यासंभवात्तदभ्यनुज्ञानं व्यर्थमेव स्यात्। अन्यच्च। नियमेनैकपाठवतामेकस्मिन्दिने सम्पूर्णपाठाशक्तेः।

'पा १ ठो २ यं १ व ४ र २ का १ रः २, इति छलाक्षरसूत्रक्रमेण सप्तभिर्दिनैरेकावृत्तिः। एतस्मादपि शापोद्धारादिकं नावश्यकमिति प्रतिभाति।"

अर्थात् वास्तव में "एकेन वा" उक्त वचन के अनुसार जिस पाठकर्त्ता को सम्पूर्ण पाठ करने का अवसर न हो उसे केवल मध्यमचरित्र का पाठ कर लेने मात्र से सम्पूर्ण पाठ की पूर्ति हो जाती है। ऐसी दशा में ऐसे पाठकर्त्ता के लिए पूर्वोक्त शापोद्धार एवं उत्कीलन का अनुष्ठान सर्वथा असम्भव होने से

मध्यम चरित्र के पाठ की अनुमति निरर्थक हो जाती है तथा नियमतः एक पाठ करने वालों के लिए एक दिन में सम्पूर्ण पाठ न कर पाने की स्थिति में छलाक्षर सूत्र के क्रम से सात दिन में एक पाठ सम्पूर्ण होता है। अतः इस व्यवस्था के अनुरोध से शापोद्धार या उत्कीलन की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती।

पाठकर्त्ता के लिए विशेष नियम

वाराहीतन्त्र तथा चिदम्बरसंहिता में किस प्रकार पाठ किया जाना चाहिये और पाठ करते समय किन नियमों की अनुपालना आवश्यक है, इस सम्बन्ध में विस्तृत निर्देश दिये गये हैं—

"ध्यात्वा देवीं पञ्चपूजां कृत्वा योन्या प्रणम्य च।
आधारं स्थाप्य मूलेन स्थापयेत् तत्र पुस्तकम्॥
अनुक्रमात् पठेद्देवि शिरःकम्पादिकं त्यजेत्॥"

आशय यह है कि देवीं की गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य द्वारा पूजा करके योनिमुद्रा से प्रणाम कर नवार्णमन्त्र से काष्ठपट्ट आदि आधार स्थापित कर उसके ऊपर पुस्तक स्थापित करनी चाहिये तथा शिरःकम्प (सिर हिलाना) आदि दोषों से मुक्त होकर क्रमशः पाठ करना चाहिये।

इस प्रकार के पूजा सम्बन्धी पारायण या पाठ करते समय निम्नांकित दोषों से वचना चाहिये।

रागी शीघ्री शिरःकम्पी स्वतो लिखितपाठकः।
अनर्थज्ञोऽल्पकण्ठी च षडेते पाठकाधमाः॥"

अर्थात् गाकर पढ़ना, जल्दी-जल्दी शब्दों का उच्चारण करना, सिर हिलाना, स्वयं की लिखित पुस्तक से पाठ करना, अर्थज्ञान का न होना, स्पष्टोच्चारण न कर पाना, इन छः दोषों से युक्त पाठ को अधम कहा गया है। इसके अतिरिक्त—

"यावन्न पूर्यतेऽध्यायस्तावन्न विरमेत् पठन्।
यदि प्रमादादध्याये विरामो भवति प्रिये।
पुनरध्यायमारभ्य पठेत् सर्वं मुहुर्मुहुः॥"

अज्ञानात् स्थापिते हस्ते पाठे ह्यर्द्धं फलं ध्रुवम् ।
न मानसं पठेत् स्तोत्रं वाचिकं तु प्रशस्यते ।
उच्चैः पाठं निषिद्धं स्यात् त्वराञ्च परिवर्जयेत् ।
शुद्धे नाचलचित्तेन पठितव्यं प्रयत्नतः ॥
कण्ठस्थपाठाभावे तु पुस्तकोपरि वाचयेत् ।
न स्वयं लिखितं स्तोत्रं नाब्राह्मणलिपिं पठेत् ॥
एवं स्तोत्रेषु सर्वत्र क्रमो ज्ञेयो विचक्षणैः ।
पुस्तके वाचनं शस्तं सहस्रादधिकं यदि ॥
ततो न्यूनस्य तु भवेत् वाचनं पुस्तकं विना ।

इन श्लोकों द्वारा पाठ की सफलता के लिए पाठकर्त्ता को आवश्यक निर्देश दिये गये हैं। जिनका पालन करना अनिवार्य है। एक हजार मन्त्र से कम संख्या होने पर पुस्तक के बिना कण्ठस्थ पाठ किया जा सकता है। किन्तु हजार या उससे अधिक मन्त्र संख्या होने पर पुस्तक के माध्यम से ही पाठ करने का विधान बतलाया गया है। प्रस्तुत सप्तशती स्तोत्र हजार से कम होने के कारण—

"कृताञ्जलिपुटो भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ।"

इस वैकृतिकरहस्य के विधानानुसार पुस्तक के बिना भी हाथ जोड़कर कण्ठस्थ पाठ कर लेने में किसी प्रकार का दोष नहीं माना जाता।

इस प्रकरण में यहां सहस्रशब्द का तात्पर्य बत्तीस अक्षरों के अनुष्टुप् छन्द से लिया गया है, अतः एक हजार अनुष्टुप् श्लोकों का ग्रहण करना ही यहां अभीष्ट है। संयोगवश यदि स्तोत्र में किसी मन्त्र के ऋषि, छन्द एवं देवता उपलब्ध न हों तो वहाँ केवल प्रणव का न्यास कर लेने से उसके अभाव की पूर्ति हो जाती है।

सप्तशती स्तोत्र के ऋष्यादिन्यास

प्रथम चरित्र में—

"सप्तशत्याश्चरित्रे तु प्रथमे पद्मभूर्मुनिः ।
छन्दो गायत्रमुदितं महाकाली तु देवता ॥
वाग्बीजं पावकस्तत्त्वं धर्मार्थे विनियोजनम् ॥"

मध्यम चरित्र में—

"मध्यमस्य चरित्रस्य विष्णुर्मुनिरुदाहृतः ।
उष्णिक् छन्दो महालक्ष्मी देवता बीजमद्रिजा ॥
वायुस्तत्वं धनप्राप्त्यै विनियोग उदाहृतः ।

उत्तम चरित्र में—

उत्तमस्य चरित्रस्य मुनिः शंकर ईरितः ॥
त्रिष्टुप् छन्दो देवतास्य महापूर्वा सरस्वती ।
कामो बीजं रविस्तत्वं कामार्थे विनियोजनम् ॥
मायान्ते चण्डिकायै च व्यस्तवर्णैः समस्तकैः ।
कृत्वा षडङ्गमृष्यादि स्मृत्वा ध्यात्वोक्तमार्गतः ॥
रहस्योक्तप्रकारेण पूज्य लक्ष्मीं विधानतः ।
सार्थस्मृतिं पठेच्चण्डीस्तवं स्पष्टपदाक्षरम् ॥
समाप्तौ तु महालक्ष्मीं ध्यात्वा कृत्वा षडङ्गकम् ।
जपेदष्टशतं मूलं देवतायै निवेदयेत् ॥
एवं यः कुरुते स्तोत्रं नावसीदति जातुचित् ।"

प्रथम चरित्र के ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द, महाकाली देवता, वाग्भव बीज, अग्नि तत्व है तथा धर्मार्थ विनियोग किया जाता है। मध्यम चरित्र के विष्णु ऋषि, उष्णिक् छन्द, महालक्ष्मी देवता, मायाबीज वायु तत्त्व है तथा धनप्राप्त्यर्थ विनियोग किया जाता है। तृतीय चरित्र के शंकर ऋषि, त्रिष्टुप् छन्द महासरस्वती देवता, काम (क्लीं) बीज, सूर्य तत्व है तथा काम के लिए विनियोग किया जाता है।

इस प्रकार तीनों चरित्रों में क्रमशः धर्म, अर्थ, काम की प्राप्ति के लिए विनियोग का विधान है। मायाबीज के सहित समस्त और व्यस्त अक्षरों से ऋष्यादि न्यास के साथ षडङ्गन्यास करके रहस्योक्त ध्यान के अनुसार महालक्ष्मी का पूजन कर अर्थज्ञान पूर्वक स्पष्टोच्चारण के साथ चण्डीस्तोत्र का पाठ करना चाहिए। पाठ की समाप्ति पर पुनः षडङ्गन्यास के साथ महालक्ष्मी का ध्यान करके अष्टोत्तरशत नवार्णजप सहित देवता को समर्पण करना चाहिए। इस प्रकार स्तोत्र पाठ करनें पर अभीष्ट सिद्धि होती है।

यहां तीनों शक्तियों का ध्यान सप्तशती रहस्य के अनुसार 'सर्वस्याद्या महालक्ष्मीः' के रूप में

अवस्थित तुरीया का ध्यान "तप्तकाञ्चनवर्णाभा" तथा महाकाली का "सा भिन्नाञ्जनसंकाशा" एवं महासरस्वती का "अक्षमालाङ्कुशधरा" के रूप में किया जाता है। इन तीनों ध्यानों में त्रिगुणात्मिका तथा प्रणव एवं मायाबीज के रूप में साम्यावस्था वाली महालक्ष्मी की प्रधानता बताई गई है तथा तमोगुण के आधिक्य में महाकाली एवं सत्त्व गुण के आधिक्य में महासरस्वती के स्वरूप का निदर्शन है। किन्तु तीनों शक्तियों में सत्त्व, रज, तम इन तीनों गुणों का अस्तित्व माना गया है। रजोगुण के आधिक्य में महालक्ष्मी के स्वरूप की योजना की गई है। इसलिए तुरीया महालक्ष्मी का ध्यान ही इनका ध्यान है।

मधु कैटभ के वध के लिए महाकाली के द्वारा काली के रूप की सृष्टि हुई है तदनुसार उनके ध्यान में इनका ध्यान दशवक्त्रा, दशभुजा के रूप में किया गया है। इसी प्रकार महिषासुर के वध के लिए महालक्ष्मी के शरीर से श्वेतानना, नीलभुजा आदि स्वरूप की उत्पत्ति हुई है। इसी प्रकार शुम्भ के वध के लिए महासरस्वती का जो रूप बना वह "दधौ चाष्टभुजा बाणमुसले" के रूप में प्रतिष्ठित हुआ है।

अत एव मूलप्रकृति महालक्ष्मी के ध्यान के साथ कुल मिलाकर सात ध्यान होते हैं। इन्हीं सप्त-शक्तियों का नवकोष्ठात्मक यन्त्र में अपने-अपने स्थान पर पूजा संकल्पादि उन उन के नामों से किया जाता है।

यद्यपि यह प्राचीन परम्परा इस समय लुप्तप्राय हो गई है किन्तु "श्री रहस्य" में विहित होनें से बुद्धिजीवियों द्वारा आदरणीय है।

त्रिशक्तियों की नित्यपूजा का विधान

स्वर्ण, रजत, ताम्र अथवा भूर्जपत्रादि में या वेदी पर नवकोष्ठात्मक यन्त्र बनाकर प्रथम पङ्क्ति में ईशानकोण से आरम्भ कर अग्निकोण तक क्रमशः रुद्र–गौरी, विरिञ्चि–सरस्वती एवं विष्णु–लक्ष्मी का पूजन करना चाहिये।

मध्यम पङ्क्ति में क्रमशः उत्तरकोण से आरम्भ कर दक्षिणकोण तक महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती की पूजा करनी चाहिये।

तृतीय पङ्क्ति में वायुकोण से लेकर नैर्ऋत्यकोण तक दशानना, अष्टादशभुजा एवं अष्टभुजा का पूजन करना चहिये।

उक्त यन्त्र में "ऐं महाकाल्यै नमः" इस मन्त्र से दोनों महाकालियों का पूजन किया जाता है तथा "ह्रीं महालक्ष्म्यै नमः" इस मन्त्र से दोनों लक्ष्मियों का पूजन होता है। मायाबीज से ही मध्यपङ्क्ति के मध्य में अवस्थित महालक्ष्मी का पूजन तथा "क्लीं महासरस्वत्यै नमः" से दोनों सरस्वतियों का पूजन होता है।

उक्त पूजा में तीसरी पङ्क्ति के मध्यकोष्ठ में अवस्थित देवता के दाहिनी ओर सिंह एवं बाईं ओर महिष का पूजन करना चाहिये। इस प्रकार पूजा सम्पन्न करके प्रधान तुरीया महालक्ष्मी का तीनों चरित्रों में पठित "विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं" आदि तीनों स्तुतियों से स्तवन करना चाहिये। इसके बाद पूर्वोक्त क्रमानुसार कवचादि के पाठ सहित सप्तशती स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। यह क्रम दैनिक पाठ एवं पुरश्चरण के रूप में किये जानें वाले पाठ के साथ समान रूप से सम्बद्ध है।

यदि कामना विशेष से पाठ करना हो तो तीनों चरित्रों के अन्तर्गत एक-एक मन्त्र की उपासना करने का भी विधान है। जैसे "ज्ञानिनामपि चेतांसि", "दुर्गे स्मृता", "सर्वाबाधाप्रशमनम्" आदि। सभी काम्य प्रयोगों के आरम्भ में पूर्वोक्त पूजा का समापन कर जिस मन्त्र का कामनापरक प्रयोग करना हो वह मन्त्र जिस चरित्र से सम्बद्ध हो उस चरित्र की देवता का विधिवत् पूजन करके उसके निकट काल तथा मृत्यु का भी पूजन करके उन उन चरित्रों के स्तोत्र द्वारा स्तुति करनी चाहिये।

उदाहरण के लिये "विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं",

"नमो देव्यै महादेव्यै·····" "शक्रादयः सुरगणा" आदि स्तोत्रों के द्वारा उस देवता की स्तुति कर अनन्तर अभीष्ट मन्त्र का जप कामनासिद्धि के लिए करना चाहिये। जैसा कि सप्तशती-रहस्य में उल्लेख किया गया है—

"नमो देव्या इति स्तोत्रै र्महालक्ष्मीं समर्चयेत्।
अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः॥" इति।

अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप।
दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोः सदा।
कालमृत्यू च सम्पूज्यौ सर्वारिष्टप्रशान्तये॥

इस प्रसंग में यह ध्यान रखना अत्यावश्यक है कि यदि पृथक् पृथक् मन्त्रों के ऋषि आदि उपलब्ध न हों तो जिस चरित्र के मन्त्र का जप करना हो उस चरित्र के ऋष्यादिक ले लेने चाहिये।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय बिन्दु है कि पूजा के बाद कवच, अर्गला, कीलक का पाठ प्रत्येक परिस्थिति में आवश्यक एवं अनिवार्य है। इसलिए कवच अर्गला एवं कीलक तथा तीनों रहस्यों का अङ्गरूप में पाठ किया जाना सर्वथा वाञ्छनीय है। इस लक्ष्य को दृष्टिगत रखकर कात्यायनी तन्त्र में—

"अङ्गहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः।
अङ्गषट्कविहीना तु तथा सप्तशतीस्तुतिः॥"

तस्मादेतत्पठित्वैव जपेत्सप्तशतीं पराम्।
अन्यथा शापमाप्नोति हानिश्चैव पदे पदे॥

रावणाद्याः स्तोत्रमेतदङ्गहीनं निषेविरे।
हता रामेण ते यस्मान्नाङ्गहीनं पठेत्ततः॥"

अङ्गषट्कं कवचार्गलकीलकं रहस्यत्रयसहितमिति॥"

चण्डिका का स्वरूप और महत्त्व

सप्तशती के पाठ का आरम्भ **"ॐ नमश्चण्डिकायै"** द्वारा भगवती चण्डी के नमन के साथ किया जाता है। यद्यपि पाठ-विधान के अन्तर्गत इसका समावेश नहीं है और यह ऐच्छिक है। परन्तु शिष्ट-परम्परा से अनुमोदित होने तथा प्राचीन हस्तलिखित

प्रतियों में सर्वत्र इसका उल्लेख किये जाने के कारण इस क्रम को मान्यता दी गई है। चण्डिका स्वयं परब्रह्मस्वरूपिणी कहलाती है। **"अवति उपासकमिति ओम्"** इस व्युत्पत्ति से प्रणव उपासक का रक्षक है। इसलिए इस वाक्य का फलितार्थ प्रणव की प्रतिपाद्या चित्स्वरूपिणी चण्डिका को नमस्कार करना है। प्रणव स्वयं ब्रह्मस्वरूप और समस्त मन्त्रों का अधिष्ठातृ देवता कहलाता है। इसीलिए **"ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म सर्वमन्त्राधिदैवतम्।"** के रूप में इसकी मान्यता है। चण्डिका को परब्रह्ममहिषी कहा जाता है। इसका रहस्य यह है कि एक ही नित्य, शुद्ध बुद्ध, सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्म अनादिसिद्ध माया के द्वारा धर्मी और धर्म के रूप में परिणत होकर पंचभूतात्मक–जगत्सृष्टि के कार्य का प्रवर्तक बनता है। सृष्टि के आरम्भ में **'तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेय।' 'सोऽकामयत।' 'तत्तपोऽकुरुत।'** इन तीनों श्रुतियों से प्रतिपादित ज्ञान, इच्छा और क्रिया का समष्टिरूप ही ब्रह्म का धर्म है और वह धर्मी से अभिन्न रहता है। यही ब्रह्मधर्म शक्ति के नाम से परिभाषित होता है। अतएव श्रुतिबोधित ज्ञान, इच्छा और क्रिया रूप धर्म के कारण यह शक्ति कहलाती है। ज्ञान-इच्छा-क्रिया रूप ये तीनों शक्तियाँ महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती के नाम और रूप से सम्बोधित हुई हैं। इनकी समष्टि का नाम ही चण्डिका है। तात्पर्य यह कि सर्वभयजनक और सम्पूर्ण सृष्टिचक्र का संचालक ब्रह्म ही चण्डिका पद का वाच्यार्थ है। **अत्यन्त कोपस्वभाव** और **भयोत्पादिका** शक्ति चण्डिका कही जाती है। भुवनेश्वरी संहिता में इसकी पुष्टि इस प्रकार की गई है :—

'यद्भयाद् वाति वातोऽयं सूर्यो भीत्या च गच्छति।
इन्द्राग्निमृत्यवस्तद्वत् सा देवी चण्डिका स्मृता॥'

इसके अतिरिक्त चण्डभानु,चण्डवात इत्यादि लौकिक प्रयोगों में भयजनक कोप के अर्थ में चण्ड शब्द का प्रयोग किया गया है। **'चडि कोपे'** धातु से चण्डिका शब्द सिद्ध होता है। इसका वाच्यार्थ भयोत्पादक कोप है। अतएव **'नमस्ते रुद्र मन्यव'**—इस रुद्राध्याय के मन्त्र में सर्व प्रथम मन्यु (क्रोध) रूप को ही

नमस्कार किया गया है। इतना ही नहीं, निम्न-लिखित श्रुति भी इस भयंकर क्रोध का समर्थन करती है :—

'भीषास्माद् वातः पवते भीषोदेति सूर्यः।
भीषास्मादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः॥

इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि भयोत्पादक कोप प्रभाव से ही वायु आदि भी परब्रह्म स्वरूप माने गये हैं। चण्डिका के व्यापक स्वरूप को हृदयंगम करने में यह संक्षिप्त विवेचन जिज्ञासुओं को लाभ-प्रद होगा।

नवार्ण मन्त्र का विवेचन और जप–विधान

'देव्यथर्वशीर्ष' में नवार्ण मन्त्र का उद्धार निम्न-लिखित है :—

'वाङ्माया ब्रह्मसू तस्मात् षष्ठं वक्त्रसमन्वितम्।
सूर्योऽवामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्तष्टात् तृतीयकः॥
नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः।
विच्चे नवार्णकोऽयं स्यान्महदानन्ददायकः॥

अर्थ—वाक्, वाग्भवबीज 'ऐं', माया, मायाबीज 'ह्रीं', ब्रह्मसूः, कामबीज 'क्लीं', षष्ठं छठा अक्षर 'चकार' वक्त्र समन्वित, दीर्घ अकार से युक्त 'चा', सूर्यः, मकार, अवाम श्रोत्र पांचवां स्वर उकार, बिन्दुसंयुक्त, अनुस्वारयुक्त अर्थात् 'मुम्' टात् तृतीयकः—टकार से तीसरा 'डकार', नारायणेन, दीर्घ अकार से संमिश्र, संयुक्त 'डा', वायु 'यकार', अधरयुक्, बारहवें स्वर ऐकार से युक्त 'यै', विच्चे-विच्चे के स्वरूप में, नवार्णक नव अक्षरों वाला यह समुदाय-रूप नवाक्षर मन्त्र, महतां उपासकों को, आनन्ददायक, आनन्दस्वरूप ब्रह्म का सायुज्य देने वाला है।

मन्त्रशास्त्र के पारिभाषिक संकेतों के अनुसार सम्पूर्ण मन्त्र का विवेचन पूर्वोक्त क्रम से किया गया है। यद्यपि यह मन्त्रशास्त्र से अनभिज्ञ लोगों के लिए सर्वथा दुर्बोध है किन्तु इस शास्त्र की गोपनीयता को सुरक्षित रखने की दृष्टि से सर्वथा उपयुक्त है। साथ ही **'प्राज्ञंमन्यमना हठेन पठिती मास्मिन् खलः खेलतु।'** श्रीहर्ष की इस नैषधीय चरित की उक्ति के अनुरूप इस संकेत प्रक्रिया को शास्त्र की प्रतिष्ठा

और धार्मिक मर्यादा के पालनार्थ अनिवार्य और आवश्यक ही कहा जाएगा।

नवार्ण मंत्र का इस से भी सुगम विवेचन इस रूप में उपलब्ध होता है :—

'वाक्कामलज्जाबीजान्ते चामुण्डायै पदं वदेत्।
विच्चे नवार्णमन्त्रोऽयं शक्तिमन्त्रोत्तमोत्तमः।

वाक्, काम, लज्जा अर्थात् 'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' यह नवाक्षर मन्त्र शक्ति के मन्त्रों में सर्वोत्कृष्ट मन्त्र माना जाता है।

सत्, चित् और आनन्दस्वरूप ब्रह्म की भांति नवार्ण की अधिष्ठात्री चण्डिका भी सच्चिदानन्दरूपिणी है। एवं नवार्णमन्त्र में चामुण्डा शब्द का अर्थ अखण्डब्रह्मविद्या है जो शास्त्रीय विवेचन से ही भलीभांति समझा जा सकता है। इस प्रसंग में उत्कृष्ट आनन्दावस्था को ही संवेदनशील पुरुषार्थ माना गया है। अतएव **'आत्मनः कामाय सर्वं प्रियं भवति।'** इस श्रुति द्वारा आनन्दानुभूति का अतिशय महत्व बतलाया गया है। इस नवाक्षर मन्त्र का व्यापक अर्थ वास्तव में सद्गुरु के मुख से ही बोधगम्य हो सकता है।

दुर्गापाठ के आरम्भ और अन्त में षडङ्गन्यास के साथ इसके अष्टोत्तरशत (एक सौ आठ बार) जप का विधान है। मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता आदि का सम्पूर्ण परिचय नीचे दिये हुए श्लोकों में स्पष्ट किया गया है :—

'ब्रह्मविष्णुमहेशास्तु मुनयोऽस्य प्रकीर्तिताः।
छन्दांस्युक्तानि मुनिभि र्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभः॥
देव्यः प्रोक्ता महापूर्वाः काली लक्ष्मी सरस्वती।
नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयोऽस्य मनोः स्मृताः॥
स्याद् रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजसंचयः।
अग्निवायुभगास्तत्त्वं फलं वेदत्रयोद्भवम्॥
सर्वाभीष्टप्रसिद्धयर्थे विनियोग उदाहृतः॥

इस का अर्थ स्पष्ट होने से व्याख्या करना अनावश्यक है।

त्रिशक्तियों का क्रमिक ध्यान :—

खड्गं चक्रगदेषु चापपरिघाञ्शूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।

यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुंकैटभं
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम् ॥
अक्षस्त्रक्परशूगदेषु कुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥
घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकान्
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ॥
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा—
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ।

इन तीनों शक्तियों के ध्यानोक्त स्वरूप की एक साथ भावना करके मानसोपचार पूजन के साथ जपमाला का भी पूजन कर अष्टोत्तर शत (एक सौ आठवार) नवार्ण का जप करके **मार्कण्डेय उवाच** से आरम्भ कर '**सावर्णि र्भविता मनुः**' इस अन्तिम श्लोक तक अविच्छिन्न पाठ करने के बाद पुनः ऋष्यादि करषडङ्ग न्यास के साथ इस मन्त्र का जप और '**गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं**' इस मन्त्र से देवा को समर्पण कर देवासूक्त और रहस्यत्रय का पाठ करे तथा अन्त में नव पुष्पाञ्जलि मन्त्रों से क्षमापन और प्रार्थना करके इस कृत्य का समापन करे ।

श्रीशिलादेवी की प्रतिमा

जयपुर के उपनगर तथा कछवाहा राजवंश की प्राचीन राजधानी आमेर के राजमहल के दाहिनी ओर महिषमर्दिनी दुर्गा के विग्रह रूप में प्रतिष्ठित श्रीशिलादेवी का संगमरमर के पाषाण से निर्मित विशाल एवं भव्य मन्दिर है । चमकीले काले प्रस्तर से निर्मित, बड़े आकार की यह अष्टभुजा मूर्ति वहुत आकर्षक तथा स्थानीय कलाकारों की अपनी विशिष्ट मूर्ति-शिल्प-कला का प्रतीक है, जो एक बड़े आकार के पाषाण शिला-खण्ड में उत्कीर्ण की गई है । मूर्ति के ऊपरी भाग में मस्तक के ऊपर बाएं से दाएं तक क्रमशः अपने वाहनों पर आरूढ गणेश,

ब्रह्मा, शिव, विष्णु एवं सरस्वती की सुन्दर छोटे आकार की मूर्तियां उत्कीर्ण की गई हैं। शिलादेवी के दाहिने हाथ के ऊपर और नीचे क्रमशः खड्ग, तीर, त्रिशूल और वर तथा बाएं हाथ के दोनों भागों में क्रमशः ढाल, धनुष, अभय और मुण्ड उत्कीर्ण हैं। सैकड़ों वर्ष पुरानी इस प्रतिमा में उत्कीर्ण देवताओं और आयुधों की आकृतियां (स्वरूप) धूमिल हो गई हैं। इसलिए उनको पहचानने में भ्रम उत्पन्न होता है। इन पङ्क्तियों के लेखक ने विशेष अनुमति लेकर देवी की प्रतिमा का प्रत्यक्ष दर्शन किया है। उसी आधार पर पूर्वोक्त विवरण यहां दिया गया है। भगवती सिंह-वाहिनी हैं। किन्तु मूर्ति ऊपर से नीचे तक पोशाक से आवृत है, इसलिए सिंह का दर्शन नहीं होता।

प्रतिमा का मुख बायीं ओर झुका हुआ है इसके सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं, जिनका उल्लेख आगे किया जायेगा। किन्तु इसके बायीं ओर झुकाव का रहस्य भक्त के प्रति अनुग्रहपूर्ण कृपा दृष्टि प्रतीत होता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह प्रतिमा चमत्कारी तो थी ही, परन्तु आरम्भ से ही यह व्यक्ति विशेष की आराध्या भी रही है।

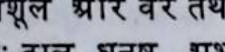

प्रतिमा का इतिवृत्त

यह प्रतिमा या सपाट शिलाखण्ड, जैसा कि इसका पूर्व इतिहास प्राप्त होता है—मुगल सम्राट् अकबर के प्रधान सेनापति, आमेर राज्य के यशस्वी महाराजा मानसिंह पूर्वी बंगाल (जो अब बंगला देश कहलाता है) के प्राचीन नगर यशोहर या जैसोर से लाये थे। टाकी (ढाका) से लगभग दस कोश दक्षिण में यह नगर अवस्थित है। यशोहर राजा प्रतापादित्य की राजधानी थी। अनुमानतः यह कायस्थवंशी रहे होंगे क्योंकि जैसोर के पड़ोस में राजा चन्द्रनाथराय के वंशज कायस्थों का मुख्य आवास स्थल था। इनका विशेष वृत्त नहीं मिलता।

बंगाल को मुगल साम्राज्य के अधीन करने के लिए जब महाराजा मानसिंह ने आक्रमण किया तो प्रदेश के छोटे-बड़े शासक अपनी पराजय स्वीकार कर इनके अनुयायी बन गये। इन सबका अगुआ राजा प्रतापादित्य और उसका मुख्य सामन्त राजा केदार, दोनों ही युद्ध भूमि में पराजित होने के बाद विजेता को आत्मसमर्पण कर चुके थे। थोड़े समय के बाद प्रतापादित्य का निधन हो गया और केदार जैसोर का अधिपति बन गया। जैसा कि लिखा जा चुका है, प्रतापादित्य के बारे में कोई प्रामाणिक सूत्र नहीं मिलता। परन्तु मत्स्यदेश के इतिहास से यह सिद्ध होता है कि ईसवी सन् १६०४ में केदार को पराजित कर महाराजा मानसिंह ने उसके राज्य पर अधिकार कर लिया था। जैसोरेश्वरी के नाम से प्रसिद्ध शिलादेवी राजा केदार की कुलदेवी थी। वह भगवती का अनन्य भक्त था। उसे कुलदेवी का इष्ट था और वह बड़े भक्ति-भाव से इनकी सेवा-पूजा किया करता था।

विद्यावाचस्पति स्वर्गीय पं० मधुसूदन जी ओझा द्वारा संकलित 'मत्स्य देश के इतिहास' में, जिसकी हस्तलिखित प्रति सवाई मानसिंह द्वितीय द्वारा स्थापित म्यूजियम के पुस्तकालय में उपलब्ध है, के अनुसार शिलादेवी से सम्बद्ध जो विवरण और किंवदन्तियां दी गई हैं उनका सार, संक्षेप में निम्न-लिखित है—

१. मानसिंह और प्रतापादित्य के बीच युद्ध हुआ था। प्रतापादित्य शिलादेवी का पूर्ण भक्त था। अपनी विजय के लिए उसने जब देवी की स्तुति की तो उसने मुंह फेर लिया तब से देवी का मुख टेढा हो गया।

२. शिलादेवी को नरबलि दी जाती थी। किन्तु मानसिंह ने नरबलि देना बन्द कर दिया तो मूर्ति ने मुंह फेर लिया। स्वप्न में राजा को जब यह ज्ञात हुआ तो उसने देवी को बकरे की बलि देना आरम्भ कर दिया।

३. उक्त मूर्ति राजा प्रतापादित्य की राजधानी यशोहर से नहीं लायी गई, वरन् वह राजा केदार के यहां से ही लाई गई थी। इस बात की पुष्टि कई अन्य स्रोतों से होती है। अतः यह कहना प्रामाणिक है कि इसका आगमन केदार के यहां से हुआ था।

४. केदार के ऊपर भगवती का वरद हस्त था। अतः शत्रुओं द्वारा पराजित न होने का उसे पूरा भरोसा था। मानसिंह को जब इसका आभास हुआ तो उन्होंने अनुष्ठान कराया और देवी उन पर प्रसन्न हो गई।

५. इसके पूर्व देवी ने केदार से प्रण किया था कि जब तू स्वयं मुझे कह देगा कि 'तू जा' तब मैं यहां से चली जाऊंगी। एक दिन जब केदार ध्यानमग्न होकर पूजन कर रहा था तो बालिका के रूप में देवी वहां आईं और बाल सुलभ चेष्टा करती हुई मचल पड़ीं। अन्त में केदार ने तंग आकर कहा कि 'तू जा, मुझे पूजा करने दे।' यह सुनकर देवी चली गईं। इसके बाद केदार ने इस शिला को समुद्र में डुबो दिया।

स्वप्न में देवी ने मानसिंह को आदेश दिया कि समुद्र से निकाल कर तुम मुझे अपने साथ ले चलो। इधर केदार ने इस घटना के बाद अपने दीवान को आदेश दिया कि तुम अब राजा से सन्धि करके उसे राजकन्या समर्पित कर देना। उसकी इच्छानुसार ऐसा ही किया गया और उसे पुनः राजगद्दी प्राप्त हो गई।

राजा केदार ने अपनी पराजय के बाद महाराजा मानसिंह जी के समक्ष प्रस्ताव रक्खा था कि यदि उसका राज्य वापस दिला दिया जाए तो वह अपनी एकमात्र निधिस्वरूपा शिलादेवी की प्रतिमा उन्हें अर्पित कर देगा। परन्तु यह आवश्यक होगा कि जिस विधि-विधान से उनकी पूजा अब तक होती आयी है, भविष्य में भी उसकी व्यवस्था वैसे ही बनायी रक्खी

जाये । विजेता महाराज ने उसका यह अनुरोध मान लिया था।

इतिहास के इस घटना क्रम से ऐसा लगता है कि उक्त प्रतिमा एकबार समुद्र में विसर्जित हो चुकी थी। परन्तु दोनों राजाओं में समझौता होने के बाद राजा केदार की सहमति और संकेत से ही यह मूर्ति समुद्र से निकाली गई है।

राजा के साथ केदार की कन्या का सम्बन्ध हो जाने से दोनों में रिश्ता जुड़ गया था। यही कारण था कि उसने देवी की पूजा करने वाले अपने कुल पुरोहित ब्राह्मणों के साथ इस प्रतिमा को ले जाने की पेशकश की थी। तदनुसार महाराजा प्रतिमा के साथ पुजारियों को भी अपने साथ ले आये थे। इन्हीं बंगाली भट्टाचार्यों के दस ब्राह्मण परिवार शिलामाता की सेवा-पूजा के प्रभारी थे। इनके वंशज आमेर में ही बस गये थे और अब भी वे यहां रह रहे हैं। इन पुजारियों के वंश में रत्नगर्भ भट्टाचार्य नाम के विद्वान् का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने ही 'विष्णु पुराण' के ऊपर 'वैष्णवाकूतचन्द्रिका' नाम की टीका लिखी थी। विक्रम संवत् १७०२ की लिखी इस पुस्तक की एक प्रति महाराजा के पोथीखाने में मौजूद है।

मत्स्य देश के इतिहास तथा अन्य सूत्रों से एक बात स्पष्ट होती है कि आरम्भ में यह कृष्ण वर्ण की चमत्कारी शिला मात्र थी और इसका ही विधि-पूर्वक पूजन होता था। इसके आमेर लाये जाने पर यहां के मूर्तिकार शिल्पियों ने इसे सुन्दर प्रतिमा का रूप दे दिया था। इस चमकीली काले रंग की पाषाण शिला के बारे में एक किंवदन्ती यह भी प्रचलित है कि उक्त शिला ब्रज भूमि से राजा प्रतापादित्य के यहां ले जायी गई थी और इसके पूर्व यह ब्रजप्रदेश की हिन्दू जनता की धरोहर के रूप में वहां सम्मानित थी।

कहा जाता है कि राजा कंस अपनी बहिन देवकी के नवजात शिशुओं को इसी शिला पर पटक कर मारा करता था। अतीत कैसा भी क्यों न रहा हो

किन्तु वर्तमान में इसके बारे में अटकलबाजियों के अलावा कोई प्रमाण मिल सकना असम्भव है।

सूर्यमल्ल मिश्र ने 'वंश भास्कर' में इस पूरे प्रकरण को दूसरा ही रंग दे डाला है। जो तथ्यपरक कम और दन्त कथाओं पर अधिक आधारित है। अतः उसकी चर्चा यहां नहीं की गई है।

प्रसिद्ध कवि नरहरि के पुत्र हरिनाथ ने महाराजा मानसिंह की प्रशंसा में जो दो दोहे सुनाये थे वे भाव-पूर्ण होने से उल्लेखनीय हैं :—

'बलि बोई कीरति लता, कर्ण लगायो पात।
सींची मान महीप ने, जब देखी कुम्हिलात॥

जात जात गुन अधिक हो, अजहू सुनी न कान।
राघव वारिधि वांधियो, मारचो हेला मान॥

दोनों दोहों के अर्थ स्पष्ट हैं। ढूंढारी बोली में 'हेला' का अर्थ जोर से हांक लगाना या आवाज देना है।

साहित्यिक–साक्ष्य●

ईसा की अठारहवीं सदी में एक अज्ञात नामा कवि द्वारा रचित 'मानवंशवर्णनम्' नाम के काव्य में श्रीशिलादेवी के सम्बन्ध में जो तथ्य उजागर किये गये हैं, वे सम-सामयिक होने से प्रामाणिक और ज्ञातव्य हैं :—

१. खड्गाघातविखण्डितारिनिवहश्रीमानसिंहागम-
त्रस्यद्वंगधराधिपप्रणिहितागाधेऽम्बुधावम्बिका।
खड्गक्षालनरक्तगन्धमुदिता सोवाच तं स्वप्नगा
साम्राज्यं भज वीर वारिधितलाद् धाम स्वकं मां नयेः॥

भावार्थ—अपनी पैनी तलवार के प्रहार से शत्रुओं को छिन्न-भिन्न कर विजय प्राप्त कर ने के बाद महाराजा मानसिंह का इस प्रदेश पर अधिकार हो गया था। इससे भयभीत होकर बंगदेश के राजा ने

● देखिये–पं० श्री गोपालनारायण जी बहुरा द्वारा लिखित एवं सम्पादित 'Literary Heritage of the Rulers of Amber and Jaipur. Page 403.

देवी को समुद्र की अथाह जलराशि में विसर्जित कर दिया था। किन्तु रक्तरञ्जित तलवार का प्रक्षालन करने पर उसकी गन्ध से प्रसन्न होकर देवी ने स्वप्न में राजा को आज्ञा दी कि हे वीर! समुद्र से मुझे निकाल कर अपने निवास स्थान पर ले चलो तथा साम्राज्य का उपभोग करो।

२. यत्नाद्रत्ननिधेर्निधानमिव तां रत्नव्रजानां शनै-
रुन्नीयानयति स्म सद्म स निजं सम्पूज्य साम्राज्यदाम्।
जित्वा सत्वरमुद्धतानपि रिपून् द्वीपाधिपाँश्चिह्नयन्
तत्तद्धामसु पंचरागरचनान्युच्चैर्बबन्ध ध्वजान् ॥

भावार्थ—रत्नराशि की धरोहर के समान राजा ने यत्नपूर्वक धीरे से उनको बाहर निकाला और साम्राज्य देने वाली भगवती की विधिवत् पूजा करके उन्हें अपने आवास पर ले आये। इस प्रान्त के उद्दण्ड शत्रुओं को शीघ्रता के साथ जीत कर विभिन्न ठिकानों के स्वामियों का निर्देश करते हुए उनके स्थानों पर पंच-रंगी विजय पताका (झण्डा) धूमधाम से फहरा दी गई।

३. प्रासादे विहिते स्वसौधसविधे शैले सरोरोधसि
श्रीमानुत्तमकान्तिशालिनि वरे देवीं वरेण्यां दिने।
आधायापि सुपूज्य भूरिविभवो राजोपचारार्पणैः
संजज्ञे भ्रुकुटीविधेयविकटक्षोणीशशिक्षोत्कटः ॥

भावार्थ—मावठा के नाम से प्रसिद्ध तालाब के तट पर स्थित पर्वत पर, अपने राजमहल के पास देव-मन्दिर बनवा कर राजा ने शुभ दिन और शुभ मुहूर्त में देवी की प्रतिष्ठा की और ऐश्वर्य के प्रतीक राजाओं द्वारा की जाने वाले चौंसठ पूजा-द्रव्यों के अर्पण के साथ, उत्पात करने वाले राजाओं को अपनी वक्रदृष्टि से अनुशासित कर आज्ञाकारी बना लिया।

४. आम्बेरीं लसदम्बिकानिलयिकां शैलावलीदुर्गमां
गुप्तस्पर्शमहावटाभिधसरस्तीरे तरूदञ्चिताम्।
आस्थाय स्थिरधीरधीतसमरो भाति स्म शासद्दिवं
पूर्णश्रीरमरावतीपतिरिव श्रीमान्सिंहो भुवम् ॥

भावार्थ—पर्वतमाला से घिरी हुई दुर्गम आमेर

नगरी, जो शिलाम्बा का आवास स्थान है तथा गुप्त रूप से उनका चरण स्पर्श करने वाले महावट (मावठा) नामक सरोवर के तटपर वृक्ष पङ्क्तियों से सुशोभित है। इस नगरी में स्थिरबुद्धि और युद्धकलाप्रवीण महाराजा मानसिंह स्वर्ग के राजा इन्द्र देव की तरह राज्यलक्ष्मी से पूर्णतः समृद्ध होकर पृथ्वी के शासक के रूप में सुशोभित हुए।

राजवंश–परिचय

१. महाराजा मानसिंह प्रथम

(विक्रम सम्वत् १६४६–१६७१)

आमेर के राजा भगवन्त दास जी के ज्येष्ठ पुत्र महाराजा मानसिंह का जन्म विक्रम संवत् १६०० (ईसवी सन् १५४३) पौष कृष्णा १३ को आमेर में हुआ था। शाही खिताबों के साथ इनका पूरा नाम 'हफ्त हजारी महाराजा मानसिंह, मिर्जा राजा, फर्जन्द दौलते मुगलिया' था। मुगल बादशाहों के समय में, आपके समान प्रतापी वीर नरेश, कोई दूसरा नहीं हुआ। हिन्दू संस्कृति और धर्म के आप सुदृढ़ स्तम्भ थे। आपके शासनकाल में जनता सुखमय जीवन जीती थी। मुगल सम्राट् अकबर के प्रधान सेनापति होने के साथ-साथ आप अकबरी दरबार के नवरत्नों में गिनें जाते थे।

मुगल साम्राज्य को विस्तार देने और दूर-दराज के सूबों तक मुगलों का आधिपत्य जमानें का सारा श्रेय आपको ही प्राप्त हुआ था।

मेवाड़ की धरती पर 'हल्दी घाटी' का प्रसिद्ध युद्ध माघ शुक्ला ७ वि० सम्वत् १६३३ और सन् १५७७ ई० में हुआ था। कर्नल टाड नें इस युद्ध का आरम्भ श्रावण सुदी ७, सम्वत् १६३२ (जुलाई ई. सन् १५७६) होना लिखा है। जो सर्वसम्मत नहीं है।

युद्ध में राणा के पूर्णतः परास्त हो जानें पर मान सिंह जी ने चित्तौड़ को लूटकर विध्वस्त कर दिया

और इस अवसर का लाभ लेकर मीराँबाई के उपास्य श्रीगिरिधर गोपाल की मूर्ति आमेर ले आये थे, जो जगत्शिरोमणि जी के नाम से प्रसिद्ध मन्दिर में विराजमान है।

चित्तौड़ विजय के उपलक्ष्य में कुंवर मानसिंह को बादशाह अकबर ने पंजाब (सियालकोट) का प्रशासक नियुक्त किया था। इसके बाद उन्होंनें सिन्ध, मालवा, काबुल, बंगाल, उड़ीसा आदि प्रान्तों पर अपने शौर्य और बुद्धिबल से विजय प्राप्त की और शाही दरबार के प्रधान तथा सर्वेसर्वा बन गये। इनकी विजयश्री का सम्पूर्ण इतिहास स्वतन्त्र लेखन का विषय है। अतएव बहुत संक्षेप में यहाँ इनकी महानता और शूरवीरता का परिचय दिया गया है। इनके बाद, भारत में ऐसे किसी महान् वीर पुरुष ने जन्म नहीं लिया जिसकी तुलना इनके साथ की जा सके। इनके अद्भुत शौर्य, पराक्रम तथा राजनीतिक सूझ-बूझ का इतिहास अद्वितीय रहा है।

मार्गशीर्ष मुक्ला ७ सम्वत् १६४६ को पिता के स्वर्गवासी होने पर आप आमेर पधारे थे, और बड़े समारोह के साथ आपका राज्याभिषेक हुआ तथा आमेर की राजगद्दी पर आसीन हुए। यह उल्लेखनीय है कि और खिताबों की तरह 'महाराजा' का खिताब भी बादशाह नें ही आपको दिया था। शाही दरबार में किसी भी दूसरे सरदार की प्रतिष्ठा आपके बराबर नहीं थी। इतना ही नहीं, स्वयं बादशाह अकबर और बाद के उनके उत्तराधिकारी भी आपके व्यापक प्रभाव और प्रशासनिक कुशलता से भयभीत रहा करते थे। आपके व्यक्तित्व की उन पर यह गहरी छाप थी।

आमेर की शिलामाता को बंगाल से लाने और उन्हें प्रतिष्ठित करने का एकमात्र श्रेय आप को ही प्राप्त हुआ था। इस प्रसंग से यहां आपके उदात्त-चरित्र का संक्षेप में चित्रण करने का यह सुयोग मिला है।

इन पंक्तियों के लेखक नें राजपरिवार की

प्रशस्ति में आपके सम्बन्ध में जो वर्णन किया है वह यहां उद्धृत किया जाता है—

'आसीत् युद्धकलाप्रवीणधिषणो वीराग्रणीर्बाहुजो
यो ह्यामेरपुराधिपः पृथुयशाः श्रीमानसिंहो नृपः।
वंगीयान् प्रतिपक्षिणः स समरे निर्जित्य तद्देशतः
सश्रद्धं समुपाहरद् भगवतीमम्बां शिलोत्तंसिनीम् ।।

भावार्थ—क्षत्रिय वंशी, वीरों में अग्रणी, युद्धकला विशारद आमेर के विख्यात एवं यशस्वी राजा मानसिंह ने बंगाल के विपक्षी राजाओं को युद्ध में हराकर उनके यहां से भगवती शिलाम्बा को श्रद्धापूर्वक आमेर में लाकर प्रतिष्ठित किया।

२. मिर्जा राजा जयसिंह

महाराजा मानसिंह के स्वर्गवास के बाद उन के कनिष्ठ पुत्र भावसिंह राजा हुए क्योंकि ज्येष्ठ पुत्र जगतसिंह अपने पिता के जीवनकाल में ही दिवंगत हो गये थे। तत्पश्चात् जगतसिंह के पौत्र महासिंह के पुत्र मिर्जा राजा जयसिंह आषाढ कृष्णा प्रतिपदा विक्रम सं० १६७८ (1622 A. D.) में आमेर की राजगद्दी पर आसीन हुए थे। मिर्जा राजा जयसिंह एक असाधारण प्रतिभाशाली राजा थे। वे फारसी, तुर्की, संस्कृत तथा उर्दू के अच्छे जानकार थे और इतिहास, भूगोल, गणित एवं राजनीति के ज्ञाता होने के साथ युद्ध कला और प्रशासन में भी भलीभांति दक्ष थे। वे उच्चकोटि के कला प्रेमी थे। अपने शासन काल में उन्होंने हस्तलिखित ग्रन्थों, पेंटिंग्स (कलम के चित्र) विभिन्न शस्त्रों और अन्य कलात्मक वस्तुओं का अच्छा संग्रह किया था।

संस्कृत भाषा और उसके विशाल साहित्य तथा हिन्दी भाषा के प्रति उनका गहरा लगाव था। संस्कृत और हिन्दी के उत्थान और प्रचार-प्रसार में उनका योगदान चिरस्मरणीय रहेगा। बल्कि यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र

में ढूंढार प्रदेश को जाग्रत करने और उसे नया जीवन देने का श्रेय मिर्जा राजा जयसिंह को ही जाता है।

विद्वानों, कवियों और कलाकारों के आश्रयदाता के रूप में दूर-दूर तक इनकी प्रसिद्धि थी। इनके शासन काल में आमेर राज्य का वर्चस्व सर्वोपरि था। अतः इनके समय में शिक्षा और कला के क्षेत्र में यह राज्य उन्नत स्थिति में पहुंच गया था। सारांश यह कि राजा की बहुमुखी प्रतिभा के प्रकाश में आमेर राज्य का वैभव अपनी चरम सीमा पर था। इसका आँखों देखा वर्णन पंचनद (पंजाब) के कवि, दामोदर तैलङ्ग के पुत्र गोपाल ने अपने 'जयचम्पू'• नामक काव्य में किया है, जो मिर्जा राजा जयसिंह के दरबारी कवि थे। इसमें राजा के चरित्र और राज्य के ऐश्वर्य का विशिष्ट वर्णन किया गया है।

• भारत सरकार की 'शास्त्रचूडामणि' योजना के अन्तर्गत इन पक्तियों के लेखक ने 'जयचम्पू' पर मितभाषिणी नामक व्याख्या लिखी है जो अभी अप्रकाशित है।

अपने इस काव्य लेखन के बारे में कवि की आरम्भ की निम्नलिखित उक्तियां बड़ा महत्त्व रखती हैं—

तस्यात्मजः कुलकदम्बकुलाम्बुदोऽय-
मुद्भूतवैरितिमिरप्रशमप्रदीपः।
यो जन्मनैव जयशालिकृती पृथिव्यां
नाम्ना ततो विजयते जयसिंहदेवः॥११॥

तस्यैवाद्भुतकर्मणः श्रुतगुणग्रामानुरागोदिता-
मन्दामोदरसेन मे खलु रुचि र्यद्वर्णनायाभवत्।
तच्चम्पूं सुयशःप्रतापरचनां चित्रां तनोम्युत्सुकः
साम्यश्लेषविरोधरूपकलसज्जात्यादिभिर्भूषिताम्।१२।

तत्र चायं विशेषः—

श्रुत्वा यथा सुकवयः खलु वर्णयन्ति
प्राचीनभूपचरितं न तथोच्यतेऽत्र।
किन्तु स्फुटोद्यदनुरागभरान्नरेशे
दृग्गोचरे सति मुदाहमुदाहरामि॥१३॥

भावार्थ—राजा महासिंह के पुत्र जयसिंह कदम्ब पुष्प के समान अपने वंशजों को वर्षा से प्रफुल्लित करने वाले तथा शत्रुरूप से उत्पन्न अन्धकार को नष्ट करने के लिए दीपक के सदृश प्रकाशित हो रहे हैं, जो अपने जन्म से ही इस पृथ्वी पर विजयी के रूप में उदित हुए हैं और इसलिए नाम से भी वे जयसिंह कहलाते हैं ।

"उन अद्‌भुत चरित्र वाले राजा जयसिंह के गुणों के प्रति अनुराग उत्पन्न होने से, भरपूर आनन्दरस के साथ उनका वर्णन करने के लिये मेरा मन उत्सुक हुआ है । इसलिए उनके सुयश और प्रताप को उजागर करने के लिए, साम्य, श्लेष, विरोधाभास, रूपक आदि के द्वारा उनकी प्रशंसा में इस चम्पू की रचना कर रहा हूं ।"

"इस चम्पू की खूबी यह है कि पुराने कवियों के राज–वर्णनों की तरह मैंने सुनी-सुनायी बातों के आधार पर यह रचना नहीं की है। बल्कि राजा के चरित्र के प्रत्यक्षदर्शी के रूप में प्रसन्नचित्त होकर और उनके प्रति लोगों के प्रकट अनुराग को दृष्टि में रखते हुए नमूने के तौर पर यह लिख रहा हूं ।"

ब्रजभाषा और हिन्दी के कई नामी कवियों के ये आश्रय दाता थे । इनमें 'बिहारी सतसई' के रचयिता बिहारी कवि, इनके भानजे कुलपति मिश्र, नरोत्तमदास, हरिजीवन मिश्र, प्राणनाथ श्रोत्रिय, नन्दन कवि आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

बिहारी और कुलपति मिश्र हिन्दी के प्रसिद्ध कवि तो थे ही, महाराज कुमार रामसिंह के प्रिय शिक्षकों में भी थे । बिहारी राजा के अन्तःपुर की महिला सेविकाओं के प्रशिक्षक भी रहे थे । बिहारी को मिर्जा राजा ने आगरा से आमेर बुलाया था । रामपुरा के नरोत्तमदास सनाढ्य ब्राह्मण मध्यप्रदेश के रहने वाले थे और राजा के दरबारी कवि थे ।

'गङ्गालहरी', 'रस-गङ्गाधर' आदि ग्रन्थों के रचयिता सुप्रसिद्ध कवि पण्डितराज जगन्नाथ तैलङ्ग ब्राह्मण थे। जब ये काशी में पढ़ते थे, तभी से इनकी पाण्डित्य-प्रतिभा पर राजा मुग्ध थे। अतः शिक्षा समाप्त करने पर, इनको मिर्जा राजा काशी से आमेर ले आये थे। राजा की प्रेरणा से इन्होंने आमेर में संस्कृत-विद्यालय का संचालन किया था। पण्डित-राज उर्दू-फारसी के भी पण्डित थे और आमेर में इन्होंने एक काजी को शास्त्रार्थ में हरा दिया था। इससे मिर्जा राजा इनसे बहुत प्रसन्न हुए और दिल्ली के शाही दरबार में इनको ले गये। शाहजहाँ ने इन्हें पूर्ण सम्मान दिया और 'दाराशिकोह' का शिक्षक बना दिया। शाहजहां की प्रशंसा में पण्डितराज ने अपने 'भामिनी-विलास' काव्य में लिखा है—

'दिल्लीवल्लभपाणिपल्लवतले नीतं नवीनं वयः।'

अर्थात् मेरा यौवनकाल शाही छत्र-छाया में बीता है।

मिर्जा राजा का संस्कृत प्रेम अद्वितीय था। वे प्रायः काशी जाकर संस्कृत विद्वानों की गोष्ठियों में सम्मिलित हुआ करते थे। काशी में उन्होंने एक संस्कृत विद्यालय की स्थापना की थी जहां इनके दोनों राजकुमारों ने भी संस्कृत का अध्ययन किया था। 'पंच गङ्गा घाट' पर लगे एक शिलालेख (१६१२ ई०) से इनका काशीगमन प्रमाणित होता है।

आमेर में मिर्जा राजा ने धार्मिक विषयों पर विवाद के समय निर्णय देने के लिए प्रथम श्रेणी के विद्वानों की एक 'पण्डितसभा' स्थापित की थी जिसके धार्मिक निर्णय सारे भारत में मान्य होते थे। छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक के अवसर पर इस सभा के निर्णयानुसार पहले उनका यज्ञोपवीत (मौञ्जी

धारण) किया गया उसके बाद ही उनको राजगद्दी पर बिठाया गया। उस समय उनकी अवस्था लगभग ४०–४५ वर्ष की थी। यह धर्मसभा राजधानी के जयपुर आने के बाद भी बराबर कायम रही और अब तक भी उसका अस्तित्व बना हुआ है किन्तु समय परिवर्तन के साथ अब उसका वह महत्त्व नहीं रह गया।

शिलामाता का प्राचीन मन्दिर जो आरम्भ में पश्चिममुखी था, मिर्जा राजा ने उसके बगल में एक दूसरा भव्य मन्दिर बनवाया जिसका मुख्य द्वार उत्तराभिमुख है और वहीं पर माता की मूर्ति विराजमान की गई थी, जो अब तक उसी स्थान पर स्थित है।

धर्म, शिक्षा, कला और संस्कृति के प्रायः सभी क्षेत्रों में मिर्जा राजा की उपलब्धियां बेजोड़ रही हैं। उनके धार्मिक प्रभाव और वर्चस्व के कारण औरंगजेब ने देवमूर्तियों का तुड़वाना बन्द कर दिया था।

मिर्जा राजा जयसिंह के ६ रानियां, २ खवास, ७ पातरें और रामसिंह तथा कीरतसिंह नाम के दो पुत्र थे। उनका निधन आश्विन कृष्णा ५ सम्वत् १७२४ (१६६७ ई०) में हुआ था। ४५ वर्ष ८ महीने और १० दिन तक उन्होंने आमेर की राज्यसत्ता का उपभोग किया।

३. सवाई मानसिंह द्वितीय

सवाई मानसिंह आधुनिक जयपुर के निर्माता थे। इनके शासन काल में जयपुर का सर्वतोमुखी विकास हुआ। सवाई मानसिंह अपनी प्रजा की सुख-सुविधा बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे। शिक्षा, चिकित्सा, विधि और व्यवस्था के क्षेत्र का विस्तार करने में, अपनी सूझबूझ से काम लेकर, इन्होंने राज्यशासन का संचालन इतने साफ सुथरे ढंग से किया कि राजस्थान के राजाओं में अपना

विशिष्ट स्थान बना लिया था। जनता एक अच्छे शासक के रूप में इन्हें सम्मान और प्रेम देती थी।

इनके समय में ही राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना हुई थी। कुछ समय बाद, जब देशी रियासतों को मिलाकर राजस्थान राज्य का निर्माण हुआ तो ये नवनिर्मित राजस्थान राज्य के राजप्रमुख बने और इस पद पर रहकर एक सुयोग्य शासक के रूप में शासन का संचालन करते रहे।

कुछ समय तक राज्यसभा के सदस्य रहने के बाद महाराजा स्पेन में राजदूत के पद पर आसीन हुए। द्वितीय महायुद्ध और भारत के स्वतन्त्र होने के बाद, पाकिस्तान और चीन ने जब इस देश पर आक्रमण किया, तब महाराजा सवाई मानसिंह जी ने सैनिक सेवाओं के द्वारा अपना जो विशिष्ट योग-दान किया उसकी बहुत सराहना हुई और वे लेफ्टिनेन्ट जनरल की उपाधि से सम्मानित किये गये। महाराजा ने "हिस्ट्री आफ इण्डियन स्टेट फोर्सेज" नामक एक पुस्तक की रचना भी की थी जो प्रकाशित हो चुकी है।

आप समय के पारखी और दूरदर्शी नरेश थे। विद्या, कला और संस्कृति के संरक्षण में आपकी विशेष रुचि थी। आपने अपने पूर्वजों की कीर्ति को अक्षुण्ण बनाये रखने की दृष्टि से उनके द्वारा समय-समय पर संगृहीत कला वस्तुओं और प्राचीन साहित्य के हस्तलिखित ग्रन्थों की सुरक्षा और उससे देशी-विदेशी विद्वानों और कला प्रेमियों को परिचय प्राप्त करने की सुविधा उपलब्ध कराने की दृष्टि से सिटी पैलेस को संग्रहालय का रूप देकर सराहनीय कार्य किया है। देश-विदेश के शोध विद्वान् और शोधार्थी छात्र मध्य युग की भारतीय संस्कृति के अध्ययन में उसका लाभ ले रहे हैं।

आप आमेर की शिलामाता के अनन्य भक्त थे। विशेष पर्वों और उत्सवों के अलावा विदेश

यात्रा पर जाने और वहां से लौटने पर आप सर्व-प्रथम माता के दर्शनार्थ नियमित रूप से आमेर जाया करते थे। अपनी इस श्रद्धा-भक्ति के फलस्वरूप आपने शिलामाता के मन्दिर को संगमरमर के पाषाण से निर्मित कराकर नया भव्य रूप दिया है। साथ ही निज मन्दिर के द्वार के दोनों ओर कदली के वृक्ष को कलात्मक ढंग से, उसके प्राकृतिक रूप में पाषाण पर उत्कीर्ण कराकर जो सौन्दर्य प्रदान किया है वह दर्शकों को विशेष रूप से अपनी ओर आकर्षित करता है।

मन्दिर के प्रवेश द्वार पर चांदी के पत्तर के जड़े हुए जो किवाड़ लगाये गए हैं, इन कलात्मक किवाड़ों का निर्माण महाराजा की द्वितीय महारानी श्रीमती किशोर कुंवर ने कराया है, जो बड़े ही सुन्दर और आकर्षक बन पड़े हैं। उसके ऊपर सप्त-शती के कवच में वर्णित नव दुर्गाओं के अपने २ वाहनों के साथ जो भव्य रूप अङ्कित किये गये हैं वे अन्यत्र शायद ही कहीं देखने में आवें। और इनके स्वरूप के अनुरूप ही भूतपूर्व जयपुर राज्य के ताजीमी सरदार पुरोहित प्रतापनारायण जी कविरत्न के दोहे भी उत्कीर्ण किये गये हैं जो इसके सौन्दर्य के पोषक हैं। मन्दिर में प्रकाश और अन्य आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराकर आपने मन्दिर के गौरव और सौन्दर्य की जो श्रीवृद्धि की है, वह स्थानीय भक्त जनता तथा देशी-विदेशी पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र बिन्दु है। प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में जनता मां के दर्शनों का लाभ लेती है।

मन्दिर की सेवा-पूजा और उसकी देख-रेख के लिए आपने अपने समय में शिलामाता ट्रस्ट बनाया था जो मन्दिर के प्रबन्ध और सेवा पूजा की व्यवस्था की तत्परता से देख रेख करता है।

आपकी प्रशंसा में संस्कृत के दो पद्य यहां दिये जा रहे हैं●—

१. धन्योऽभूत् स द्वितीयमाननृपतिर्भक्त्या शिलाम्बप्रियो
राज्ञां मौलिमणिर्नयोक्तिनिपुणः शास्ता प्रजावत्सलः।
मूर्धन्यं नगरेष्वहो जयपुरं यच्छासनें संस्थितं
स्वर्यातोऽपि गुणानुरक्तहृदयैः कैरद्य न स्मर्यते ।।३।।

भावार्थ–शिलाम्बा के प्रिय भक्त, अपने समकालीन राजाओं के मुकुटमणि, राजनीति में निपुण, प्रजा के प्रिय शासक, स्वनामधन्य महाराजा सवाई मानसिंह (द्वितीय) यहां राज्य सिंहासन पर आरूढ़ हुए, जिनके शासन काल में जयपुर अन्य नगरों की तुलना में अग्रणी बनकर उन्नति की चरम सीमा पर पहुंचा। यही कारण हैं कि स्वर्गवासी होने के बाद, आज भी उनके गुणों के प्रशंसक सम्मान के साथ उन्हें याद करते हैं।

२. "पोलोकन्दुकक्रीडनेष्वनुपमो विश्वप्रसिद्धि गतो
मन्ये, मानमहीपतिः समभवद् राजस्थलीगौरवः।
गायत्री च सधर्मिणी बहुमता पोलोत्सवप्राङ्गणे
स्फूर्जत्भव्यसमृद्धिवैभवजुषः को वर्णयेत् तद्यशः ।।"

पोलो के अद्वितीय खिलाड़ी के रूप में विश्व-प्रसिद्ध स्वर्गीय महाराजा सवाई मानसिंह (द्वितीय) वास्तव में राजस्थान के गौरव स्तम्भ थे। उन्हीं के अनुरूप श्रीमती गायत्री देवी भी पोलो क्रीड़ा के मैदान में प्रशंसित होने के कारण उनकी प्रिय महारानी रहीं। इस प्रकार धन-धान्य पूर्ण लौकिक एवं पारिवारिक सुख का जीवन जीने वाले महापुरुष के यश का वर्णन कर सकना सबके वश की बात नहीं हुआ करती।

जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, महाराजा को पोलो खेलनें का बड़ा शौक था। वे इस खेल में विश्व विजयी रहे हैं। संयोगवश इंग्लैण्ड में इसी

● लेखक की 'राजप्रशस्ति' से उद्धृत।

पोलो खेल के मैदान में इन लोकप्रिय महाराजा का १९७० ई० में देहावसान हो गया।

४. सवाई भवानी सिंह

जयपुर के शासकों के वर्तमान उत्तराधिकारी महाराजा सवाई भवानीसिंह जी का जन्म आश्विन शुक्ला ११ वि. सं. १९८८ (२२ अक्टू० १९३१ ई०) को हुआ।

आप अपने पिता की भाँति स्वभाव से वीर सैनिक तथा पोलो के जाने-माने विशिष्ट खिलाड़ी हैं। ई. सन् १९७१ में पाकिस्तान ने जब भारत पर आक्रमण किया तो आप सैनिक सेवा में थे, और आपने अपनी छाताधारी सैनिक टुकड़ी का संचालन करते हुए युद्ध के मैदान में उत्कृष्ट वीरता का प्रदर्शन किया और पाकिस्तान की दो चौकियों पर अधिकार कर लिया। उसके फलस्वरूप भारत सरकार ने आपको महावीर चक्र से अलंकृत किया। सैनिक सेवा से निवृत्त होने के बाद आप अपने स्वर्गीय पिता के द्वारा आरम्भ किये गये कार्यों को पूर्ण करने के लिए बड़ी निष्ठा और लगन के साथ कार्यरत हैं।

अपने पिताश्री द्वारा स्थापित संग्रहालय की उन्नति के लिए आप खासतौर से प्रयत्नशील हैं। कुछ समय पूर्व आपनें अपने पिता की स्मृति में संग्रहालय में एक ग्रन्थ माला का शुभारम्भ किया है, जिसमें भूतपूर्व महाराजाओं द्वारा संगृहीत पोथीखाना के हस्तलिखित महत्त्वपूर्ण दुर्लभ साहित्य के सम्पादन और प्रकाशन की व्यवस्था की गई है। इसके अतिरिक्त, आपनें अनुसंधान करनें के इच्छुक छात्रों और विद्वानों को हस्तलिखित पुस्तकें सुलभ कराने का भी प्रबन्ध किया है।

कुछ वर्ष पूर्व, आपने अपनें पूर्वजों द्वारा निर्मित

'जयगढ़' फोर्ट को म्यूजियम (संग्रहालय) का रूप देने का निर्णय लिया है और इस योजना की ओर सक्रिय हैं। निकट भविष्य में, इस योजना के सम्पूर्ण हो जाने पर पर्वत के उच्च शिखर पर स्थित यह किला पर्यटन का एक रमणीय स्थल बन जायेगा।

फिलहाल, यहां पर्यटकों को आने-जाने की सुविधा देकर आपने इसके विकास की दिशा में सराहनीय कदम उठाया है। वर्तमान में, राजघराने की परम्परागत प्रवृतियों को व्यवस्थित करने और उनके सुचारु संचालन के लिए आप दत्तचित्त होकर प्रयत्नशील हैं।

अपने पिता श्री के अनुरूप आप भी भगवती शिलामाता के परम भक्त हैं। माताजी की सेवा पूजा के विधि पूर्वक संचालन के कार्य की ओर आप बराबर ध्यान रखते हैं। और उसकी सुचारु-व्यवस्था में किसी तरह की त्रुटि न होने देने के लिए समय-समय पर आप ट्रस्ट के सदस्यों के साथ आवश्यक परामर्श करते रहते हैं। आपकी महारानी साहिबा श्रीमती पद्मिनी जी भी माता जी की भक्त हैं और वे भी इनके सेवा-कार्य की ओर रुचि लेती हैं।

आप दम्पति की दीर्घायुष्य की कामना में 'राज-प्रशस्ति' से दो स्वरचित छन्द यहां दिये जा रहे हैं—

१. मानस्यात्मजकर्नलः स च भवानीसिंहभूपोऽधुना
विन्दन् तत्पदमातनोति परमां हर्षप्रकर्षश्रियम्।
चक्रं भारतशासनस्य च महावीरप्रतिष्ठादृतं
लब्धं येन मनस्विना स सुचिरं दीर्घायुषा नन्दतु ।।

स्वर्गीय महाराजा मानसिंह द्वितीय के पुत्र कर्नल महाराजा सवाई भवानीसिंह उनके स्थान को सुशोभित कर परम हर्ष प्रदान कर रहे हैं। अपनी अद्वितीय वीरता के फलस्वरूप जिस मनस्वी महाराजा को

भारत सरकार ने 'महावीर चक्र' देकर सम्मानित किया है, वे दीर्घायु होकर राज्य वैभव के आनन्द का उपभोग करें।

२. राज्ञी तस्य विभाति लोकविदिता या पद्मिनीत्याख्यया
राज्यश्रीरिव सत्स्वभावमधुरा कारुण्यपूर्णान्तरा।
पत्युः स्नेहकलासुसिक्तहृदया दाक्षिण्यमातन्वती
सेयं पुण्यमतिश्चिराय रुचिरं सौभाग्यमुन्मीलतु ।।

महाराजा सवाई भवानीसिंह की सहधर्मिणी, जो महारानी पद्मिनी के नाम से सुप्रसिद्ध हैं, राज्य-लक्ष्मी की भाँति करुणा से परिपूर्णहृदय वाली तथा प्रशंसनीय मधुर स्वभाव की हैं। वे पतिदेव के स्नेह से पूर्णतः सिंचित हृदय होकर उदारता को संजोए हुए दीर्घकाल तक अपने वाञ्छित सौभाग्य सुख का उपभोग करें।

श्रीशिलामाता ट्रस्ट का निर्माण

राजस्थान बनने के पूर्व श्रीशिलामाता मन्दिर का सम्पूर्ण प्रबन्ध जयपुर राज्य के तत्कालीन कारखाना पुण्य (Charity Department) द्वारा किया जाता था। राजस्थान राज्य में जयपुर के विलय के बाद सन् १९४९ में यह मन्दिर भूतपूर्व नरेश सवाई मानसिंहजी की निजी सम्पत्ति में ले लिया गया और मन्दिर की व्यवस्था सुपरिन्टेन्डेन्ट, हाउसहोल्ड धर्मार्थ द्वारा की जाती रही।

भूतपूर्व जयपुर नरेश सवाई मानसिंह जी ने सन् १९६३ में, राजस्थान राज्य द्वारा निर्मित 'राजस्थान सार्वजनिक प्रन्यास अधिनियम १९५९ की धारा २१ के अन्तर्गत इस मन्दिर का पंजीयन करा दिया था। जिसमें स्वयं महाराजा एवं उनके मिलिटरी सेक्रेटरी इस प्रन्यास के पदाधिकारी थे। उनके द्वारा नियुक्त स्व० पं० हरिहरनाथ सुखिया, सुपरिन्टेन्डेन्ट, हाउसहोल्ड धर्मार्थ इसके प्रबन्धक थे।

भूतपूर्व महाराजा के आकस्मिक निधन के बाद जयपुर राजगद्दी के उत्तराधिकारी महाराजा कर्नल भवानीसिंह जी ने इस ट्रस्ट के चेयरमेन का पद ग्रहण किया और उन्होंने सन् १९७६ में इस ट्रस्ट का पुनर्गठन किया और इसमें तीन सदस्य और ले लिये गये जिनके नाम निम्नलिखित हैं—

१. ठाकुर श्री श्यामकरण जी,
   करणोत हाउस, जयपुर।
२. श्री गोवर्धनलाल भट्ट
   मिश्र राजाजी का रास्ता, जयपुर।
३. श्री गंगाधर द्विवेदी,
   धर्म सभाध्यक्ष (मौज मन्दिर)
   सरस्वती पीठ, ब्रह्मपुरी, जयपुर।

वर्तमान में यह समिति कार्यरत है और इसके द्वारा श्रीशिलामाता मन्दिर की व्यवस्था की जाती है।

सप्तशती का सम्पादन

सप्तशती स्तोत्र का भारतव्यापी प्रचार है। आजकल हिन्दी व्याख्या के साथ इसके पुस्तकाकार और पत्रात्मक अनेक मुद्रित संस्करण उपलब्ध होते हैं। किन्तु मूलपाठ और इसके पूर्वाङ्ग तथा उत्तराङ्ग के क्रम में एकरूपता न होने से विधान के अनुसार पाठ करने वाले साधकों के सामने यह समस्या खड़ी होती है कि किस क्रम और विधान को मान्य किया जाए। इस विषमता को देखकर **'बहुजनहिताय बहुजनसुखाय'** के सिद्धान्त को दृष्टि में रखकर, सभी श्रेणी के पाठकर्त्ताओं के लाभार्थ 'सप्तशती'–विषयक विधान के परिप्रेक्ष्य में, सर्वाङ्गपूर्ण और प्रामाणिक 'सप्तशती–सर्वस्व' को आधार मानकर, उसके क्रम और विधान को लेकर इसके सम्पादन का निश्चय किया गया। क्योंकि अधिकांश विद्वानों ने इसके मूलपाठ और विधि-विधान को एकस्वर से मान्यता दी है। कारण यह है कि 'सप्तशती–सर्वस्व' के प्रस्तोता आगमाचार्य पं० सरयूप्रसाद जी द्विवेदी आगमशास्त्र के रहस्यज्ञ और जाने माने विद्वान थे। उन्होंने इससे सम्बद्ध मूल तन्त्र ग्रन्थों और प्राचीन विद्वानों द्वारा निर्मित सप्तशती की विभिन्न संस्कृत टीकाओं का अन्तर्दृष्टि से परीक्षण और समन्वय करके गौड़ परम्परा के अनुरूप 'सप्तशती–सर्वस्व' की रचना की थी। अतएव उत्तर भारत में उनके इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता दीर्घकाल से चली आ रही है।

वर्तमान में, यह पुस्तक दुर्लभ हो चुकी है। बहुत समय पहले लखनऊ के नवल किशोर प्रेस से इसके दो संस्करण निकले थे। पहला स्वयं ग्रन्थकार द्वारा सम्पादित तथा दूसरा परिवर्धित संस्करण उनके आत्मज म० म० पं० दुर्गाप्रसाद जी द्विवेदी के सम्पादन में निकला था। इसके प्रथम और द्वितीय संस्करण की दोनों प्रतियां 'सरस्वती पीठ' के पुस्तकालय में उपलब्ध थीं। इन दोनों प्रतियों की सहायता लेकर

इसकी रूप-रेखा का निर्धारण किया गया। उसके अनुसार उक्त ग्रन्थ का मूलपाठ, पूर्वाङ्ग, उत्तराङ्ग और पाठ-क्रम तथा विधि-विधान का समावेश किया गया है। मूल के भावानुवाद में विशेष स्थलों पर आवश्यकतानुसार गूढ़ विषयों का विवेचन सरल भाषा में किया गया है। जिससे पाठकों को विषय-वस्तु की संगति के साथ शास्त्रीय तत्त्व को समझने में सुविधा होगी।

प्रस्तावना में मूलपाठ और विधान सम्बन्धी अपेक्षित ज्ञातव्य बातें संक्षेप में लिखी जा चुकी हैं।

इस प्रसंग में यह बतला देना उचित होगा कि सप्तशती के मूलपाठ के साथ हिन्दी में ही नहीं बंगला, गुजराती और मराठी में भी कई अनुवाद हो चुके हैं। किन्तु मूलपाठ में पाठान्तर की संक्रामक व्याधि सर्वत्र विद्यमान है।

इसके अतिरिक्त इस पुस्तक के कई छन्दोबद्ध हिन्दी पद्यानुवाद भी मेरे देखने में आए हैं जिनसे स्वान्तः सुखाय काव्य रस का आनन्द तो लिया जा सकता है, किन्तु पाठ की दृष्टि से वे निरर्थक हैं। अभीष्ट फल के लिए तो मूल-संस्कृत श्लोकों के पाठ करने का ही विधान है। जैसा कि इस श्लोक से ज्ञात होता है :—

'श्रुतं हरति पापानि तथारोग्यं प्रयच्छति।
रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम॥'

प्रस्तुत संस्करण का ट्रस्ट द्वारा प्रकाशन

श्रीशिलामाता ट्रस्ट के अध्यक्ष महाराजा कर्नल सवाई भवानीसिंह जी की इच्छा थी कि सप्तशती स्तोत्र का एक सुव्यवस्थित, लोकोपयोगी एवं सुसम्पादित संस्करण निकाला जाय। इस निर्णय के फलस्वरूप इसके सम्पादन का दायित्व ट्रस्ट ने मुझे

सौंपा और मैंने कार्यारम्भ कर दिया। अनन्तर, महाराजा साहब ने, जो इस ट्रस्ट के चेयरमैन और भगवती के परम भक्त हैं, यह इच्छा प्रकट की कि इस ग्रन्थ का प्रकाशन हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं के अनुवाद के साथ होना चाहिए। इसके साथ ही, पूजा-पद्धति एवं विधान का भी अनुवाद दे दिया जावे तो इसकी उपयोगिता बढ़ जावेगी। साथ ही, ऐसा होने पर देश एवं विदेश के लोग जो भगवती के श्रद्धालु भक्त हैं—और दुर्गा पाठ में आस्था एवं रुचि रखते हैं, समान रूप से इसका लाभ ले सकेंगें। उनका यह सुझाव उपयुक्त और सामयिक होने से ट्रस्ट ने सवसम्मति से इसे स्वीकार कर लिया और इस योजना के अनुसार ही इस कार्य का शुभारम्भ किया गया एवं श्रीशिलामाता की कृपा से यह कार्य सम्पन्न हो गया। ट्रस्ट ने इसके प्रकाशन के लिए आवश्यक धनराशि के लिए व्यवस्था करने की स्वीकृति भी दे दी।

मूल ग्रन्थ के आदि में 'जगदम्बा जयवाद' नाम की गीति-प्रधान स्तुति म० म० पं० दुर्गाप्रसाद जी द्विवेदी की 'दुर्गा पुष्पाञ्जलि' से ली गई है। साथ में 'देव्यथर्वशीर्ष' का भी हिन्दी भावानुवाद के साथ संयोजन किया गया है जो कि महत्त्वपूर्ण और फल-प्रद है। सुविधा की दृष्टि से तीनों चरित्रों के मन्त्रों की श्लोकानुक्रमणिका भी लगा दी गई है। कुल मिलाकर इसे उपयोगी बनाने में कोई कोरकसर नहीं छोड़ी गई है।

ग्रन्थ की प्रेस कापी मेरी ज्येष्ठ कन्या शारदा शर्मा, एम. ए., साहित्यरत्न ने बड़ी तत्परता से शुद्ध-सुवाच्य अक्षरों में तैयार की है। अन्य उपस्कर सामग्री के संग्रह और लेखन का कार्य मेरे कनिष्ठ पुत्र दिनेश द्विवेदी, बी. काम., एम. ए., धर्मशास्त्राचार्य ने किया है, तदर्थ दोनों के दीर्घायुष्य और उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं। मूल श्लोकों का अंग्रेजी अनुवाद पार्जिटर महोदय की पुस्तक से साभार लिया गया है, तथा पूर्वाङ्ग-उत्तराङ्ग आदि

का अंगरेजी अनुवाद लेखक-पत्रकार श्री जगदीश चतुर्वेदी ने किया है तथा इसके संशोधन और परिवर्धन में सवाई मानसिंह द्वितीय के म्यूजियम स्थित पुस्तकालय के सुयोग्य अध्यक्ष, पुरातत्त्वज्ञ, सुहृदवर पं० श्री गोपालनारायण जी बहुरा का योगदान रहा है। अतः इन दोनों के प्रति आभार प्रकट करता हूं।

ट्रस्ट द्वारा धार्मिक साहित्य के प्रकाशन की योजना के शुभारम्भ में ट्रस्ट के वरिष्ठ सदस्य तथा जयपुर के प्रसिद्ध साहित्यानुरागी ठा० श्याम करण जी, भूतपूर्व आर. ए. एस. का सहयोग प्रशंसनीय रहा है। मुद्रण कार्य की व्यवस्था तथा प्रेस सम्बन्धी गतिविधियों के संचालन में जयगढ़ ट्रस्ट की डायरेक्टर व पुरातत्त्वविदुषी डा० चन्द्रमणि सिंह तथा ट्रस्ट के सचिव, आचार्य श्री गोवर्धनलाल जी भट्ट, एम. ए. ने अपेक्षित सहयोग किया है। एतदर्थ इन तीनों के प्रति आभार प्रदर्शित करता हूं।

'पण्डित प्रिन्टर्स' के संचालक श्री ललित मोहन शर्मा, बी० कॉम० ने रुचि के साथ मुद्रण कार्य सम्पन्न किया है—तदर्थ उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं।

अन्त में, मानव सुलभ त्रुटियों के लिए विज्ञजनों से क्षमा चाहते हुए आशा करता हूं कि यदि इसके द्वारा अध्यात्म साधना के मार्ग में रुचि रखने वाले भगवती दुर्गा के भक्तों को थोड़ा भी आत्मसन्तोष मिल सका तो मैं अपना श्रम सार्थक समझूंगा।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्॥

॥ इति शिवम् ॥

प्राच्य-शोध-संस्थान,
सरस्वती पीठ,
ब्रह्मपुरी, जयपुर
दीपोत्सव पर्व,
वि० सं०२०४३, ई० सन् १९८६

—गङ्गाधर द्विवेदी

INTRODUCTION

India, from times immemorial, has been the centre of spiritual practice. For the invocation and development of inherent human spiritual powers, no better way can be imagined. Indian saints and thinkers have preached devotion to God for human welfare and attainment of the fourfold objectives of *Dharma* (religous piety), wealth, satisfaction of desires and ultimate salvation. Deriving their inspiration from these authoritative seers, sanctified through penance, adorers and devotees have practised the worship of the "attributive" and the "non-attributive" (*Saguna* and *Nirgun*) and achieved measures of success, far beyond expectations. The light of that divine knowledge which spread throughout the world is in emanation in an unbroken continuity even today. People steeped in that faith are still deriving their desired benefit according to the measure of their belief and devotion. The concept of a life full of peace and happiness for mankind can never materialise at any place, time or circumstance without taking recourse to spiritual powers. Hence the Upanishadic saying, "Self is never attainable without spiritual power"[1]

As a matter of fact, attainment of the true benefit of manly endeavour is difficult and impossible without attaining power. Therefore the followers of all religious cults have unanimosuly upheld god-worship as the most efficacious means of the highest development of manhood.

In our country, the worship of both *Saguna* and *Nirguna* have fully flourished, and they supplement and complement each other. But in either method of worship, following one's own proneness without regard to one's eligibility, there is more possibility of doing

1. 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।'

harm to oneself rather than any good. Philosophers and masters have therefore advocated the compulsory need for a guide or a 'guru, in the field of devotion. So much so, that without being initiated or taught by a masterly "guru", all worship would be rendered useless. In the Vedic or the Tantrik system or in the Vedic–cum–Tantrik system, the 'guru' (master) occupies the place of highest honour. The Vedas declare that for the knowledge of divine mysteries, sitting at the feet of a 'guru' is compulsory and the ultimate knowledge is impossible without doing so.[2]

The evolution of Indian knowledge, or rather the revelation of our scriptures has been based on the master-pupil tradition. A verse occuring in the "*Svachchand Tantra*"[3] also supports this view stating that Lord Sadā-shiva himself has adhered to the master-pupil tradition in revealing the Tantras. The *Kalpa-sutra* also mentions it clearly that the ultimate Lord Shiva, on being constantly questioned by his spouse goddess Bhagwatī, expounded the Vedas, the eighteen Purānas and all the systems of philosophy by his words and deeds and revealed the five "Āmnāyas" through his five mouths.[4]

For the worldly man, the method of *Saguna* worship is easier, more convinient and more profitable in that its benefit can be reaped by dint of a small amount of labour. Under this method, the five chief gods named Shiva, Shakti,

2. 'तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्' ॥
3. 'गुरुशिष्यपदे स्थित्वा स्वयमेव सदाशिवः।
प्रश्नोत्तरपरैर्वाक्यैस्तन्त्रं समवतारयत् ॥
4. 'भगवान् परमशिवभट्टारकः श्रुत्याद्यष्टादशविद्याः सर्वाणि दर्शनानि लीलया तत्तदवस्थापन्नः प्रणीय संविन्मय्या भगवत्या भैरव्या स्वात्माभिन्नया पृष्टः पञ्चाम्नायान् प्रणिनायेति।'

Vishnu, Ganesh and the Sun have been prescribed by the Scriputres to be worshipped separately or jointly as a body of the Divine Five (*Panchayatan*) according to one's faith and preference, treating the other gods as subsidiary to the Preferred One. Worship of the five deities is scarce in the present age and mostly one is upheld for devotion. The secret of the success of Idol-worship or the worship of God in person, lies in one's faith and belief. Without such a faith, the desired results will hardly accrue. Goswāmī Tulsīdās too had this in view when he professed the worship of Goddess Bhawānī and God Shankar as embodiments of Faith and Adoration, at the outset of his epic, the Rāmcharitmānas.[5]

The eight-fold Yoga propounded by Maharshi Patanjali for the fulfilment of Yogic performances—by adhering to *Yama, Niyama, Asana, Pranayama, Pratyahara, Dharana, Dhyana* and *Samadhi*—has prescribed one indepedent formula which is equally necessary and important not only for the attainment of Yoga, but also for devotion and worldy accomplishment. This formula lays down that the attainment of Yogic and devotional practices is possible only when they are performed with reverence and faith continuously for a long time without any interruption.[6]

From the above, it can easily be inferred that for achieving the grace and pleasure of one's god of devotion, the desired results cannot be gained unless that worship or sacred rite is performed as per regulations with due restraint and reverence. It is often observed that owing to one's own ignorance, one does not adhere strictly to the prescribed scriptural rules and

---

5. भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम् ॥

6. स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः।

consequently deprives oneself of the fruition of desires. This is both unfair and condemnable. It is essential in this context to point out that the mental piety and satisfaction attainable through the practice of *Sagun*-worship, paves the way for the realisation of *Nirguna* Brahman. Therefore our preceptors have propounded its necessity as a preparatory course. The eminent grammarian, Acharya Bhartrihari in his *Vākya Padīya* has thus expressed the purpose of this course[7] : The training imparted to children for learning the three R's, is only a preparation for the development of their taste for knowledge because the realisation of *Shabda Brahman* as the essence of truth is possible by means of the imaginary and the ingenuine. In other words, the non-attributive and the formless Ultimate Brahman is recognised and realised only when the practice of *Saguna*-worship has fully been strengthened. It is thereafter that the real meaning of the absolutist Shrutis like—"The Brahman is one and unique", "Here there is not the least multiplicity", "All this is contained in God", "That thou art" and "I am the Brahman"[8]—is intelligible.

WORSHIP OF SHAKTI

In our country, the goddess Durga occupies the highest honour as the embodiment of the Ultimate Brahman, since ages past. Truly speaking, for the men of this world, there cannot be a better refuge than this merciful Mother-goddess for attaining worldly pleasures, excellence and ultimate salvation. Where else can one find the power of bestowing both happiness and salvation other than this affectionate Mother ?[8]

---

7. एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म । नेह नानास्ति किंचन । ईशावास्यमिदं सर्वम् । तत्त्वमसि । अहं ब्रह्मास्मि ।

8. 'उपायाः शिक्षमाणानां बालानामुपलालनाः । असत्ये वर्त्मनि स्थित्वा ततः सत्यं समीहते ।।

The success and efficacy of the worship of Mahamaya Durga, the mother of universe, and for the resultant fulfilment of desires in many ways, the recital of the seven-hundred versed *Durga-patha* is popular all over India for thousands of years past. In the various provinces, cities and even villages, this Saptashati recital is religously performed for warding off misfortunes and the attainment of cherished desires. This recital is verily known as *Kalpa-vriksha* or a tree under which all wishes are miraculously fulfilled. Devotees steeped in faith attain all that they desire through this recital. There can be no better evidence of its popularity than this. Millions and crores of people still adhere faithfully to this belief even in this materialistic age of science.

During the *navratras*, occuring in the lunar months of *Chaitra* and *Ashvin*, the family chiefs perform this devotional worship either on a small or a large scale. For attaining the grace of the *Bhagwati*, one recites the Saptashati himself on this special occasion or being unable to do so he employs some scholarly brahman for the recital and the same benefit accrues to him. Thus for getting riddance from all miseries and misfortunes, this is an infallible instrument. Worthy of mention here is one more fact that, as compared to other Pauranic hymns, Saptashati has its own independent existence and significance. Although a part of *Markandeya Puran*, it is still regarded eternal like the Vedas and not the product of human effort. Just as Vedic *mantras* are revealed by divine inspiration to *rishis*, in their state of Samadhi, similarly this seven-hundred versed hymn was attained as a revelation by *Maharshi* Vyas and that is why it is known to be authored by him. Many an evidentiary statement is available in authentic books.

The learned author of 'Saptashati Sarvasva',reverend Pandit Sarayu Prasad Dwivedi

has offered a scientific explanation in confirmation of this fact which may be quoted here to quell any further doubts.[10]

It is abundantly proved by the evidence given above that this hymn in seven hundred verses occupied a place of unmatched honour in ancient India. Not only so, the hymn was regarded in such a high esteem that calligraphic copies were painstakingly procured for performing its devotional recital in a regular and universally accepted ritual. But with the advent of printing and change of times, this practice is almost lost. There are no calligraphers now to make out hand-written copies and consequentially printed books have a compelling command for all.

For the last forty years or so, especially in the post-independence period, every sector has been caught in a blind vortex of change. The flux of this wanted or unwanted change in the social outlook for education, religon and culture has, besides other things, dealt such a shocking blow to the fundamentals related to traditional beliefs that their original form started rolling downhill in a gradual deterioration. Being so, the harm rather than the good was the result. It has especially hurt and harmed our religon and culture and our life style, the result whereof is before us all to see. India's new generation is completely shorn of Indian traditions, isolated and ostracised. The deep crisis of faith and conduct looms large over the new generation. Irrespective of what somebody agrees to or denies, the fact stands out that our new generation has but to suffer the consequences of irrational attachment to, and a blind following of, the

---

10. 'अथेदं सप्तशतीस्तोत्रं मार्कण्डेय उवाचेत्यारभ्य सावर्णिर्भविता मनुरित्यन्तं त्रयोदशाध्यायात्मकं मार्कण्डेयपुराणान्तर्गतं सर्वकामदुघं न केनचिन्निर्मितमिति। किंतु वेदवदनाद्येव ।

western culture, and there appears to be no riddance therefrom in the near future.

METHODOLOGY

The Hindi version of this Introduction contains a detailed discussion on the methodology of Durga worship, only a glimpse of which is given here. The *Tantra-shastra* maintains that there is a uniformity in *Brahman* and *Maya*. The term *Maya-Beej* is used to denote *Brahman* in conjunction with His *Maya*. Shankaracharya has eulogised the Goddess of *Maya-beej* as Bhuvaneshwari. From the *Maya-beej* have grown the Energies of Will, Cognition and Activity known respectively as Raudri, Jyeshtha, and Vama. These Energies later came to be named as Mahakali, Mahalakshmi and Mahasaraswati. The *Mantras* related to these Triple Energies are *Navarna* and *Saptashati*. Both the *Navarna* and the *Saptashati* systems of worship are regarded as the main ones, treating the other as subsidiary. When predominance is given to the *Navarna* system, Saptashati is recited as its component. Others who are initiated through the *Saptashati Mala Mantra* follow the method given in the Triple *Rahasyas* and utter the *Navarna Mantra* in the beginning and the end of the Saptashati recitation. Both these methods have been dealt with in the chapter on Keelak.

SAPTASHATI OR SAPTASATI ?

What is the real name of this hymn; Saptasati (seven satis) or Saptashati (seven hundred verses), as both the names are frequently mantioned ? The *Meru-Tantra* prescribes the use of seven hundred *Mantras* for the fulfilment of six primary duties The name Saptashati is therefore apt and proper. But the Saptashati Hymn also narrates the deeds of seven *Satis* and hence the name Sapta-Sati. In Her first *charitra* are Kali, Tara, Chhinnamasta, Sumukhi, Bhuvaneshwari, Bala and Kubja, the

second *charitra* includes Lakshmi, Lalita, Kali, Durga, Gayatri, Arundhati and Saraswati and in the last *charitra* are the names of Brahmi, Maheshwari, Kaumari, Vaishnavi, Varahi, Narsinghi and Indrani Thus there are twenty one *satis* which are collectively reduced to the seven, namely Nanda, Shatakshi, Shakambhari, Bhima, Raktadantika, Durga and Bhramari. The functions of these goddesses have been described in Murti-Rahasya. Thus, there is an independent justification for both these names.

ORDER IN RECITATION

Different orders have been prescribed for its recitation in the various *Tantras*. The Gaur, the Keralite and the Kashmiri traditions account for these differences. One will do well to follow his own tradition. However a brief mention of the order prescribed in some important *Tantras* is made here. The *Marichi Kalpa* lays down that the first to be recited is Ratri-sukta. The *Vedagam* says that Kavach, Keelak, and Argala have to be recited before the Saptashati hymn. The *Chidambar Samhita* maintains that the recitation of Keelak and Kavach should be followed by Saptashati and the three Rahasyas and the *Navarna Mantra* has to be uttered in the beginning and the end.

DAILY RECITATION

As a part of daily worship, the devotee should finish his daily chores, perform his *Sandhyospasana*, sip water from his palm and focussing his mind on Shridevi prepare a nine-bracketed *Yantra* for Durga–worship. After this worship he should recite the Kavach, Argala, Keelak and the Ratrisukta. He should utter the *Navarna Mantra* 108 times before and after the Saptashati recitation. The Devi-Sukta and the Rahasya-trinity should then follow. The Ratri-Sukta and the Devi-Sukta are both Vedic and Tantrik. One should choose from them according to his ability of correct pronunciaction.

WHEN TO RECITE

According to the *Marichi-Kalpa*, the Goddess should first be invoked and recitation should start on the 8th day of the first fortnight of the lunar month and continued till its 14th day, with one more recitation on each successive day. A *havan* of the Saptashati Mantras has to be performed with the Ratri-Sukta and the Devi-Sukta.

SHAPODDHAR (Lifting of the Curse)

The Tantrik method of lifting the curse upon Saptashati recitation is as follows : The thirteenth and the first, the twelfth and the second, eleventh and third, tenth and fourth, ninth and fifth, eighth and sixth—these chapters should be read at one sitting respectively and the seventh chapter has to be recited twice thereafter. Recitation in this order results in the lifting of the curse.

UTKEELAN

The recitation of the second *charitra* and the first and then a reading of the third *charitra* thereafter completes the process of *Utkeelan* (unfixing or unlocking—literally extraction of the nail). The author of '*Saptashati Sarvasva*' prescribes a shorter course for a devotee who cannot afford time for a complete recitation· (See details in Hindi Introduction.)

SPECIAL RULES FOR RECITATION

The *Varahi Tantra* and the '*Chidambar Samhita*' lay down rules for observance during recitation. The devotee should first offer scent, rice, flowers, incense, lamp and *naivedya* (offering) to the goddess and bow before her in the *Yonimudra*. Then he should recite the *Navarna Mantra* and place the book on a wooden stand. While reciting he should not shake his head, sing loudly, mince words in a hurry or mispronounce. He should rather try to avoid these

six lapses. If the text contains less than one thousand verses, one can recite from memory, but he must have a book before him if the number of *shlokas* exceeds a thousand. As the Saptashati contains less than a thousand *shlokas*, it can be recited even without a book.

THE RISHI, CHHAND etc.

Brahma is the *Rishi* for the first *charitra* Gayatri is the *Chhand* (metre), Mahakali the goddess, *Vagbhava* is the *beej* (seed-letter) and fire is the element and it is appropriated for religous purpose. For the second *charitra* the *Rishi* is Vishnu, the *Chhand* is ushnika, the goddess is Mahalakshmi, *Maya* is the *beej* and *Vāyu* is the element. It is invoked for attaining wealth. The *Rishi* for the third *charitra* is Shankar, the *Chhand* is trishtup, Mahasaraswati is the goddess, *Kam* is the *beej* and sun the element. It is invoked for the fulfilment of desires. The directions given in the Rahasyas are to be followed for the attainment of *Dharma*, *Artha* (prosperity) and *Kam* (fulfilement of desires)

DAILY WORSHIP OF THE TRINITY

The directions given in the commentary on the three Rahasyas have been repeated here. They call for a strict adherence.

CHANDIKA : NATURE AND SIGNIFICANCE

The Saptashati recitation begins with a prayer to Chandika. As already explained, Chandika herself has been identified with the ultimate Brahman, as the Brahman's nature is the collective form of Cognition, Will and Activity and Chandika embodies the triple Energies of Mahakali, Mahalakshmi and Mahasaraswati. Overpowering Wrath and awe-inspiring Force characterise Chandika. Etymologically, that is the meaning of Chandika, as in '*Chand Bhanu*', or '*Chand Vat*'. The Sun (*Bhanu*) and the air (*Vat*) are also deemed akin to Brahman owing to their dreaded anger. This is also corroborated in the *Bhuvaneshwari Samhita* and the Vedas.

THE NAVARNA MANTRA ANALYSED

The nine-lettered *Navarna Mantra*[1] as explained in the 'Devyatharvashirsha', is the bestower of happiness and co-existence with the blissfull Brahman, upon the devotees. This *Mantra* is incomprehensible to those uninitiated in the *Mantra Shastra*. It is stated in the *Naishadhiya Charita* by Shri Harsh that following of the indication process is a compulsory must for upholding the dignity of the *Shastra* and maintaining the piety of religon. It is considered as the *Shakti Mantra* par excellence. Chandika is the repository goddess for the *Navarna mantra*. The real meaning of this *Mantra* can only be obtained from the mouth of a masterly guru. This *mantra* has to be recited 108 times in the beginning and the end of the Saptashati along with its six-membered *Shadang—path*. The Energy-trinity has to be meditated upon simultaneously by keeping the mind unsullied and sanctifying the rosary (*Japmala*)in worship, preceded and followed by 108 recitations of the *Navarna mantra*, as recommeded.

SHRI SHILADEVI IDOL

The royal palaces of the old capital of the princely dynasty of Kachhawahas, Amber—now a suburban district of Jaipur—have on their right side a massive and magnificent temple of Shri Shiladevi, wherein an icon of goddess *Mahish-mardini* Durga is the presiding deity in a marble sanctum sanctorum. Sculpted in polished granite, this life-sized eight-armed idol is highly graceful, testifying to the specialised skill of the local talent in sculpture. The idol stands sculpted out of a large slab of granite. Above the head of the goddess, the icons of gods riding on their various live vechicles have been carved on a smaller scale appearing from

---

1. The *Mantra* reads as follows : ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ।

left to right as Ganesh, Brahma, Shiv, Vishnu and Saraswati. Shiladevi's right hands are holding from top to bottom, scimitar, arrow, trident and the fourth one is in a boon-giving gesture. Her left hands hold shield, bow, a severed head and with her third hand she is bestowing protection. The passage of centuries has disfigured these sculptures so much that it is difficult to recognise the various gods and weapons, and that raises doubts. The author has himself closely observed the sacred idol, by special permission, and the above description is based on direct observation. The goddess Bhagwati is mounted on her lion. As the idol's costume reaches upto her feet, the lion is hardly visible.

The face of the icon is a bit leaning towards the left. Many anecdotes are told about how it happened, and they will be dealt with a little later. But the secret appears to be that it is a lenient and bounteous sidelong glance at her devotees. As its history goes, it has not only been an idol full of miracles, but also that since the beginning, it had been a one-man deity.

HISTORY OF THE IDOL

This idol, or the granite-rock out of which it was carved, as per available history, was brought by Maharaja Man Singh, the famous Amber Ruler and army commander of Akbar,the Mugal Emperor, from Yashohar or Jessore, East Bengal, presently Bangladesh. Situated there about twenty miles south of Taki (or Dhaka), it used to be the capital of Raja Pratapaditya. Probably, he was in the Kayastha dynasty. However, not much of history is available about the Yashohar kings. Kayastha descendants of Raja Chandranath Rai had their head-quarters in the nearby aroea around Jessore or Yashohar.

When Maharaja Man Singh started his victorious campaign for bringing Bengal under Mughal dominaton, chiefs of states falling in the way accepted defeat and subjugation. Raja

Pratapaditya and his chief vassal Raja Kedarnath Rai, leaders among rebels, had to surrender on the battle-field. After Pratapaditya, who died shortly later, Kedar become the ruler of Jessore. As already pointed out, no authentic historical account about Pratapaditya is available. 'Matsyadesh ka Itihas' records that Maharaja Man Singh defeated Kedar in 1604 A.D., and occupied the territory of Jessore. Shiladevi, also known as Yashohareshwari, was the household deity of Raja Kedar. He was an ardent devotee of this goddess and with the bestowal of Bhagawati's grace, used to worship her with utmost devotion.

'Matsyadesh ka Itihas', compiled by the late Pandit Madhu Sudan Ojha, a manuscript copy of which is available in the library of Maharja Sawai Man Singh II Museum, Jaipur, is the source material for the following details and anecdotes given here in brief:

1. A battle was fought between Man Singh and Pratapaditya. Pratapaditya was a complete devotee of Shiladevi. When he prayed for victory in the battle,the goddess turned her face. Her posture is frozen in profile ever since.

2. A human sacrifice was daily performed before Shiladevi. But Man Singh stopped offering human sacrifice, and the Devi turned her face. When, in a dream, the king knew about it he started sacrificing a goat before the goddess.

3. The said idol was not brought from Yashohar, the capital of Pratapaditya, but from Raja Kedar's abode. This fact is corroborated by many other sources also.

4. The Devi always kept a blessing hand above Raja Kedar and he was quite certain that no enemy could vanquish him. When Man Singh came to know about this, he performed a ritual and the Devi's grace smiled upon him.

5, The Devi had warned Kedar earlier, that as and when he uttered the word 'go' before

her, she would forsake his place. On a certain day when Kedar was worshipping the goddess meditatively, the Devi appeared before him in a little girl's guise and started playing childish pranks and whining. Thus teased, Kedar asked the girl to go and let him perform the worship. Hearing the word 'go', the Devi left Kedar. Kedar then immersed the 'Shila' in the sea.

The Devi appeared before Raja Man Singh in a dream and ordered him to draw her out of the sea and take her with him. Kedar on his side ordered his minister to make peace with Man Singh and offer him the princess in marriage. This was done and Kedar was given back his throne.

Raja Kedar, after his defeat, proposed to Man Singh that he was willing to part with this highly treasured idol of Shila Devi if he got his territory back. However he made it a necessary condition that the Devi will get the same methodical worship to which she has been used. The victorious Maharaja acceded to this request.

From the sequence of such events in history, it appears that the idol had once been immersed in sea. After a compromise between the two warring chiefs, and with Kedar's consent and direction, it was recovered from the bottom of the sea. After his daughter's marriage with Man Singh, Kedar had become his father-in-law. That is why he sent his household brahman priests for the deity's worship along with the idol and Man Singh brought those priests also with him. These ten Bhattacharya brahman families were given the charge of performing Shila Devi's worship. These families settled in Amber and their descendants are still living there. Out of these priests, worthy of mention is the name of Pandit Ratnagarbha, who was the author of the commentary entitled '*Vaishnavakoot Chandrika*' on the 'Vishnu Puran'.

A copy of this book written in 1702 V. E. is stocked in the Pothikhana collection.

According to the 'Matsyadesh Ka Itihas' and other sources, it may be concluded that formerly it was only a slab of granite charged with miraculous powers, and was worshipped as such. On being brought to Amber, the local sculptors carved it in its persent shape. Another story about this polished granite rock is also in circulation, namely that it was brought by Raja Pratapaditya from Brajland and was preserved there in trust on behalf of the Hindus of Brajland. It is said that Kansa, the tyrant king of Mathura, killed his sister Deoki's offsprings by striking them against this rock. Whatever may have transpired in the past, at present not much more than guesswork is possible.

Surya Mall Mishran in his *'Vamsh–Bhaskar'* has given yet another colour to this story, but it seems to be based on unfounded anecdotes and therefore it is not mentioned here.

Hari Nath, son of the famed poet Nar Hari recited two couplets in the eulogy of Maharaja Man Singh, which being meaingful are reproduced here :

बलि बोई कीरति लता कर्ण लगाये पात ।
सींची मान महीप ने जब देखी कुम्हिलात ॥

जात जात गुन अधिक हो अजहूं सुनी न कान ।
राघव वारिधि बाँधियो मार्‌यो हेला मान ॥

The first couplet says that the creeper of fame (or philanthropy) was sown by Bali and Karna saw it growing leaves. But when Raja Man Singh saw it withering away, he watered it back to life. The second one says that it has never been heard so far that descendants ever surpass their ancestors in virtue. But (whereas) Ram (in the line of Raghu) had to build a bridge over the sea (for conquering Lanka), Raja Man had only to shout for conquering Hela. (The term मार्‌यो हेला contains a pun. It means con-

quering the place known as Hela, as also shouting or calling somebody aloud).

The facts about Shri Shila Devi brought to light in 'Man Vansh Varnan', an 18th century poetic work by an anonymous writer are worth knowing and should be authentic being contemporary.

(Please see the 4 Sanskrit verses in Hindi Introduction)

"Having heard about the advance of Shri Man Singh who had destroyed the multitudes of his enemies with the strokes of his sword, the king of the land of Vanga, out of fear, deposited (the idol of) Ambika under the deep waters of the sea. Being pleased with the odour of blood washed off his (Man Singh's) sword, the Devi appeared before him in dream and quoth, 'O brave one, enjoy the kingdom and carry me to your abode.'

"Having corquered in no time the insolent rival rulers of islands, he marked their homelands with his lofty five-coloured banners. Having worshipped the kingdom-bestowing Deity, he brought Her home by gently digging Her out of the sea, like a vast treasure of gems."

"On an auspicious day, the highly prospersous king installed the Devi with rich proceedings of worship and sacrificial dilations in a beautiful and illuminated sanctum adjacent to his own palace, situated on a hillock on the bank of a lake. He was well-versed in subduing the impudent kings with his frowning brow."

"Surrounded by unscalable hill-tops, the city of Amber houses the Shila Mata where Mahavata (Mavtha lake), with shady banyan trees lining its banks, washes her feet secretly. The town is further graced by Maharaja Man Singh of an unwavering mind and a pastmaster in the art of war, who is very much like the celestial king Indradev, replete with the abun-

dant wealth of his kingdom, a prosperous ruler of the earth."

SOME ROYAL PROFILES

1. MAHARAJA MAN SINGH

The eldest son of Raja Bhagwant Das of Amber, Maharaja Man Singh was born on the 13th day of the first fortinght of the lunar month of Paush, in V. E. 1600 (1543 A.D.) at Amber. His full name alongwith the royal titles was Hafta-Hazari Maharaja Man Singh, Mirza Raja, Farzand Daulat-e-Mughalia. There was no other king with such a nimbus of glory and valour in the entire Mughal era. He was a pillar of strength for the Hindu culture and religon. In his reign, his subjects lived happily and comfortably. He was besides being the chief commander of Akbar, prominent amongst the nine gems of Akbar's court. The entire credit of the expansion of the Mughal empire upto provinces far and wide, goes to him.

The famous battle of Haldighati was fought on the Mewar soil on the seventh day (second fortnight) of Magh in V. E. 1633 (1577 A.D.) Colonel Todd has recorded this date as the seventh of Shravan (second fortinight) in 1632 V.E. (July 1576 A. D.), which is not acceptable to all. After defeating the Maharana decisively, Man Singh looted and sacked the Chittor fort and town. Availing the opportunity, Man Singh brought the idol of Shri Giridhar Gopal, the beloved deity to which Mira Bai was devoted, to Amber, which he installed as Jagat Shiromani in a magnificent temple of that name at Amber.

Emperor Akbar appointed Prince Man Singh as the ruler of Punjab (Sialkot) in recognition of this historic victory over Chittor. Thereafter he had a string of victories over Sindh, Malwa, Kabul, Bengal, Orissa and other princi-

palities to his credit by dint of his keen foresight and unmatched bravery, and he was the most important personage at Akbar's court and acted as his viceroy over the whole empire. The full story of his glorious triumphs can provide good subject-matter for a history book on its own. Only a fleeting glimpse of his greatness and valour is therefore shown here. Perhaps nobody born after him in the country could rise upto as much height and greatness as Man Singh. His unchallenged supremacy in valour, warriorship and political insight remains unique in history.

On Margsheersha 7th (second fortnight) in the year 1646 V. E., he returned to Amber at the death of his father. He ascended to the throne of Amber amidst a grand coronation ceremony. It may be remembered here that the title of Maharaja was conferred on him by Akbar himself. No other courtier held a rank senior to him at the royal court. Abkar himself and his successors after him were all held a little cowed down by Man Singh's wide-spread influence and administrative acumen. They themselves were under the spell of Man Singh's personality.

The present Shila Mata of Amber was brought from Bengal by Man Singh and was installed at Amber, for which all credit goes to him. The opportunity to present this sketchy narration of his large-hearted character was therefore gratefully availed.

The Sanskrit verse composed by the present author (appearing in the Hindi Introduction) in a eulogy to the royal Kachhawaha dynasty related to this very event may be quoted here. Rendered in prose it states :

'Foremost amongst the brave Kshatriya chiefs and a warrior every inch, the famous and glorious king of Amber, Maharaja Man Singh, vanquishing the enemy kings of Bengal on the

battle-front, procured thereform Bhagwati Shila Amba and reverently installed her at Amber.'

2. MIRZA RAJA JAI SINGH

As the eldest son Jagat Singh had died in the time of Maharaja Man Singh, his second son Bhav Singh succeeded him. After him Mirza-raja Jai Singh, grandson of Jagat Singh, ascended to the throne of Amber on the first day of Ashadh, V. E. 1678 (1622 A. D.) Mirza-raja Jai Singh was an extra-ordinarily talented king. A multi-lingual scholar of Persian, Turkish, Sanskrit and Urdu, he had a thorough knowledge of history, geography, mathematics and politics, besides being equally expert in administration and war-fare. He was a great conoisseur of arts. During his reign he acquired a rich collection of literary manuscripts, paintings, weapons, and objects of art.

Well-versed in Sanskrit and its rich and abundant literature, he had a keen interest in the Hindi language. His contribution towards the enrichment of Sanskrit and Hindi literature and their widest propagation will ever remain unforgettable. Rather, a better and more appropriate way of expressing this, would be to say that the entire credit for the great awakening and revitalising of the Dhundhar region in the field of education and culture must be ascribed exclusively to Mirza-raja Jai Singh.

His fame as a great patron of learned men, poets and artists had reached far and wide. The prestige and glory of the kingdom of Amber during his reign, was at its prnnacle. The state had reached a very high level in the field of education and art. Shining in the lustre of the Mirza-raja's versatile genius, the prosperity of Amber state was at its zenith. Gopal, son of poet Damodar Tailang of Panch-nad (Punjab), has given an eye-witness account in his poetry book named '*Jai Champu*'. This Sanskrit poem

gives a very vivid and graphic description of the Raja's character and the enviable prosperity of the flourishing state. In the beginning of this work, what he says about the object of his verse, is highly significant. (Sanskrit verses are given in the Hindi Introduction, only their meaning is given here) :

'Jai Singh, son of Maha Singh will give cheer to his descendants like a *kadamb* flower washed in rain and is illumined like a lamp for dispelling the darkness (of fear) created by enemies. He has been born victorious on this earth, therefore he has rightly been named 'Jai' (victory) Singh.

'My mind is eager to relate with the utmost of pleasure the qualities of the extra-ordinary character of Raja Jai Singh, being inspired by feelings of affection. Therefore I am authoring this *champu* (eulogy) for bringing to light his fame and glory by generously employing similes, puns, paradoxes and metaphors etc.

'It is a unique feature of this *champu* that like the poets of old, I have not narrated any tales heard about past kings. On the other hand, I have been an eyewitness to the king's deeds and character and with a cheerful mind I am recording some illustrative specimens, keeping in view people's love and esteem towards their king.'

He had extended patronage to a number of renowned poets of Hindi and Brajbhasha. Promiment amongst these are the names of Bihari, author of *Bihari Satsai*, his nephew (maternal) Kulpati Mishra, Narottam Das, Hari Jiwan Mishra, Pran Nath Shrotriya, and Nandan Kavi etc. Bihari and Kulpati Mishra, besides being eminent Hindi poets, were also favourite tutors of prince Ram Singh. Bihari also taught the maids of the palace's inner chambers. He was called form Agra to Amber by the Mirza-raja. Narottam Das, a Sanadhya brahman from Rampura was the Raja's court-poet and a resident of Madhya Pradesh.

The famous author of *'Ganga Lahari'*, *'Ras Gangadhar'* etc, poet Panditraj Jagan Nath was a Tailang Brahman. Raja Jai Singh had been very much impressed by the scholarly talent of this brilliant poet, ever since he was a student at Kashi. On completion of his education, the Mirza-raja brought him from Kashi to Amber. At the Raja's instance, the Panditraj headed and ran the Sanskrit Vidyalaya of Amber. He had also a full command of Urdu-Persian and defeated a Kazi of Amber in an academic debate. The Mirza-raja was very much pleased at this and took him to the royal court at Delhi. Shah Jahan received him with due honour and appointed him tutor for Dara Shikoh. In his epic 'Bhamini Vilas' the Pandit-raj has alluded to Shah Jahan thus : दिल्लीवल्लभ पाणिपल्लव तले नीतं नवीनं वय : । 'My youth was spent under the lotus–like hand (benevolent patronage) of the Lord of Delhi.'

The Mirza-raja's love for Sanskrit was unbounded. Often he used to go to Kashi for participating in the symposia of Sanskrit scholars. He had established a Sanskrit school in Kashi, where both his princes undertook learning in the divine language. A stone inscription at Panch–Ganga Ghat (1612 A. D.) testifies to his visits to Kashi.

He had set up a *Pandit-Sabha* at Amber to adjudicate on disputes in religous matters. These decisions were honoured all over India. At the time of the coronation of Chhatrapati Shivaji, his *yagyopavit* ceremony was first performed according to a decision of this *Sabha* and then alone could he be installed as a king. At that time his age was about 40-45 years. This *Dharma Sabha* continued functioning even after the shifting of the state capital to Jaipur and is still in existence today. However, the passage of time has eroded its importance.

The temple originally erected for Shila Mata had a door facing west. Mirza-raja Jai Singh built another magnificent temple beside it facing north and on an altar installed the icon of the goddess there, which still remains unchanged.

The Mirza-raja's accomplishments in all fields of religon, education, art and culture remain supreme. It was owing to the religous influence wielded by him that Aurangzeb gave up his role of an ienoclast to some extent. The role of Mirza Raja Jai Singh in bringing Shivaji round to Aurangzeb is recognised in history.

The Mirza-raja had six queens and two sons named Ram Singh and Kirat Singh. He breathed his last on the fifth of Ashwin (first fortnight) in VE 1724 (1667 AD). He ruled over the destinies of Amber for 45 years, 8 months and 10 days.

3. SAWAI MAN SINGH—II

Sawai Man Singh was the architect of the modern city of Jaipur. The development of Jaipur during his reign, was on all fronts. He was ever persevering for enhancing the pleasure and comfort of his people. For expansion in the spheres of education, medicine, law and administration, he used his abilities as a ruler in such a clear and immaculate manner that he occupied a place of honour in the gallaxy of the then princes of India. The public used to pay homage to him as an able administrator. It was during his tenure that a responsible government was set up in the state. After some time, when on the merger of its native states Rajasthan was formed, he emerged as its Raj Pramukh, and in this high office he managed the affairs of the state with great administrative acumen.

After serving his term as a member of the Rajya-Sabha, the Maharaja was appointed Ambassador to Spain. During the second World War and in indepedent India's confrontations with China and Pakistan, his military services

were highly appreciated and he rose to the rank of a Lieutenant-General. The Maharaja has also written a Book on the "Histoty of Indian States Forces" which has since been published.

He could read the times correctly and had a keen fore-sight. His primary interest was learning, art and culture. In order to preserve and conserve the glory of his ancestors, he did an admirable job in converting the City Palace into a museum for the collection and preservation of artefacts and manuscripts acquired form time to time, for the benefit of foreign and Indian scholars. Research scholars from India and abroad avail themselves of studies here in the culture and civilization of medieval India.

He was an ardent devotee of Amber's Shila Mata. Apart from festivals and religous occasions, the Maharaja used to go for the Devi's *darshan* regularly before proceeding to a journey abroad or returing therefrom. As a mark of this reverential devotion, he rennovated the Shila-Mata temple by laying marbles on the floor and the walls. On both sides of the inner temple-gate, two plantain-trees have been artistically carved out of marble, which are a big attraction for the devotees. At the entrance gate of the temple, the doors have been covered by sheets of silver. These artistic doors were built by the second queen of the Maharaja, Maharani Kishor Kanwarji, which look highly attractive and magnificent. Above the door, the nine Durgas on their mounts as described in the Saptashati Kavach, have been carved artistically. these nine Durgas are rarely seen else where. The couplets by Kaviratna Purohit Pratap Narayan, a revered Knight (*Tajimi Sardar*) of Jaipur, add to their grace, as they have been composed according to the nature of these *Swaroopas*. He also provided necessary electricity and water facilities in the temple, enhancing its beauty and glory, to the immense delight and

attraction of the local public and foreign tourists. Lakhs of people avail themselves of the Devi's *darshan* every year.

For performing the service of worship in the temple and for its proper maintenance, the Maharaja had, in his time, created a Shila Mata Trust, which duty it is still performing with pleasure.

Two Sanskrit verses occuring in the 'Raj Prashasti' by this author, may be quoted here. (Pl. see the verses in Hindi Introduction);

'The beloved devotee of Shila-Amba, the jewel in the crown of his contemporary kings, proficient in politics, people's dear sovereign, blessed in his own name, Maharaja Sawai Man Singh-II ascended to the throne here, during whose reign Jaipur marched much ahead of other cities and reached the pinnacle of progress. That is why even posthumously the admirers of his character remember him with respect today.

"Famous all over the world as an unmatched poloplayer, the late Maharaja Sawai Man Singh (II) was really a pillar of glory for Rajasthan. Very much like him, Maharani Gayatri Devi also admired on the polo playground, became his favourite queen. Such an illustrious life led by a great man full of worldly prosperity and domestic bliss, is not capable of being eulogised by everybody."

As already pointed out, the Maharaja had a great fondness for playing polo. He was a world champion in this game. On a polo playground in England, in the year 1970 A. D., this popular prince fell dead.

4. SAWAI BHAWANI SINGH

The peresent successor to the Jaipur throne, Maharaja Sawai Bhawani Singh was born on Ashwin II (second fortnight), V. E. 1988 (Oct. 22, 1931).

Like his illustrious father, he is a born soldier and a renowned polo player. When Pakistan committed aggression against India in 1971, he was in the Active Service. He displayed rare bravery on the battlefield while leading his para-troops and occupied two military outposts held by Pakistan. In honour of this distinguished military service, the Govt. of India conferred upon him the Mahavir Chakra. Since his retirement from war services, he is actively engaged in fulfilling the the work started by his late father, in right earnest.

He is particularly keen on bettering the museum services established by his worthy father. The Museum is undertaking a series of publications under the banner of Maharaja Sawai Man Singh Memorial series. Under the scheme, rare manuscripts containing important literature acquired in the *Pothikhana* by former rulers, will be edited and got ready for publication. Besides, arrangements have also been made for making books available to students and learned men for undertaking research projects.

For the last few years, he has started taking an active interest in converting the Jaigarh fort, builtby his ancestors into a museum. On completion of this scheme, Jaigarh will grow into a charming tourist resort. Presently, the fort has been thrown open to the tourists, which is a significant step in its development.

Following his father's tradition, he is also a most ardent devotee of goddess Shila Mata. He has a keen eye for the methodical service of the Devi's worship and consults his fellow turstees whenever necessary for a faultless performance of the *Seva Puja*. The queen, Mrs. Padmini Devi, also worships the deity with rapt devotion.

Two self-composed verses, wishing long-life to the royal couple, are quoted here (original in the Hindi Introduction).

"Maharaja Colonel Sawai Bhawani Singh, son of Maharaja Man Singh who occupies his father's place, is a great joy for all. The learned Maharaja who has been awarded the Mahavir Chakra for his unparallelled gallantry, may enjoy long life full of happiness and prosperity.

"The lifepartner of Sawai Bhawani Singh, named Maharani Padmini Devi, is like Rajyalakshami, herself owner of a heart full of sympathy and a commendably sweet tempered nature. Overwhelmed with her husband's unceasing love and her heart replete with inexhaustible generosity, she may enjoy her desired conjugal bliss to the full for many long years to come."

SHRI SHILA MATA TRUST

The management of the Shila-Mata temple was in the hands of the Charity Department (*Karkhana Punya*) of the Jaipur State before the formation of Rajasthan. With the merger of the state in Rajasthan, this temple became the personal temple of the Jaipur Ruler, Sawai Man Singh in 1949, and the temple affairs came to be managed by the Superintendent, Household Dharmartha.

The fromer Jaipur king, Sawai Man Singh set up the Shila Mata Trust in 1963 and got it registered under clause 21 of the Rajasthan Public Trusts Act, 1959. The Maharaja himself and his Military Secretary were office-bearers of this Trust. The late Maharaja assigned its management to Pt. Harihar Nath Sukhia, then Superintendent, Household Dharmartha.

On the sudden demise of Maharaja Man Singh, his son Col. Sawai Bhawani Singh, successor to the Jaipur throne, occupied the Chairman's post in the Trust and reorganised it to include the following members :

1. Thakur Shyam Karan Singh,
   Karnot House, Jaipur.
2. Shri Goverdhan Lal Bhatt,
   Misra-Rajaji-ka-Rasta, Jaipur.
3. Pandit Ganga Dhar Dvivedi,
   Dharma - Sabhadhyaksha, formerly Mouj Mandir, Saraswati Pith, Brahmapuri, Jaipur.

The above Trust is performing all management duties for the Shila Mata Temple at present.

THE PRESENT EDITION

The Saptashati hymn is popular all over India. Various editions in book-form or in loose leafs with Hindi commentary are currently in circulation. But in the absence of uniformity in the text and the poems given as prologue and epilogue thereto, and in the proper order to be followed in recitation, the devotees desirous of following the correct method are faced with the problem of choosing the right order and method of recitation. Looking at the confusion at present prevailing, and following the maxim : "For common good and common happiness" it has been decided to adopt the complete and authentic "Saptashati Sarvasva" as the basis for bringing out an edition for the benefit of all classes of readers directing them as to the right order and proper method of Saptashati recitation. A number of scholars have given their unanimous approval and recognition, both as to the text and the proper methodology, adopted in 'Sapatashati Sarvasva' The reason is that the commentator of Saptashati, Agamacharya Pandit Sarayu Prasadji Dvivedi commanded a thorough knowledge of the mysteries of the Agam Shastra, and was an acknowledged scholar. He consulted the original Tantra literature and closely examined various Sanskrit commentaries on Saptashati by learned authors, and after proper co-ordination of the obtained knowledge, wrote the 'Saptashati Sarvasva,' in the true Gaur tradition. Therefore the authenticity of this monumental work is being honoured for a long time all over northern India.

The book has become rare these days. Two editions of this book were published from the Nawal Kishor Press, Lucknow many years ago. The frist edition was edited by the author himself, and the second one was edited by his son,

Maha Mahopadhyaya Pandit Durga Prasadji Dvivedi. Copies of both these editions are available in the Saraswati Pith library. Assisted by both these books, its scheme was drawn up. Accordingly, the original text with its prologues and epilogues, as also the order and methodology have duly been incorporated. In the commentary provided on the facing page, complex subjects have been explained in such a simple language that readers may find it easy to understand the relevancy of the subject alongwith its scientific purport. The original text and the desired methodological know-how have already been detailed in brief in this Introduction.

It will be relevant to point out here that the Saptashati in original and not only its Hindi, but its Bangla, Gujarati, and Marathi Commentaries also are freely available. But the contageous disease of having different readings of the text is always present. Apart from these, the author has also seen some versified Hindi translations of Saptashati. They may be good for indulging in the pleasure of poetry, which is for one's own self, but not so good for purposes of recitation. For fruition of desires, the original Sanskrit *shlokas,* alone have been scripturally enjoined for recitation. (See quotation in Hindi Introduction.)

PUBLICATION BY THE TRUST

Maharaja Col. Sawai hhawani Singh, Chairman of the Shila Mata Trust desired that a systematised well-presented popular edition of the Saptashati Hymn should be brought out. As per this decision, the responsibility of all editing work was entrusted to me and I started the work. After sometime, the Maharaja, who is an ardent devotee of Bhagwati, expressed the desire that the publication of this book should accompany translations in both Hindi and English. If an English translation of the methodology of worship is also

given therewith, its utility will enhance further. By so doing, the reverential devotees of Bhagwati in the country and abroad, who have faith in *Durga-Path* and are therefore very much interested, will derive its benefit equally. As the suggestion was apt and timely, the Trust adopted it unanimously. The scheme was therefore acted upon accordingly and the present work could be brought out by the grace of Shila Mata. The Trust also sanctioned finances for the publication.

At the outset of this volume, a lyrical eulogy entitled 'Jagdamba Jai-Vad' has been adopted from the *Durga Pushpanjali* written by M M. Pandit Durga Prasadji Dvivedi. The Hindi translation of 'Devyatharva Sheersha' has also been added with the original, which is fruitful and important. The index to *shlokas* relating to all the three *charitras* has also been given for the convinience of readers. All told, no stone has been left unturned to make it a useful volume.

The Press-copy of the book was diligently prepared in clear readable handwriting by my elder daughter, Sharda Sharma, M. A., Sahitya-ratna. Collection of relevant material and making out copies was ably assisted by my younger son Dinesh Dvivedi, B. Com., M. A., Dharma-shastracharya. I therefore wish a long happy life to them both. The English translation attempted by F. Eden Pargiter of the original Saptashati verses in the 'Markandeya Purana'(1981 Varanasi) has been adopted here gratefully. The English translation of the verses given as prologue and epilogue is by Shri Jagdish Chaturvedi, author and journalist. The contribution of my esteemed friend, Shri Gopal Narain Bahura, Indologist and Librarian in the M. S. M. II Museum Library in revising the translation and suggesting some amendments, is also acknow-

ledged. I express my gratitude to both of them.

The contribution of one of our senior Trustees, Thakur Shyam Karan Singh, retired senior R. A. S. officer and a well-known literature-lover of Jaipur, has really been admirable in mooting the Turst's scheme for the publication of religous literature. Arrangements for printing and regulation of all press activities were jobs admirably done by Dr. Chandramani Singh, Director of the Jaigarh Trust and an expert in Museology, and the Trust Secretary, Acharya Shri Gordhanji Bhatt has extended full co-operation. I bow in gratitude before all three of them.

Shri Lalit Mohan Sharma, B. Com., owner of Pandit Printers has shown a keen interest at all stages of printing and I wish him a bright future.

Seeking pardon for the human errors from men of learning in the end, I hope that the book will give satisfaction to the devotees of Bhagwati Durga, and a little of that satisfaction will be reward enough for all my labour.

'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत् ॥'

॥ इति शिवम् ॥

—Gangadhar Dvivedi

Prachya Shodh-Samsthan,
Saraswati Pith, Brahmapuri, Jaipur
Dipavali, 1986 (2043 V. E.)

सप्तशती के श्लोक-मन्त्रों की गणना

अध्याय के अङ्क		श्लोकों के अङ्क		मन्त्रों के अङ्क
१	—	७८	....	१०४
२	....	६८	—	६९
३	....	४१	....	४४
४	—	३६	—	४२
५	....	७६	—	१२९
६	—	२०	—	२४
७	....	२५	—	२७
८	—	६१½	....	६३
९	...	३९	....	४१
१०	....	२७½	....	३२
११	....	५०½	—	५५
१२	....	३८	....	४१
१३	—	१७½	....	२९
		५७८		७००

षडङ्गों की श्लोक गणना

कवच श्लोक	....	—	५०½
अर्गला श्लोक	....	—	२३
कीलक श्लोक	....	....	१४
प्राधानिक रहस्य के श्लोक		—	३०½
वैकृतिक रहस्य के श्लोक		—	३९
मूर्ति रहस्य के श्लोक	—	....	२५
			१८२
रात्रिसूक्त–देवीसूक्त के मन्त्र		....	१६

Count of SHLOKAS and MANTRAS in Durga Saptashati

Chapter No.	Number of Shlokas	Number of Mantras
1	78	104
2	68	69
3	41	44
4	36	42
5	76	129
6	20	24
7	25	27
8	61½	63
9	39	41
10	27½	32
11	50½	55
12	38	41
13	17½	29
	578	700

Count of Shlokas in the Six Components

Shlokas in	Number
Kavach	50½
Argala	23
Keelak	14
Prādhānik Rahasya	30½
Vaikritik Rahasya	39
Murti Rahasya	25
	182
Rātri-Sukta and Devi-Sukta (Mantras)	16

जगदम्बा–जयवादः

जय जगदम्ब ! कदम्बविहारिणि !
मङ्गलकारिणि ! कामकले !
जय तनुशोभाकम्पितशम्पे !
लसदनुकम्पे कान्तिनिधे !।
जय जितकामेऽपि जनितकामे !
धूर्जटिवामे ! वामगते !
जय जालन्धरपीठविलासिनि !
दुःखविनाशिनि ! भक्तिवशे ! ॥ १ ॥

कदम्ब में विहार करने वाली, मङ्गलकारिणी, कामकलास्वरूपिणी, हे देवि ! आप अपने देदीप्यमान शरीर की आभा से विद्युत् कान्ति को तिरस्कृत करने वाली तथा भक्तों के प्रति सदैव अनुकम्पा से परिप्लुत हो एवं अप्रतिम कान्ति की आगार हो। हे जगदम्ब ! आपकी जय हो। आप काम को जीतने वाली तथा उसे पुनर्जीवित करने वाली, महेश्वर के वामाङ्ग में सुशोभित, मनोहर गति से विचरण करने वाली, जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, समस्त दुःखों का विनाश करने वाली, भक्ति के वशीभूत रहती हैं। हे जगज्जननि आपकी जय हो ॥ १ ॥

नानालङ्कृतिझङ्कृतिशालिनि !
मौक्तिकमालिनि केलिपरे !
मुनिजनहृदयागारनिवासिनि !
विद्यास्वामिनि ! बोधघने !।
सान्द्रानन्दसुधारसभासिनि !
वीणावादिनि ! वेदनुते !

जय जालन्धरपीठविलासिनि !
दुःखविनाशिनि ! भक्तिवशे ! ॥ २ ॥

विविध रत्नाभूषणों से अलंकृत होकर झंकार करने वाली, मोतियों की माला से सुशोभित, क्रीड़ा में अनुरक्त, मुनिजनों के हृदयमण्डल में निवास करने वाली, विद्याओं की स्वामिनी, ज्ञान-स्वरूपिणी, आनन्दामृतरस से परिपूर्ण, वीणावादन करने वाली, वेदों द्वारा वन्दित, जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, समस्त दुःखों का विनाश करने वाली, भक्ति के वशीभूत ! हे जगज्जननि ! आपकी जय हो ॥२॥

आपत्तूलमहानलकीले !
पालनशीले ! भूतिखने !
द्युतिजितचम्पकदामकलापे !
मधुरालापे ! हंसगते ॥
विभ्रमरञ्जितशङ्करहृदये !
कृतजगदुदये ! शैलसुते !
जय जालन्धरपीठविलासिनि !
दुःखविनाशिनि !भक्तिवशे ! ॥ ३ ॥

सांसारिक आपत्तियों और विपदाओं के रूप में प्रज्ज्वलित रुई की भांति तीव्रतम अग्नि को शान्त करने वाली, योगक्षेम के द्वारा विश्व का पालन करने वाली, अणिमादि अष्ट सिद्धियों की खान, अपनी अप्रतिम देहकान्ति के द्वारा स्वर्णसदृश चम्पा के पुष्प की मालाओं को श्रीहीन कर देने वाली, मधुर आलाप करने वाली, हंसवाहिनी, विलास के द्वारा शङ्कर के हृदय को अनुरक्त करने वाली, स्थावर जङ्गम विश्व का उदय करने वाली, हिमालय की कन्या, जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, समस्त दुःखों का विनाश करने वाली, भक्ति के वशीभूत ! हे जगज्जननि ! आपकी जय हो ॥३॥

मूले दीपककलिकाकारे !
विद्यासारे ! भवसि परा !
तस्मादपसृतिकलनावृद्धे !
मणिपुरमध्ये पश्यन्ती ॥
स्वान्ते मध्यमभावाकूता,
कण्ठे वितता वैखरिका ।

जय जालन्धरपीठविलासिनि !
दुःखविनाशिनि ! भक्तिवशे ! ॥ ४ ॥

मूलाधारमें दीपशिखा की भांति प्रकाशित, समस्त विद्याओं की सारभूता, आप परा-स्वरूपिणी हो एवं आरोहक्रम से मणिपुर (नाभि में स्थित दश-दल कमल) के भीतर पश्यन्ती के रूप में अवस्थित हो तथा हृदयमण्डल में अनाहतनादस्वरूपिणी मध्यमा एवं कण्ठप्रदेश में व्याप्त होने पर वैखरी कहलाती हो। जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, समस्त दुःखों का विनाश करने वाली, भक्ति के वशीभूत ! हे जगज्जननि ! आपकी जय हो ॥४॥

पश्चादाविर्भवदनवद्ये !
श्रेयःपद्ये ! यत्तदिदम् ।
शब्दब्रह्मतया खलु गेयं
खमिवामेयं किमपि घनम् ।
पञ्चाशल्लिपिभेदविचित्रं
वाङ्मयमात्रं त्वमसि परे !
जय जालन्धरपीठविलासिनि !
दुःखविनाशिनि ! भक्तिवशे ! ॥ ५ ॥

अनन्तर वैखरी के रूप में दिव्यस्वरूपा एवं असीम कल्याणदायिनी, शब्दब्रह्म के रूप में प्रशंसित आपका यह रूप, हे देवि ! आकाश के सदृश अपरिमेय तथा व्यापक है। पञ्चाशत् (पचास) वर्णलिपियों के द्वारा विचित्र वाङ्मयरूपा हे परास्वरूपिणि ! जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, दुःखों का विनाश करने वाली, भक्ति के वशीभूत, हे जगज्जननि ! आपकी जय हो ॥ ५ ॥

भवभवविभवपराभवहेतो !
गिरिकुलकेतो ! भक्तहिते !
नानाविधवृजिनोत्करवारिणि !
करुणासारिणि ! शान्ततरे !!
सहसोत्सादितसाधकविघ्ने !
श्रद्धानिघ्ने ! सुखकलिके !
जय जालन्धरपीठविलासिनि !
दुःखविनाशिनि ! भक्तिवशे ! ॥ ६ ॥

भौतिक ऐश्वर्य एवं उसके विनाश की अर्थात् सुख-दुःख की आप ही एकमात्र कारण हैं। हिमालय के वंश की विजयपताका, भक्तों की हितकारिणी, विभिन्न पापसमूहों का उच्छेद करने वाली तथा करुणा के अजस्र स्रोत के रूप में अवस्थित, आप परम शान्तस्वरूपा हैं; साधकों की साधना में आने वाली विघ्न बाधाओं का सद्यः शमन करने वाली, श्रद्धा एवं विश्वास के वशीभूत, लौकिक एवं पारलौकिक सुख का विकाश करने वाली, जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, समस्त दुःखों का विनाश करने वाली, भक्ति के वशीभूत, हे जगज्जननि ! आपकी जय हो ॥ ६ ॥

सिन्दूरद्रवचुम्बितभाले !
सेवितहाले ! प्रेमभरे !
मातश्चिन्तामणिभवनान्ते !
निर्भरकान्ते ! विततततम् !!
सोत्कं गायसि किन्नरदारैः
साकमुदारैः पतिचरितम् !
जय जालन्धरपीठविलासिनि !
दुःखविनाशिनि ! भक्तिवशे ! ॥ ७ ॥

हे मां ! आप मस्तक पर सिन्दूरविन्दु से अलंकृत, आसवानुरागिणी, प्रेम से परिपूर्ण एवं चिन्तामणि-भवन अर्थात् द्वादशदलकमल के मध्य में शिव की अर्धाङ्गिनी के रूप में अवस्थित हैं। भावाभिभूत किन्नर स्त्रियों के साथ उत्कण्ठित मनोभाव से वीणा आदि वाद्यों के माध्यम से शिव के अद्भुत एवं लोकोत्तरचरित्र का गान करने वाली, जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, भक्ति के वशीभूत, हे जगज्जननि ! आपकी जय हो ॥ ७ ॥

क्लेशं भञ्जय, रञ्जय चित्तं
वित्तं स्फारीकुरु वरदे !
शत्रुं मर्दय, वर्धय शक्तिं
भक्तिं सान्द्रीकुरु सरले !
नास्ति कृपानिधिरम्ब !
त्वत्तो मत्तो मत्ततमो न शिवे !

जय जालन्धरपीठविलासिनि !

दुःखविनाशिनि ! भक्तिवशे ! ॥ ८ ॥

हे वरदे ! आधि-व्याधि से उत्पन्न मेरे शारीरिक एवं मानसिक कष्टों का विनाश करें तथा मन को आह्लादित करें। हे शिवे ! आप लौकिक वैभव की वृद्धि करें, शत्रुओं का शमन करें तथा मेरी शक्ति की वृद्धि करें हे। सरलस्वभाववाली देवि ! अपने चरणकमलों में निश्छल एवं दृढ़ भक्ति प्रदान करें। हे अम्ब ! संसार में आपसे बढ़कर दूसरा कोई दया का समुद्र नहीं है और मुझसे बढ़कर निरन्तर प्रमाद करने वाला अन्य कोई भक्त नहीं है। जालन्धर पीठ में विलास करने वाली, दुःखों का विनाश करने वाली, भक्ति के वशीभूत, हे जगज्जननि ! आपकी जय हो।

वज्रालङ्करणाया वज्रातटिनीविहारशीलायाः।

वज्रेश्याः स्तवमेतं पठतां सङ्गच्छतां श्रेयः ॥९॥

वज्र से अलंकृत एवं वज्रा नामकी अध्यात्म नदी में विहार करने वाली, इन्द्र के वज्र को शक्ति प्रदान करने वाली, जालन्धर पीठ की अधिष्ठात्री भगवती वज्रेश्वरी की इस स्तुति को अर्थज्ञान सहित पढ़ने वालों का निरन्तर कल्याण हो।

॥ इति जगदम्बा–जयवादः ॥

ओमथ श्रीदेव्यथर्वशीर्षम्

ॐ स्वस्ति श्रीगणेशाय नमः। ॐ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः।

अथ वेदस्तुतिः हरिच्छन्दः।

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवि। साब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी। मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् शून्यं चाशून्यञ्च। अहमानन्दानानन्दे अहं विज्ञानाविज्ञाने। अहं ब्रह्म ब्रह्माणी द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये। इतिवाथर्वणी श्रुतिः। अहं पञ्चभूतान्यहम्पञ्चतन्मात्राणि। अहमखिलञ्जगत्। वेदोहमवेदोहम् विद्याहमविद्याहम् अजाहमनजाहमधश्चोर्ध्वं च तिर्य्यगहं। अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि। अहमादित्यैर्म्मरुतविश्वदेवैः। अहं मित्रावरुणावुभौ बिर्भम्मि। अहमिन्द्राग्नी। अहमश्विनावुभौ। अहं सोमं त्वष्टारमुतपूषणम्भगन्दधामि। अहं विष्णु–

मुरुक्रमं ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि । अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥ १ ॥

अहं राष्ट्री संगमनी वसूनाञ्चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् । अहं सुवे पितरमस्य मूर्द्धन्ययो-निरप्स्वंतः समुद्रे । य एवं वेद स दैवीं संपदमवाप्नोति । ते देवा अब्रुवन् नमो देव्यै महा-देव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताःस्म ताम् ॥ २ ॥

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचिनीं कर्मफलेषु जुष्टां । दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये सुतरां नाशयते तमः ॥ ३ ॥

देवीं वाचमजनयंति देवाः । तां विश्वरूपां पशवो वदंति । सा नो मंद्रेषमूर्जः दुहाना धेनुर्वा-गस्मानुपसुष्ठुतैतु ॥ ४ ॥

कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कंदमातरं । सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनीं शिवाम् ॥ ५ ॥

ॐ महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ ६ ॥

अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव। तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबंधवः ।। ७ ।।

कामो योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः। पुनर्गुहा सकला मायया च पुरूच्येषा विश्वमातादिविद्या ।। ८ ।।

एषात्मशक्तिः एषा विश्वविमोहिनी पाशांकुशधनुर्बाणधरा एषा श्रीमहाविद्या य एवं वेद स शोकं तरति। नमस्ते भगवति मातरस्मान्पाहि सर्वतः। सैषाष्टौ वसवः। सैषैकादश रुद्राः। सैषा द्वादशादित्याः। सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च। सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षसिद्धाः। सैषा सत्वरजस्तमांसि। सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी। सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः। सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतींषि कलाकाष्ठादिकालरूपिणी तामहं प्रणौमि। नित्यां पापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीं अनंतां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवां ।। ९ ।।

वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितं। अर्द्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ।। १० ।।

एवमेकाक्षरं मंत्रं यतयः शुद्धचेतसः। ध्यायंति परमानंदमया ज्ञानाम्बुराशयः ।। ११ ।।

वाङ्मायाब्रह्मभू तस्मात्षष्ठं वक्त्रसमन्वितम्। सूर्य्योऽवामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्तष्टात् तृतीयकः ।। १२ ।।

नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधरसंयुतः । विच्चे नवार्णकोऽयं स्यान्महदानंददायकः ।।१३।।

हृत्पुंडरीकमध्यस्थां प्रातः सूर्यसमप्रभाम् । पाशांकुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकां । त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे ।। १४ ।।

नमामि त्वां महादेवीं महाभयविनाशिनीं । महादारिद्र्यशमनीं महाकारुण्यरूपिणीम् ।।१५।।

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया यस्या अंतो न ज्ञायते तस्मादुच्यते अनंता । यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या । यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका । एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यते अनेका । अत एवोच्यतेऽज्ञेयानन्तालक्ष्याजैका-नैका । मंत्राणां मातृकादेवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी । ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी ।। १६ ।।

यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता । तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीं । नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ।। १७ ।।

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पंचाथर्वशीर्षजपफलमवाप्नोति । इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्च्चां स्थाप-

यति शतलक्षं प्रजप्त्वापि तस्य सिद्धिं न विंदति । शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः ॥१८॥

दशवारं पठेद्यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते । महादुर्गा महादेव्या महाशक्त्याः प्रसादतः ॥१९॥

सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । निशीथे तुरीयसंध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति । भौमाश्विन्यां महादेवी सन्निधौ जप्त्वा स महामृत्युं तरति । य एवं वेदेत्युपनिषत् । सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै । ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ।

॥ इति श्रीदेव्यथर्वशीर्षम् ॥

श्रीदेव्यथर्वशीर्ष का हिन्दी अनुवाद

अर्थ—समस्त देव, देवी के समक्ष उपस्थित होकर सविनय प्रार्थना करने लगे कि हे महादेवि ! आप कौन हैं ?

वे बोलीं—मैं ब्रह्मस्वरूपा हूं। मुझसे ही प्रकृति-पुरुषात्मक सत् और असत् जगत् की उत्पत्ति हुई है। मैं आनन्द एवं अनानन्दरूपा हूं तथा मैं ही विज्ञान एवं अविज्ञानरूपा हूं। ब्रह्म एवं अब्रह्म भी मैं ही हूं। मैं ही पञ्चमहाभूतात्मक एवं पञ्चतन्मात्रिक रूपों में अवस्थित हूं। मैं ही दृश्यादृश्य निखिल जगत् हूं। मैं वेद एवं अवेद भी हूं। मैं विद्या एवं अविद्या भी हूं। मैं अजा एवं अनजा भी हूं। मैं ही नीचे ऊपर, अगल-बगल, सर्वत्र अस्तित्वरूपा हूं। मैं ही रुद्रों एवं वसुओं के रूप में तथा मैं ही आदित्य, मरुत एवं विश्वेदेवों के रूप में सञ्चरण करती हूं। मैं दोनों मित्रावरुण, इन्द्राग्नि की एवं दोनों अश्विनीकुमारों की पोषिका एवं सञ्चालिका हूं। मैं सोम, त्वष्टा, पूषा एवं भग को धारण करती हूं। त्रिलोकी के आक्रमण करने हेतु विस्तृत पैरों का प्रक्षेप करने वाले विष्णु, ब्रह्मा एवं प्रजापतियों को भी मैं ही धारण करती हूं। मैं देवों को उत्तम हवि निवेदित करने वाले एवं आसवादि निष्पादित करने वाले यजमान के लिए हविर्द्रव्यों से युक्त धन को धारण करती हूं ॥ १ ॥

अर्थ—मैं सम्पूर्ण जगत् की ईश्वरी, उपासकों को ऐश्वर्य प्रदान करने वाली, ब्रह्मस्वरूपा एवं यज्ञार्हों (यजन करने योग्य देवों) में सर्वप्रमुख हूं।

मैं परापर वृत्तियों की निर्मात्री हूं तथा मेरा निवास आत्मस्वरूप को धारण करने वाली बुद्धिवृत्ति में है। जो इस प्रकार जानता है, वह दैवी सम्पदा को प्राप्त करता है। तब देवों ने कहा—देवी को प्रणाम है। विजयशालिनी, ब्रह्मा आदि देवों को सृष्टि-प्रभृति कर्तव्य कर्मों में प्रवृत्त करने वाली कल्याण-कर्त्री देवी को सतत प्रणाम है। गुणसाम्यावस्था-रूपिणी मङ्गलमयी उन महादेवी को हम एकाग्रचित्त और नियमयुक्त होकर प्रणाम करते हैं॥ २॥

अर्थ—उस अग्नितु य कान्तिवाली, ज्ञान-प्रकाश से प्रदीप्त, अद्भुत आभावाली, कर्मफल प्राप्ति हेतु सेवा की जाने वाली, अमङ्गलरूपी अन्धकार को सद्यः विनष्ट करने वाली भगवती दुर्गा की हम शरण में हैं॥ ३॥

अर्थ—प्राणरूप देवों से उत्पन्न प्रकाशमान वैखरी वाणी, जो विभिन्न प्राणियों द्वारा उच्चारित की जाती है, वह कामधेनु सदृश, आनन्दप्रदायिनी, अन्न एवं बलप्रदान करने वाली वाग्रूपिणी भगवती उत्तम स्तुति के द्वारा प्रसन्न होकर हमें अपना सान्निध्य प्रदान करें॥ ४॥

अर्थ—काल का भी विनाश करने वालो, वेदों द्वारा स्तुति की जाने वाली विष्णुशक्ति, स्कन्दमाता (शिवशक्ति) सरस्वती (ब्रह्मशक्ति), देवमाता अदिति एवं दक्षकन्या (सती), पापनाशिनी, मङ्गलस्वरूपा उस भगवती को हम प्रणाम करते हैं॥ ५॥

अर्थ—हम भगवती महालक्ष्मी को जानते हैं और उस सर्वशक्तिरूपिणी का ही ध्यान करते हैं। वह देवी हमें आध्यात्मिक कर्मों में प्रवृत्त करे॥ ६॥

अर्थ—हे दक्ष! आपकी कन्या अदिति उत्पन्न हुईं और उनकी स्तुतिस्वरूप कल्याण के लिए अजरामर देव उत्पन्न हुए॥ ७॥

अर्थ—काम (क), योनि (ए), कमला (ई), वज्रपाणि-इन्द्र (ल), गुहा (ह्रीं)। हसा (ह, स-वर्ण), मातरिश्वा-वायु (क), अभ्र (ह) इन्द्र (ल), पुनः गुहा (ह्रीं)। स, क, ल-वर्ण, एवं माया (ह्रीं), यह

सर्वात्मिका जगन्माता की मूलविद्या है और यह ब्रह्मस्वरूपिणी है ॥ ८ ॥

[शिवशक्त्यभेदरूपा, ब्रह्मा-विष्णु-शिवात्मिका, सरस्वती-लक्ष्मी-गौरीरूपा, अशुद्ध-मिश्र-शुद्धोपासनात्मिका, समरसीभूत शिवशक्त्यात्मक ब्रह्मस्वरूप का निर्विकल्प ज्ञान देने वाली, सर्वतत्त्वात्मिका, महात्रिपुरसुन्दरी, यही इस मन्त्र का भावार्थ है। यह मन्त्र सब मन्त्रों का मुकुटमणि है एवं मन्त्रशास्त्र में पञ्चदशी आदि श्रीविद्या के नाम से प्रसिद्ध है। इसके छः प्रकार के अर्थ अर्थात् भावार्थ, वाच्यार्थ सम्प्रदायार्थ, लौकिकार्थ, रहस्यार्थ एवं तत्त्वार्थ 'नित्याषोडशिकार्णव' ग्रन्थ में बताए गए हैं। इसी प्रकार 'वरिवस्यारहस्य' आदि ग्रन्थों में इसके और भी अनेक अर्थ वर्णित हैं। श्रुति में भी यह मन्त्र इस प्रकार से अर्थात् कहीं स्वरूपोपचार, कहीं लक्षणा और लक्षितलक्षणा से और कहीं वर्ण के पृथक् पृथक् अवयव दिखलाकर जानबूझकर विशृंखलित रूप से कहे गए हैं। इससे यह मालूम होता है कि ये मन्त्र कितने महत्त्वपूर्ण एवं गोपनीय हैं।]

अर्थ—यह आत्मशक्ति हैं। यह विश्वमोहिनी हैं। पाश,अंकुश, धनुष एवं बाण धारण करने वाली हैं। यह 'श्रीमहाविद्या' हैं। जो ऐसा जानता है वह शोकमुक्त हो जाता है। हे भगवति ! आपको प्रणाम है। हे जगन्माता ! सब प्रकार से हमारी रक्षा करो। मन्त्रद्रष्टा ऋषि कहते हैं—वे ही यह अष्ट वसु हैं, वे ही ये एकादश रुद्र हैं, वे ही द्वादश आदित्य हैं, वे ही सोमपान करने वाले और न करने वाले विश्वेदेव हैं। वे ही यातुधान (एक प्रकार के राक्षस), असुर, राक्षस, पिशाच, यक्ष एवं सिद्ध हैं, वे ही सत्व-रज-तम हैं, वे ही ब्रह्मा-विष्णु-रुद्ररूपिणी हैं, वे ही प्रजापति-इन्द्र-मनु हैं, वे ही ग्रह, नक्षत्र एवं तारामण्डल हैं, वे ही कलाकाष्ठादि कालरूपिणी हैं। शाश्वतरूपा, पापविध्वंसिनी, भोग एवं मोक्ष प्रदान करने वाली, अन्तरहित, विजयाधिष्ठात्री, निर्दोष, शरण लेने योग्य, कल्याणकर्त्री एवं मङ्गल-

रूपिणी हैं, उन भगवती को हम सतत प्रणाम करते हैं ॥ ६ ॥

अर्थ—वियत्—आकाश (ह) तथा 'ई' कार से युक्त, वीतिहोत्र—अग्नि (र) सहित एवं अर्द्ध चन्द्र (ँ) से अलंकृत जो देवी का बीज है, वह समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाला है। इस एकाक्षर मन्त्र का ऐसे यति ध्यान करते हैं जो निर्मल-चित्त हैं, आध्यात्मिक आनन्दानुभूति से परिपूर्ण हैं एवं ज्ञान-राशि के सागर हैं। यह मन्त्र 'माया बीज' एवं 'देवी प्रणव' के नाम से भी प्रसिद्ध एवं व्यापक अर्थ से परिपूर्ण है। संक्षेप में इसका अर्थ इच्छा-ज्ञान-क्रियाधार, अद्वैत, अखण्ड, सच्चिदानन्द, समरसी-भूत शिवशक्ति का स्फुरण है ॥१०-११॥

अर्थ—वाक् वाणी (ऐं), माया (ह्रीं), ब्रह्मभू-काम (क्लीं), छठा व्यञ्जन अर्थात् च, वही वक्त्र अर्थात् आकार से युक्त (चा), सूर्य (म) 'अवाम श्रोत्र'—दक्षिण कर्ण (उ) एवं बिन्दु अर्थात् अनुस्वार से युक्त (मुं), टकार से तीसरा ड, वही नारायण अर्थात् 'आ' से मिश्र (डा), वायु (य), वही अधर अर्थात् 'ऐ' से युक्त (यै) तथा 'विच्चे' यह नवार्ण मन्त्र उपासकों को आनन्द एवं ब्रह्मसायुज्य प्रदान करने वाला है।

इस मन्त्र का अर्थ है—हे चित्स्वरूपिणी महा-सरस्वति ! हे सद्रूपिणी महालक्ष्मि ! हे आनन्द-रूपिणी महाकालि ! ब्रह्मविद्या प्राप्त करने के लिए हम सदैव आपका ध्यान करते हैं। हे महा-काली, महालक्ष्मी, महासरस्वती-स्वरूपिणी चण्डिके ! आपको प्रणाम है। अविद्यारूप रज्जु की दृढ़ ग्रन्थि खोलकर मुझे मुक्त करें। ॥ १२-१३ ॥

अर्थ—हृत्कमल के मध्य में अवस्थित रहने वाली, उषःकालीन सूर्य के सदृश प्रभा वाली, पाश एवं अंकुश धारण करने वाली, मनोहर रूप वाली, वरद एवं अभयमुद्रा धारण किये हुए हाथों वाली, तीन नेत्रों वाली, रक्त परिधानों से सुशोभित एवं भक्तों के समस्त मनोरथ पूर्ण करने वाली देवी को मैं भजता हूं ॥ १४ ॥

अर्थ—महा-भय का नाश करने वाली, महा-दारिद्र्य का शमन करने वाली एवं अपार करुणा की साक्षात् मूर्ति, हे महादेवि ! मैं आपको प्रणाम करता हूं ॥ १५ ॥

अर्थ—जिसका स्वरूप ब्रह्मादिक भी नहीं जानते इसलिए जिसे अज्ञेया कहते हैं, जिसका अन्त नहीं मिलता इसलिए जिसे अनन्ता कहते हैं, जिसका लक्ष्य दिखलाई नहीं पड़ता इसलिए जिसे अलक्ष्या कहते हैं, जिसका जन्म ज्ञात नहीं होता इसलिए जिसे अजा कहते हैं, जो अकेली ही सर्वत्र विद्यमान हैं, इसलिए जिसे एका कहते हैं, जो एकाकी ही विश्वरूप में व्याप्त हैं, इसलिए जिसे नैका (अनेका) कहते हैं, वे इसीलिए अज्ञेया, अनन्ता, अजा, एका एवं नैका कहलाती हैं। वही देवी सब मन्त्रों में 'मातृका' मूलाक्षररूप से रहने वाली, शब्दों में अर्थ रूप से विद्यमान, ज्ञानों में 'चिन्मयातीता' एवं शून्यों में 'शून्यसाक्षिणी' के रूप में अवस्थित रहने वाली हैं। ॥ १६ ॥

अर्थ—जिनसे अन्य किसी का अतिशय अस्तित्व नहीं है, वे भगवती दुर्गा के नाम से प्रसिद्ध हैं। उन दुर्विज्ञेया दुराचारविनाशिनी एवं संसाररूपी भव-सागर से तारने वाली देवी दुर्गा को, सांसारिक प्रपञ्चों में भयभीत हुआ मैं प्रणाम करता हूं ॥ १७ ॥

अर्थ—इस अथर्वशीर्ष का जो अध्ययन (जप) करता है वह पांचों अथर्वशीर्षों के जप का फल प्राप्त करता है। इस अथर्वशीर्ष से अनभिज्ञ रहकर जो प्रतिमा स्थापित करता है वह शतलक्ष जप करके भी अर्चासिद्धि नहीं प्राप्त करता। अष्टोत्तरशत (१०८) जप इसके पुरश्चरण के लिए विहित है॥१८॥

अर्थ—जो इसका दश वार पाठ करता है वह तत्क्षण पापमुक्त हो जाता है तथा महादेवी के प्रसाद से महादुस्तर संकटों को भी पार कर जाता है ॥ १९ ॥

इस अथर्वशीर्ष का सायंकाल पाठ करने वाला दिन में किये हुए पापों का नाश करता है, प्रातःकाल

पाठ करने वाला रात्रि में किये हुये पापों का नाश करता है तथा दोनों समय पाठ करने वाला निष्पाप हो जाता है। मध्य रात्रि में तुरीयसन्ध्या (श्रीविद्या के उपासकों के लिए चार संन्ध्याएं आवश्यक हैं। इनमें तुरीयसन्ध्या मध्य रात्रि में होती है) के समय जप करने से वाक्सिद्धि प्राप्त होती है। नवीन प्रतिमास्थापन कर जप करने से प्राणप्रतिष्ठा और देवसान्निध्य प्राप्त होता है। भौमाश्विनी (अमृत-सिद्धि) योग में महादेवी के सान्निध्य में जप करने से महामृत्यु से भी तर जाता है। जो ऐसी भावना करता है। इस प्रकार यह वेदोपनिषद् स्तुति अविद्या-नाशिनी ब्रह्मविद्या है। हम दोनों गुरु-शिष्यों की साथ-साथ रक्षा हो, दोनों साथ-साथ भोग प्राप्त करें तथा साथ-साथ पराक्रमी बनें। हमारा अध्ययन तेजस्वी हो तथा हम में परस्पर कभी द्वेष बुद्धि पैदा न हो। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

।। श्रीदेव्यथर्वशीर्ष का हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ।।

श्रीउ० अथर्वदस्तुतिः हरिकृष्ण दे०ः

१ दे०॥ ॐ स्वस्ति श्री गणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो
नमः ॥ ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादे
वि साब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी मत्तः प्रकृतिपुरुषा
त्मकं जगत् शून्यं चाशून्यं च अहमानन्दानानन्दौ
अहं विज्ञानाविज्ञाने अहं ब्रह्माब्रह्मणी वेदि १

शयति सायं प्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति निशीथे तुरीयसं
यो ध्यांजप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा प्राणानां१ यो
प्रतिष्ठा भवति भौमाश्विन्यां महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृ म१
त्युं तरति ॥ य एवं वेदेत्युपनिषत् ॐ सहनाववतु सह नौ भु
नक्तु सहवीर्यं करवावहै तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्वि
षावहै ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ हरिः ॐ तत्सत् इत्युप

श्रीउ.१
१ र्वेवेदेश्रादेशुपनिषत्सु स्त्रिमगामरा॥ श्रीपरगुरुसच्चि
दानंदस्वरूपार्पणमस्तु॥ शुभम्॥ संवत् १८१४ वैशाख
शुदी ५ पंचम्यां तिथौ कुजवासरे नंदलालस्य पठनार्थं मम शुभं॥

१

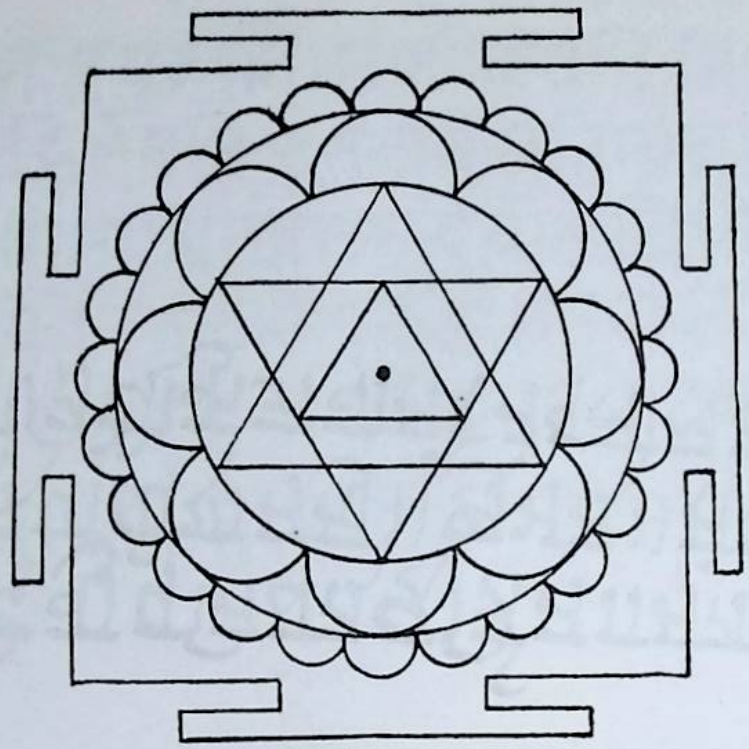

श्रीचण्डिकायन्त्रम्

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

गजाननं विघ्नहरं गणार्चितपदाम्बुजम् ।
सेवितं सिद्धिबुद्धिभ्यामनिशं श्रेयसे श्रये ॥ १ ॥

नित्यामनन्तां प्रकृतिं पुराणीं,
चिदीश्वरीं सर्वजगन्निवासाम् ।
शिवार्धदेहामगुणां गुणाश्रयां,
वर्णार्थरूपां प्रणमामि देवीम् ॥ २ ॥

अथ सप्तशत्याः पूर्वाङ्गत्रयम्

देवी कवचम्

मार्कण्डेय उवाच

यद् गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ १ ॥

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम् ।
देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ २ ॥

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी ।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥ ३ ॥

देवी कवच

मार्कण्डेय ने कहा—

हे पितामह ! लोक में प्रचलित सबसे गुप्त तथा प्राणी मात्र की रक्षा करने वाला जो अस्त्र है तथा अभी तक आपके द्वारा जो किसी को नहीं बताया गया है, कृपा कर अब वह मुझे बतलाइए। ॥ १ ॥

ब्रह्मा ने कहा—

हे महामुनि मार्कण्डेय ! सबसे अधिक गोपनीय तथा प्राणी मात्र का कल्याण करने वाला देवी कवच ही है, तुम उसका श्रवण करो ॥ २ ॥

देवी के नव रूप प्रसिद्ध हैं वे नव दुर्गाओं के नाम से जाने जाते हैं, प्रथम शैल-पुत्री है और दूसरी मूर्ति ब्रह्मचारिणी के नाम से प्रसिद्ध है। तीसरी देवी चन्द्रघंटा हैं तथा चौथी कूष्माण्डा हैं ॥३॥

DEVĪ'S KAVACH[1]

Markandeya said :

"Reveal to me oh Grandfather ! the *Kavach* which is hidden from the world, all-protective for mankind, and that which has not so far been told to anyone." 1.

Brahmā said :

"Oh great sage ! listen, the most secret and the utmost benefactor of all mankind is one and only the *Devī's* sacred armour (*Kavach*). 2.

"Nine *Durgā's* are famous, called Nav *Durgā*— first is *Shailputrī*, second is *Brahmachārinī*, third is *Chandraghantā*, fourth is *Kushmāndā*, 3.

पंचमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च ।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ॥ ४ ॥

नवमं सिद्धिदा प्रोक्ता नव दुर्गाः प्रकीर्तिताः ।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥ ५ ॥

अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे ।
विषमे दुर्गमे चैव भयार्त्ताः शरणं गताः ॥ ६ ॥

न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रणसंकटे ।
नापदं तस्य पश्यन्ति सर्वदुःखक्षयङ्करी ॥ ७ ॥

पांचवी देवी स्वन्दमाता हैं और छठी का नाम कात्यायनी है। सातवीं कालरात्री तथा आठवीं महा-गौरी कहलाती हैं ॥४॥

नवीं दुर्गा सिद्धिदात्री हैं अर्थात् मोक्षदात्री हैं। इस प्रकार इन नव दुर्गाओं का नामकरण वेद के द्वारा किया गया है ॥५॥

यदि कोई प्राणी अग्नि में जल रहा हो अथवा युद्ध में शत्रुओं से घिर गया हो या अन्य किसी भयंकर संकट में फंसा हुआ हो तो वह यदि देवी का स्मरण कर उनकी शरण में जाता है तो संकट एवं भय से मुक्त हो जाता है और उसे विपत्तियों का सामना नहीं करना पड़ता तथा उसके सभी दुखों का नाश हो जाता है ॥६-७॥

The fifth name is *Skandmatā*, sixth is *Kātyāyani*, seventh is *Kālratrī*, and the eighth is *Mahāgaurī*. 4.

The ninth is *Siddhidātrī*. All these names have been given by the great *Brahma* himself. 5.

"Those who are burning in fire, surrounded by enemies in battle or caught in the vortex of misfortunes, when seek refuge in her mercy out of fear, never does any evil befall them in the throes of war. They are never visited by trouble as also by sorrow, misery or fear. 6-7.

यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषामृद्धिः प्रजायते ।
प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना ॥ ८ ॥

ऐन्द्री गजसमारूढ़ा वैष्णवी गरूडासना ।
माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना ॥ ९ ॥

ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरणभूषिता ।
नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिता ॥ १० ॥

दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः ।
शंख चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ॥ ११ ॥

हे देवि ! जो लोग आर्तभाव से भक्तिपूर्वक आपका स्मरण करते हैं उनका कल्याण होता है, तथा वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सभी प्राप्त कर लेते हैं। भगवती चामुण्डा प्रेत पर तथा वाराही भैंसे पर विराजमान होती हैं ॥८॥

ऐन्द्री का वाहन ऐरावत नामक हाथी है तथा वैष्णवी गरुड़ पर आसीन होती हैं। इसी तरह माहेश्वरी बैल पर सवारी करती है तथा कौमारी का वाहन मयूर है ॥९॥

इसी प्रकार ब्राह्मी सभी प्रकार के अलंकारों से सुशोभित होकर हंस पर विराजमान हैं। तथा अनेक प्रकार के आभूषणों और रत्नों से सुशोभित हैं ॥ १० ॥

इन देवियों का समूह रथ पर आरूढ़ है तथा वे क्रोधित हो रही हैं और शंख, चक्र, गदा तथा शक्ति एवं हल, मुसल आदि आयुधों से संयुक्त हैं ॥११॥

"Those who remember you with devotion, find their lots improved, O Goddess *Chāmundā* riding a corpse, and as *Vārāhī* riding on buffalo. 8.

Aindrī sits on elephant back, and *Vaishnavī*, flies on *Garud's*[2] shoulders, while *Māheshwarī* is ox-rider and *Kaumarī* rides a peacock. 9.

Brāhmī resplendent in her ornaments rides a goose and is gloriously adorned with various ornaments, studded with precious jewels. 10.

All these goddesses appear in their chariots and are ablaze with fury. They have conch, discus, clubs, missiles, ploughs, and stout cudgels in their hands. 11.

खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च ।
कुन्तायुधं त्रिशूलं च शाङ्गायुधमनुत्तमम् ॥ १२ ॥

दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च ।
धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ॥ १३ ॥

महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ।
त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि ॥ १४ ॥

प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ।
दक्षिणे रक्ष वाराहि नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी ॥ १५ ॥

इन आयुधों के अतिरिक्त देवियों के हाथों में खेटक, तोमर, फरसा, पाश, कुन्त, त्रिशूल तथा शार्ङ्ग नामक उत्कृष्ट धनुष भी है ॥१२॥

देवियों ने दैत्यों का नाश करके अपने भक्तों को अभय प्रदान करने के लिए ही ये विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र धारण किए हैं ॥१३॥

हे रौद्र स्वरूपवाली महाबलशालिनी भगवती आपका पराक्रम महान् है तथा आप सभी प्रकार के भयों से छुटकारा दिलाने वाली हैं तथा आप शत्रुओं को भयभीत करने वाली हैं, आप मेरी रक्षा करें ॥१४॥

पूर्व दिशा में भगवती ऐन्द्री (इन्द्र की शक्ति) तथा अग्निकोण में अग्निशक्ति मेरी रक्षा करें। दक्षिण दिशा में वाराही शक्ति तथा नैर्ऋत्य कोण में खड्गधारिणी मेरी रक्षा करें ॥१५॥

"The other weapons are *Khetak*[3], *Tomar*[4], *Parashu*[5], (*axe*)[6], *Pāsh*, *Kuntāyudh*[7], *Trishul*[8], and high class bows made of horn. 12.

They weild these weapons to slay the bodies of the demons, thereby giving their devotees absolute intrepidity, and also take their weapons up to defend the interests of gods. 13.

"Salutations to the Strongest, the Most Vigourous and the great Fear-killer. Protect me O Unstarable Goddess, terrorisor of enemies. 14.

Aindrī may defend me in the east, the Goddess of fire in the south-east, *Vārāhī* in the south and *Khadgdhārinī* in the south-west. 15.

प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद्वायव्यां मृगवाहिनी ।
रक्षेदुदीच्यां कौमारी ईशान्यां शूलधारिणी ॥ १६ ॥

ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा ।
एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना ॥ १७ ॥

जया मे चाग्रतः स्थातु विजया स्थातु पृष्ठतः ।
अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ॥ १८ ॥

शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ।
मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद्यशस्विनी ॥ १९ ॥

पश्चिम दिशा में वारुणी शक्ति (वरुण की शक्ति) तथा वायव्य कोण में मृग-वाहिनी मेरी रक्षा करें। इसी प्रकार उत्तर दिशा में कौमारी शक्ति तथा ईशान कोण में शूलधारिणी मेरी रक्षा करें॥१६॥

ब्रह्माणी ऊपर की ओर मेरी रक्षा करें तथा वैष्णवी देवी नीचे की ओर मेरी रक्षा करें। इसके अतिरिक्त शव पर आरूढ़ रहने वाली भगवती चामुण्डा दशों दिशाओं में मेरी रक्षा करें॥१७॥

भगवती जया अग्र भाग की तथा विजया पृष्ठ-भाग की रक्षा करें। अजिता वाएं भाग की तथा अपराजिता देवी दाएं भाग की रक्षा करें॥१८॥

शिखा की रक्षा उद्योतिनी करें तथा मूर्द्धा (मस्तक) की रक्षा भगवती उमा वहाँ विराजमान होकर भली भाँति करें॥ मालाधरी ललाट की तथा भौंहों की रक्षा भगवती यशस्विनी करें॥१९॥

"*Vārunī* may protect me in the west and *Mrigwāhinī* in the north-west. *Kaumārī*, protect me in the north and *Shūldhārinī* in the northeast. 16.

"*Brahmānī* protect me from above and *Vaishnavī* from below. Thus from all the ten directions, Goddess *Chāmundā* seated on a corpse may take me in her protection. 17.

Jayā may protect me in the front and *Vijayā in* the rear while *Ajitā* protect me in the left and *Aparājitā* in the right side. 18.

Udyotinī, protect the top of my head, and *Umā* may sit on my head for protection. *Mālādhrī* may protect my forehead, and goddess *Yashaswinī* protect my eye-brows. 19.

त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके ।
शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी ॥ २० ॥

कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शांकरी ।
नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका ॥ २१ ॥

अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती ।
दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठमध्ये च चण्डिका ॥ २२ ॥

घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके ।
कामाक्षी चिबुकं रक्षेद्वाचं मे सर्वमंगला ॥ २३ ॥

त्रिनेत्रा भौंहों के मध्य भाग की रक्षा करें और यमघण्टा नासिका के दोनों नथुनों की रक्षा करें। शंखिनी दोनों नेत्रों के मध्य भाग की तथा द्वार-वासिनी कानों की रक्षा करें ॥२०॥

कालिका कपोलों की रक्षा करें तथा शाङ्करी कर्णमूल की रक्षा करें। इसी प्रकार देवी सुगन्धा नासिका की रक्षा करें तथा चर्चिका ऊपर के होठ की रक्षा करें ॥२१॥

निचले होठ की रक्षा अमृतकला करें तथा जिह्वा की रक्षा सरस्वती देवी करें ॥२२॥

दाँतों की रक्षा कौमारी करें तथा कण्ठभाग की रक्षा चित्रघण्टा करें और महामाया तालु की रक्षा करें तथा कामाक्षी ठोढी की एवं भगवती सर्वमंगला मेरी वाणी की रक्षा करें ॥२३॥

"*Trinetrā* protect the point between the brows and *Yamghantā* protect my nostrils. May *Shankhinī* protect the bridge of my nose, and *Dwārvāsinī* protect both my ears. 20.

My cheeks be protected by *Kālikā* and my earlobes by *Shankari*. *Sugandhā* may protect my nose and my upper lip *Charchikā*. 21.

Amritkalā, may protect my lower lip and *Saraswatī* my tongue. 22.

Kaumārī, protect my teeth and *Chandikā* protect my throat. May *Chitraghantā* protect my adam's apple and *Mahāmāyā* my palate while *Kāmākshi** may protect my chin, and my speech be protected by *Sarvmanglā*. 23.

ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ।
नीलग्रीवा बहिष्कण्ठे नलिकां नलकूबरी ॥ २४ ॥

खड्गधारिण्युभौ स्कन्धौ बाहू मे वज्रधारिणी ।
हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीषु च ॥ २५ ॥

नखाञ्शूलेश्वरी रक्षेत्कक्षौ रक्षेन्नलेश्वरी ।
स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनःशोकविनाशिनी ॥ २६ ॥

हृदयं ललिता देवी ह्युदरे शूलधारिणी ।
नाभिं च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा ॥ २७ ॥

भगवती भद्रकाली गले की और धनुर्धरी पृष्ठ-भाग की रक्षा करें। नीलग्रीवा कण्ठ के बहिर्भाग की तथा नलकूबरी कण्ठनली की रक्षा करें ॥२४॥

खड्गधारिणी दोनों स्कन्धों की तथा वज्र-धारिणी (इन्द्रशक्ति) बाहू की रक्षा करें। दण्डिनी (दण्ड धारण करने वाली) दोनों हाथों की और अम्बिका अंगुलियों की रक्षा करें ॥२५॥

शूलेश्वरी नखों की तथा अनलेश्वरी कक्षों (दोनों बाहु मूल या कांख) की रक्षा करें। स्तनों की रक्षा महादेवी तथा मन की रक्षा शोकविनाशिनी करें ॥२६॥

ललिता देवी हृदय की, शूलधारिणी उदर की रक्षा करें। कामिनी नाभि प्रदेश की तथा गुह्येश्वरी गुह्य की रक्षा करें ॥२७॥

"My neck be protected by *Bhadrakālī* and *Dhanurdhārī* protect my spinal cord while my outer throat be protected by *Nīlgrivā* and *Nalkūbarī* protect my throatpipe. 24.

Khadginī may protect my shoulders and both my arms, *Vajradhārinī*. My hands be protected by *Dandinī* and fingers by *Ambikā*. 25.

"Goddess *Shūleshwarī* protect my nails and armpits be protected by *Naleshwarī*. Breasts be protected by *Mahadevi** and mind by *Shokvināshinī*. 26.

"Goddess *Lalitā* may protect my heart and stomach, *Shūldhārinī*. *Kāminī* may protect the navel and *Guhyeshwarī* may protect my secret parts. 27.

भूतनाथा च मेढ्रं च गुदं महिषवाहिनी ।
कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी ॥ २८ ॥

जङ्घे महाबला रक्षेज्जानुमध्ये विनायकी ।
गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे मितौजसी ॥ २९ ॥

पादाङ्गुलीः श्रीधरी च पादाधस्तलवासिनी ।
नखान् द्रंष्टाकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी ॥ ३० ॥

रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ।
रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती ॥ ३१ ॥

भूतनाथा मेढ्र की एवं महिषवाहिनी गुदा भाग की रक्षा करें। भगवती कमर की रक्षा करें तथा विन्ध्यवासिनी दोनों घुटनों की रक्षा करें ॥२८॥

महाबला दोनों जांघों की, विनायकी जानु (घुटने) के मध्य भाग की रक्षा करें। नारसिंही गुल्फ की तथा मितौजसी पैर के ऊपरी भाग की रक्षा करें ॥ २९ ॥

श्रीधरी पैर की अंगुलियों की, तलवासिनी पैर के अधोभाग (निचले भाग) की रक्षा करें। दंष्ट्राकराली पैर के नाखूनों की तथा ऊर्ध्वकेशी केशों की रक्षा करें ॥३०॥

कौबेरी रोम छिद्रों की तथा वागीश्वरी त्वचा की रक्षा करें। देवी पार्वती रक्त, मज्जा, वसा, मांस, अस्थि और मेद की रक्षा करें ॥३१॥

"*Bhūtnathā* may protect my penis and *Mahishvāhinī* protect my anus.. *Bhagwati**, protect my waist, and *Vindhyavāsinī* my knees. 28.

Mahābalā, protect my thighs and *Vināyakī* protect the middle part of my thighs. Ankles be protected by *Nārsinghī* and the hinder part of my legs by *Mitaujasī* 29.

"Toes may be protected by *Shrīdharī* and the soles of my feet, by *Talvāsinī*. *Danshtrākarālī*, may protect my toenails and my hair may be protected by *Ūrdhvakeshinī*. 30.

"*Kauberī* may protect the pores and *Vāgīshwarī* my skin while *Pārvatī* may protect my blood, marrow, fat, flesh and bones and Excessive Fatness. 31.

अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ।
पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा ॥ ३२ ॥

ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसंधिषु ।
शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ॥ ३३ ॥

अहंकारं मनो बुद्धिं रक्ष मे धर्मचारिणि ।
प्राणापानौ तथा व्यानसमानोदानमेव च ॥ ३४ ॥

यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च सदा रक्षतु चक्रिणी ।
गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके ॥ ३५ ॥

कालरात्रि आंतों की तथा मुकुटेश्वरी पित्त की रक्षा करें। पद्मावती मूलाधार से सहस्रार तक के कमलों की तथा चूडामणि कफ का रक्षण करें ॥३२॥

ज्वालामुखी नखकान्ति की और शस्त्रों से अभेद्य सर्वसन्धियों की रक्षा करें। ब्रह्माणी शुक्र (वीर्य) की तथा छत्रेश्वरी शरीर के प्रतिविम्ब (छाया) की रक्षा करें ॥३३॥

हे धर्मचारिणि ! आप अहंकार, मन, बुद्धि की तथा पंच प्राणों (प्राण, अपान, उदान, व्यान और समान) की रक्षा करें ॥३४॥

देवी चक्रिणी (चक्र धारण करने वाली) यश, कीर्ति और लक्ष्मी (धन सम्पदा) की रक्षा करें। इन्द्राणी गोत्र की तथा चण्डिका चौपायों की रक्षा करें ॥३५॥

"*Kālrātri*, protect my entestines and *Mukuteshwarī* my biles. *Padmāvatī* may protect my *Padmakosh* and *Chudāmani* my phlegm. 32.

"*Jwālāmukhī*, protect the enamel of my nails and the impenetrable *Abhedyā* may protect all the joints of my body. My semen be protected by *Brahmānī* and *Chhatreshwarī* may protect my shadow. 33.

My ego, mind and intellect may be protected by *Dharmachārinī*, and may protect the five winds of my body named *prān*, *apān vyān*, *udān* and *samān*. 34.

"*Chakrinī*, protect my fame, glory, wealth, prestige and knowledge. My clan (gotra) be protected by *Indrānī* and livestock by *Chandikā*. 35.

पुत्रान्रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ।
मार्गं क्षेमंकरी रक्षेद्विजया सर्वतः स्थिता ॥ ३६ ॥

रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु ।
तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती पापनाशिनी ॥ ३७ ॥

पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्र हि गच्छति ॥ ३८ ॥

तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सर्वकामिकः ।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ ३९ ॥

महालक्ष्मी पुत्रों की तथा भैरवी भार्या (पत्नी) की रक्षा करें। क्षेमंकरी मार्ग की और सर्वत्र व्यापक विजया देवी चारों दिशाओं में मेरी रक्षा करें ॥३६॥

हे देवि ! आप जयन्ती (सर्वोत्कृष्टा) और पाप-नाशिनी हैं। इसलिए जो स्थान कवच के द्वारा रक्षा हीन हैं उन सबकी आप रक्षा करें ॥३७॥

अपना शुभ चाहने वाला मानव, कवच से रहित होकर एक पग (कदम) भी न जाये। क्योंकि वह कवच से युक्त होकर जहां कहीं भी जाता है, वहां उसे अर्थ लाभ, अभिलाषाओं की पूर्ति और सर्वविध कामनाओं में विजय प्राप्त होती है ॥३८-३९॥

Mahālaxmī may protect my sons and *Bhairavī* my wife. My path be protected by *Kshemnkarī* and *Vijayā* may protect me everywhere. 36.

"The places left in this armour, and as such defenceless, may all be protected for me by you, O goddess, who are ever victorious and the destroyer of sins. 37.

"Anyone wishing himself well, should not move a single step, and covering himself with this armour wherever he goes, he will find gains, victory and the fulfilment of all his wishes there. Whatever goals he sets before himself, will difinitely be obtained. 38–39.

परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ।
निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः ॥ ४० ॥

त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ।
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ॥ ४१ ॥

यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ।
दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्ये चापराजितः ॥ ४२ ॥

जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ।
नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः ॥ ४३ ॥

वह अष्ट सिद्धि रूप अतुलनीय, परम ऐश्वर्य इसी जन्म में प्राप्त कर लेता है तथा युद्ध क्षेत्र में शत्रु से अजेय बनकर सब प्रकार के भयों से मुक्त हो जाता है ॥४०॥

कवच पाठ करने वाला मानव तीनों लोकों में पूज्य होता है। यह देवी कवच देवताओं को भी दुर्लभ है ॥ ४१ ॥

जो कोई व्यक्ति इस कवच का नित्य. नियमपूर्वक प्रातः मध्याह्न एवं सायं (तीनों संध्याकालों में) श्रद्धापूर्वक पाठ करता है, उसको देवसंपत्ति प्राप्त होती है और तीनों लोकों में उसका ऐश्वर्य अपराजित रहता है ॥ ४२ ॥

कवच से अपनी रक्षा करने वाला अकाल मृत्यु से बचकर मनुष्य की पूर्ण आयु अर्थात् एक सौ बीस वर्षों तक जीवित रहता है। कवच के हृदय में स्मरण करने से स्थावर विष (वृक्ष, लताओं आदि से उत्पन्न विष), त्वचा संबंधी विकार (चर्मरोग) तथा रक्तविकार संबंधी समस्त व्याधियां नष्ट हो जाती हैं। कवच की आवृत्ति करने मात्र से जंगम विष (सर्प दंश

"He will find the unequalled best on the face of the earth in his possession. He becomes fearless and unvanquishable in war. 40.

"Every mortal who covers himself with this armour is worshipped in all the three worlds. This *Devī's Kavach* is inaccessible to gods even. 41.

"Anyone who recites regularly everyday three times with worshipful devotion, is endowed with divine power and is never defeated in all the three worlds. 42.

"He lives an untroubled life of full hundred years and is free from any of the ill-deaths. Leprosy and all eruptible diseases can never

स्थावरं जङ्गमं चापि कृत्रिमं चापि यद्विषम् ।
अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले ॥ ४४ ॥

भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः ।
सहजाः कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा ॥ ४५ ॥

अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः ।
ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः ॥ ४६ ॥

ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ।
नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते ॥ ४७ ॥

आदि से उत्पन्न विष), कृत्रिम विष (अफीम, तेल आदि के संयोग से उत्पन्न विष) नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त सब प्रकार के अभिचार-मारण प्रयोग तथा मंत्र, तंत्र आदि के प्रयोग भी नष्ट हो जाते हैं ॥ ४३-४४ ॥

भूचर (ग्राम देवता) खेचर (आकाशगामी देवगण) जलज (जल में उत्पन्न वरुण गण आदि), क्षुद्र देवताओं के प्रकोप, सहज कुलोत्पन्न सौंदर्य शोभा को नष्ट करने वाले क्षुद्र देवता तथा डाकिनी, शाकिनी आदि, कवचधारी मानव के दर्शन मात्र से ही अदृश्य तथा प्रभावहीन हो जाती हैं ॥ ४५ ॥

अंतरिक्ष में रहने वाले घोर (भयानक स्वरूप वाले) राक्षसों, महाबली डाकिनियों (मंत्रसिद्ध स्त्रियां) ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष तथा गंधर्वों (देव-योनि विशेष) का प्रकोप भी कवच धारण करने से समाप्त हो जाता है ॥ ४६ ॥

ब्रह्मराक्षस, वेताल कूष्माण्डा तथा भैरव (भय देने वाले) ये सभी अनिष्टकारी देव विशेष, कवच स्मरणकर्ता साधक के दर्शन मात्र से ही पलायन कर नष्ट हो जाते हैं ॥ ४७ ॥

befall him and he is free from the ill- effects of all the herbal, chemical, animal and artificial forms of poison. Besides, no ill-effects of all accursed practices that exist on the earth generated by *Mantra* or machine trouble him ever." 43-44.

"No ghosts, vampires and evil-spirits of the earth, sky or water, or spirits easily evoked; evil spirits associated since birth or with family, will smite him with diseases like throat glands. *Dākinī* and *Shākinī* will be power-less before him." 45.

"Flying ghosts of fierce appearance, and very terrible *Dākinīs*; planets, ghosts, and spirits; yakshas, Gandharvas, and the demons can do him no ill." 46.

"The supreme demon, the vampire, the evil spirits and the Bhairawas etc; will be destroyed at his very sight, if he has kept the armour in his heart. 47.

मानोन्नतिर्भवेद्राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम् ।
यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले ॥ ४८ ॥

जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ।
यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम् ॥ ४९ ॥

तावत्तिष्ठति मेदिन्यां संततिः पुत्रपौत्रकी ।
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ॥ ५० ॥

प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः ॥ ५०½ ॥

॥ इति देव्याः कवचं सम्पूर्णम् ॥

साधक को राज सम्मान प्राप्त होता है तथा उत्कृष्ट तेज की वृद्धि होती है। वह अपनी कीर्ति से विभूषित होकर इस भूमंडल पर असीम यश प्राप्त करता है ॥ ४८ ॥

जो सर्वप्रथम कवच का पाठ करके फिर सप्तशती रूप सात सौ मंत्रों वाली चंडिका की स्तुति का जप करता है, वह महामाया के प्रभाव से (प्रसन्नता से) जब तक पर्वत, वन और कानन से युक्त यह पृथ्वी अस्तित्व में रहती है तब तक उसकी पुत्र पौत्र आदि संततियां अविच्छिन्न रूप से अवस्थित रहती हैं अर्थात् उसका वंश विच्छेद नहीं होता। मृत्यु के बाद वह पुरुष भगवती महामाया के अनुग्रह से देवताओं को भी दुर्लभ मोक्ष रूप स्थान प्राप्त करता है ॥ ४९-५०½ ॥

॥ देवी कवच सम्पूर्ण हुआ ॥

"He will receive honours at the royal court and his *tej* or glory will increase infinitely. He also enhances his reputation and becomes famous on this earth." 48.

"One who completes the armour before chanting the *Chandī Saptashati*, his sons, grandsons and progeny will remain on this earth as long as this planet lasts alongwith its forests and mountains. By the grace of *Mahāmāyā* he will obtain a place after his death which is unattainable to the Gods even and will attain his ultimate stature." 49–50½.

Here ends the *Devīs Kavach*

Notes :

1. Kavach means a protective armour.
2. A mythological bird, a species of large aquila.

3–8. Names of different weapons.

अर्गला स्तुतिः

मार्कण्डेय उवाच

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥

मधुकैटभविद्राविविधातृवरदे नमः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २ ॥

अर्गला स्तोत्र

मार्कण्डेय ऋषि ने कहा— हे भगवति ! आप जयंती (सर्वोत्कृष्टा), मंगला (मोक्षप्रदा), काली (प्रलयकाल में संसार का भक्षण करने वाली), भद्र-काली (मंगल करने वालीतथा सुखदायिनी) कपालिनी (कपाल धारण करने वाली) अर्थात् प्रपंच स्वरूप विश्व कमल को हाथ में धारण करने वाली, दुर्गा (अष्टांग योग उपासना द्वारा प्राप्त होने वाली) क्षमा (भक्तों तथा अन्य सभी के अपराधों को मातृ-रूप में सहन करने वाली अत्यन्त कारुण्यरूपिणी) शिवा (चैतन्यरूपिणी), धात्री (सर्व प्रपंच को धारण करने वाली) स्वाहा (देवपोषिणी) स्वधा (पितृ-पोषिणी) आदि अनेक महागुणों से युक्त हैं। हे अंब ! आपकी परिचर्या का सामर्थ्य मुझ में नहीं है। आपको प्रणाम हो ॥ १ ॥

हे मधु और कैटभ राक्षसों का विनाश करने वाली, ब्रह्मा को वरदान देने वाली, मेरे नमस्कार से प्रसन्न होकर मुझे रूप (आत्म रूप सौंदर्य का ज्ञान), जय (काम, क्रोध, लोभ, मद और मात्सर्य

ARGALĀ[1] HYMNS

Markandeya said

"Om, Reverence to Goddess *Chandikā* variously known as *Jayantī*, *Mangalā*, *Kālī*, *Bhadrakāli*, *Kapālini*, *Durgā*, *Kshamā*, *Shivā*, *Dhātrī*, *Swāha* and *Swadhā* 1.

"The Killer of demons Madhu and Kaitabh and bestower of boons to *Brahmā* himself, I pay reverence to you, grant me fame and destroy my foes. 2.

महिषासुरनिर्नाशविधात्रि वरदे नमः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ३ ॥

वन्दिताङ्घ्रियुगे देवि देवसौभाग्यदायिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ४ ॥

रक्तबीजवधे देवि चण्डमुण्डविनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ५ ॥

अचिन्त्यरूपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ६ ॥

आदि पर विजय), यश (किसी भी दुर्गुण से पराभव न होना), सर्वत्र दुर्गुणों से शून्य तप, दान सौजन्य आदि प्रशंसा का पात्र बनावें ॥ २ ॥

हे महिषासुर नाशिनि ! आत्मिक कल्याण के विपरीत कार्य करने वाले मेरे शत्रुओं का संहार करो तथा मुझे रूप, जय एवं यश प्रदान करो ॥ ३ ॥

ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र द्वारा वन्दित चरणों वाली एवं देवताओं को शत्रु बाधा से मुक्त राज्य सुख प्रदान करने वाली, हे देवि ! मुझे रूप, जय एवं यश प्रदान करो तथा मेरे शत्रुओं का शमन करो ॥ ४ ॥

हे रक्तबीजवधकारिणि ! चण्ड एवं मुण्ड नामक राक्षसों का संहार करने वाली, मुझे रूप, यश एवं जय प्रदान करते हुए मेरे शत्रुओं का शमन करो ॥ ५ ॥

अचिन्त्य स्वरूप और चरित्र को धारण करने वाली तथा भक्तों के समस्त शत्रुओं का संहार करने वाली हे देवि ! मुझे रूप, जय और यश प्रदान करो तथा मेरे शत्रुओं का शमन करो ॥ ६ ॥

"The destroyer of *Mahishāsur* and the giver of boons to *Brahmā*, grant me beauty, victory and fame and destory my foes. 3.

"The goddess whose feet are worth worshipping by all and who is the giver of all happiness and fortune, grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 4.

"The slayer of demon *Raktabīj* and the destroyer of Chand and Mund, grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 5.

"The goddess whose resplendent form and glory are beyond the reach of thought and imagination and who is the killer of all enemies, grant me beauty, victory, and fame and destroy my foes. 6.

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके प्रणताय मे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ७ ॥

स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ८ ॥

चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ९ ॥

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि देवि परं सुखम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १० ॥

हे परब्रह्मरूपिणि चण्डिके ! भक्ति से नतमस्तक होकर जो भक्त आपको प्रणाम करते हैं उनको तथा मुझे रूप, जय एवं यश प्रदान करो एवं काम क्रोध आदि शत्रुओं का शमन करो ॥ ७ ॥

हे व्याधिनाशिनि ! भक्तिपूर्वक आपकी स्तुति करने वाले भक्तों को रूप, जय तथा यश दो और उनके शत्रुओं का शमन करो ॥ ८ ॥

चंडिके ! जो निरंतर आपकी अर्चना करते है उन भक्तों को रूप, जय, यश प्रदान कर उनके शत्रुओं का शमन करो ॥ ९ ॥

हे प्रकाशस्वरूपिणि देवि ! छः प्रकार के ऐश्वर्य तथा रूप सौभाग्य, आरोग्य और ब्रह्मानंद का सुख मुझे प्रदान करो तथा रूप, जय और यश प्रदान कर मेरे शत्रुओं का शमन करो ॥ १० ॥

"Those who bow at your feet with devotion, O *Chandikā*, reliever from sins, grant them beauty, victory and fame and destroy their foes. 7.

"Those who devotedly sing your praises, O *Chandikā*, healer of all diseases, grant them beauty, victory and fame and destroy their foes. 8.

"O *Chandikā*, those who constantly worship you with devotion, grant them beauty, victory and fame and destroy their foes. 9.

"Bestow good fortune, good health and perfect happiness upon me and grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 10.

विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ११ ॥

विधेहि देवि कल्याणं विधेहि विपुलां श्रियम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १२ ॥

विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १३ ॥

प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १४ ॥

मुझसे विद्वेष करने वाले शत्रुओं का विनाश करो और मुझे सर्वोत्कृष्ट सामर्थ्य प्रदान कर रूप, यश एवं जय दो तथा काम-क्रोध रूप शत्रुओं का शमन करो ॥ ११ ॥

हे देवि ! कल्याण करो और धन तथा संपत्ति प्रदान कर रूप, जय और यश दो तथा शत्रुओं का शमन करो ॥ १२ ॥

मुझ भक्त को ब्रह्मविद्या, यश और धन से संयुक्त करो तथा रूप यश एवं जय दो तथा काम, क्रोध-रूप शत्रुओं का शमन करो ॥ १३ ॥

भयंकर दैत्यों के प्रबल अहंकार को समाप्त करने वाली हे चण्डिके ! आपके चरणों में मैं प्रणत हूं, मुझे रूप, जय एवं यश प्रदान कर मेरे शत्रुओं का नाश करो ॥ १४ ॥

"Decrease all jealousy (against me) and increase my strength and power. Grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 11.

"Bless me with welfare and grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 12.

"Transform this devotee into a learned scholar and a man of wealth and grant him beauty, victory and fame and destroy his enemies. 13.

"The destroyer of the prides of mighty giants O *Chandikā*, I bow at your feet. Grant me beauty, victory and fame and kill my foes. 14.

चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १५ ॥

कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्तया तथाम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १६ ॥

हिमाचलसुतानाथपूजिते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १७ ॥

सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणेऽम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १८ ॥

धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष रूप चार भुजाओं को धारण करने वाली तथा चतुर्मुख ब्रह्मा द्वारा भली-भाँति संस्तुत हे परमेश्वरि ! मुझे रूप, जय तथा यश दो और मेरे शत्रुओं का शमन करो ॥ १५ ॥

अविच्छिन्न भक्ति सहित भगवान कृष्ण द्वारा संस्तुत हे अम्बिके ! मुझे रूप, जय एवं यश प्रदान कर मेरे काम, क्रोधादि शत्रुओं का शमन करो ॥ १६ ॥

भगवान शिव द्वारा पूजित हे परमेश्वरि ! आप मुझे रूप, जय एवं यश प्रदान करें और मेरे शत्रुओं का विनाश करें ॥ १७ ॥

हे जगदम्बिके ! सुर और असुर नतमस्तक होकर अपने मणियुक्त मुकुटों के द्वारा आपके चरणों का बारम्बार स्पर्श करते हैं। आप मुझे रूप, जय एवं यश दो तथा मेरे शत्रुओं का शमन करो ॥ १८ ॥

"Praised by *Brahmā*, O four-handed goddess *Parmeshwarī*, grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 15.

"Vishnu constantly sings your eulogies with devotion, O Goddess *Ambikā*. Grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 16.

"*Parmeshwarī*, you are eulogised by Shiva. Grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 17.

"O *Ambikā*, gods and demons rub their crown jewels at your feet. Grant beauty, victory and fame and destroy foes. 18.

इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १९ ॥

देवि प्रचण्डदोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २० ॥

देवि भक्तजनोद्दामदत्तानन्दोदयेऽम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २१ ॥

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् ।
तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ॥ २२ ॥

हे परमेश्वरि ! आराधना द्वारा प्रसन्न होकर इन्द्राणी को इन्द्र का पता बताने वाली आप रूप, जय तथा यश प्रदान करें और काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करें ॥ १९ ॥

प्रचंड भुजदण्ड धारण करने वाले दैत्यों के गर्व को नष्ट करने वाली हे क्रीड़ाशीले ! मुझे रूप, जय, तथा यश दो और शत्रुओं का विनाश करो ॥ २० ॥

भक्तजनों में उत्कट भक्ति रखने वाले लोगों को मोक्ष प्रदान करने वाली हे देवि ! मुझे आप रूप, जय और यश प्रदान करो तथा काम, क्रोधरूप शत्रुओं का नाश करो ॥ २१ ॥

मन को मोहित करने वाली तथा पूर्ण रूप से मेरा अनुगमन करने वाली और भयंकर संसार सागर से तारने वाली मदालसा और चूड़ालया के सदृश सहधर्मिणी (पत्नी) प्रदान करो तथा रूप, जय और यश देकर काम क्रोधादि शत्रुओं का शमन करो ॥ २२ ॥

"O *Parmeshwarī*, Indra worships you with pious feelings. Grant me beauty, victory and fame and destroy my foes. 19.

"The humbler of the prides of giants having mighty arms, O Goddess, grant me beauty victory and fame and destroy my foes. 20.

"Goddess *Ambikā*, you shower the highest bliss upon your devotees. Grant Me beauty, victory and fame and destroy my foes. 21.

"Grant me a charming wife, who may be fufiller of my heart's desires, and sprung from a respectable family, who might sail me through this uncrossable sea of worldly woes 22.

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः ।
स तु सप्तशतीसंख्यावरमाप्नोति संपदः ॥ २३ ॥

॥ इति अर्गला स्तुतिः सम्पूर्णा ॥

सप्तशती रूप महास्तोत्र की अंगभूत अर्गला स्तुति का पाठ करके जो सप्तशती का पाठ करता है, वह सात सौ जप संख्या के द्वारा मिलने वाले श्रेष्ठ फल को प्राप्त करता है, साथ ही उसे अन्य सम्पत्तियाँ भी प्राप्त होती हैं ॥ २३ ॥

अर्गला स्तुति सम्पूर्ण हुई ।

टिप्पणी—सिद्धि में प्रतिबन्धक पाप को अर्गला कहते हैं। अतएव इस प्रतिबन्धक पाप को नष्ट करने वाली स्तुति का नाम अर्गला है।

"Any one who after going through these hymns recites the great seven hundred versed *Saptashatī*, is blessed by the boons in the same number and consequently attains wealth and prosperity. 23,

Here end the *Argala* Hymns.

1. *Argala*–literally means a door–bar. The hymns are for extra protection (after the putting on of the divine armour).

Note : '*Argalā*' is the obstruction of sins in the attainment of the ultimate good. The hymns that remove this obstruction are known as the *Argalā* hymns.

देवी कीलकम्

विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे ।
श्रेयः प्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे ॥ १ ॥

सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणामभिकीलकम् ।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ॥ २ ॥

सिध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि ।
एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिध्यति ॥ ३ ॥

देवी-कीलक

विशुद्ध ज्ञान रूपी देह को धारण करने वाले, वेद त्रय रूप, दिव्य नेत्र वाले, कल्याण प्राप्ति के कारण, अर्द्ध चन्द्र को मस्तक पर धारण करने वाले भगवान शिव को नमस्कार है ॥ १ ॥

सर्व मन्त्रों की सिद्धियों में प्रतिबन्धक शाप रूप 'कीलक' को नष्ट करने वाले सप्तशती स्तोत्र को अभिकीलक समझकर उपासना करनी चाहिए। वैसे सप्तशती स्तोत्र के बिना भी निष्ठापूर्वक विभिन्न मन्त्रों का निरन्तर जप करने से सभी प्रकार के कल्याणों की प्राप्ति होती है ॥ २ ॥

मन्त्र जप करने वालों को भी उच्चाटन आदि षट्कर्मों की सिद्धि मिलती हैं और अलभ्य वस्तु को भी वे प्राप्त करते हैं। किन्तु मन्त्र जप न करने वाले पुरुषों को केवल सप्तशती के पाठ मात्र से ही सर्व सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं, और सच्चिदानन्द-रूपिणी भगवती चण्डी उन पर प्रसन्न होती हैं ॥ ३ ॥

THE *KEELAK*[1]

Markandeya said :

"Om, Reverence to Shiva, who is pure knowledge incarnate, sporting halfmoon in his headgear,has three *Vedas* as the three divine eyes and who is the medium of attaining ultimate good. 1.

"The knowledge of all this (i. e. the *Sapta-shati*) is certainly attainable in full, which nails the *mantras* by their roots, although one who constantly recites other *mantras* also attains happiness. 2.

"He also (the reciter of other *mantras*) reaps the fruit of *Uchchātan* etc. and he also attains rare wealth and many other things. But those who sing her eulogies only with these seven hundred versed hymns, attain the Devi's grace. 3.

न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते ।
विना जाप्येन सिध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥ ४ ॥

समग्राण्यपि सेत्स्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः ।
कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥ ५ ॥

स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुह्यं चकार सः ।
समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथावन्नियन्त्रणाम् ॥ ६ ॥

सप्तशती स्तोत्र का पाठ करने वाले साधक के लिए किसी भी मन्त्र का साधन तथा किसी भी औषधि का उपयोग आवश्यक नहीं होता, अपितु विभिन्न मन्त्रों के जप के बिना भी उच्चाटनादिक आभिचारिक कर्म तथा अन्य सभी अभिलषित सिद्धियाँ इसके पाठ मात्र से ही प्राप्त हो जाती हैं ॥ ४ ॥

They do not require any *mantra* or any medicine at all. Their *Uchchātan* etc. are realised without any course of recitations. 4.

लोक की इस शंका का कि "सप्तशती के पाठ मात्र से सभी मनोभिलषित कार्य सिद्ध हो जाते हैं, तथा अन्य मन्त्रों के जप द्वारा भी ये कार्य सिद्ध किये जा सकते हैं, ऐसी स्थिति में इन दोनों में सर्वोत्कृष्ट साधन कौन सा है ?" भगवान शिव इस लोक शंका के निवारणार्थ समागत लोगों को कहते हैं कि अन्य मन्त्रों की तुलना में यह स्तोत्र ही सर्वोत्कृष्ट एवं शुभ फल देने वाला है ॥ ५ ॥

"The people's doubts *vis-a-vis* other *mantras'* efficacy in bestowing goods were removed by Lord Shiva by explaining to them that this (*Saptashatī*) is the best of all. 5.

इसके अनन्तर 'सप्तशती रूप चण्डिका स्तोत्र, जो रहस्यमय एवं अन्य मन्त्रों की अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट है", मार्कण्डेय ऋषि तन्त्रों में बताए गए इस इतिहास को प्रकट कर सप्तशती के माहात्म्य को पुनः

"Here Markandeya further elucidates Shiva's verdict saying that is this why He(Shiva) shrouded these Chandika Hymns in secrecy. The virtue earned by reciting them (as opposed to reciting others)

सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न संशयः ।
कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥ ७ ॥

ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति ।
इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥ ८ ॥

शिष्यों को बताते हुए भगवान शिव के अभिप्राय का स्पष्टीकरण करते हैं—इस महास्तोत्र के पाठ से उत्पन्न फल की समाप्ति कभी नहीं होती जबकि अन्य मन्त्रों द्वारा प्राप्त पुण्य समाप्त हो जाता है। अतएव शिव द्वारा पूर्वोक्त मन्त्र जप की तुलना में सप्तशती का समर्थन किया जाना वास्तविक है, यह तुम लोगों को समझ लेना चाहिए ॥ ६ ॥

अन्य मन्त्रों का जप कर्त्ता भी यदि सप्तशती स्तोत्र का पाठ करता है तो वह भी मनोभिलषित फल प्राप्त करता है। क्योंकि सभी मन्त्रों की सिद्धि में, सिद्धि के प्रतिबन्धक तत्वों को नष्ट करने वाला यह सप्तशती स्तोत्र ही है। नवार्ण मंत्र के जप के साथ इसके पाठ का विधान केवल शीघ्र फल प्राप्ति के लिए किया जाता है ।

मार्कण्डेय ने शिष्यों से कहा कि भगवान शंकर ने इस स्तोत्र को इसलिए कीलित कर दिया जिससे कि अनधिकारी इसके अचिन्त्य फल को समान रूप से प्राप्त न कर सकें। उन्होने इसके निष्कीलन का प्रकार इस प्रकार बताया है–कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी या

lasts for ever and so Shiva's verdict should be understood as it is. 6.

"He also will attain ultimate happiness, there is not the least doubt. Recitation with the *Navārna* Mantra is to expedite the fruition of deeds. A devotee, who worships the Devi on the *Chaturdashi* (fourteenth day) and *Ashtamī* (eighth day) of the first fortnight of the lunar month with full dedication and offers all his possessions to Her and takes them back as her bounty, is freed from all curses. Lord *Mahādev* has restrained *Keel* the disrupter, in this manner so that undesirable persons may not misuse it. 7–8.

यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम् ।
स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते वने ॥ ९ ॥

न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते ।
नाल्पमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ १० ॥

अष्टमी तिथि को एकाग्रचित्त होकर उपासक अपना समस्त कर्मोपार्जित धन, सर्वस्व समर्पण की भावना से देवी को अर्पित कर देता है तथा सांसारिक व्यवहार के निर्वाहार्थ उसके प्रसाद के रूप में इस धन को पुनः ग्रहण कर लेता है। इस तरह वह मानसिक संकल्प के द्वारा उस द्रव्य को प्रसाद रूप में लेकर धर्म शास्त्रोक्त विधान के अनुसार व्यय करता हुआ देवी के अधीन हो जाता है। जो इस विधान को अपनाता है भगवती माता उस पर प्रसन्न होती है ॥ ७–८ ॥

पूर्वोक्त विधान के अनुसार जो अपना उपार्जित द्रव्य अर्पित करता है वह कीलन के दोष से मुक्त हो जाता है। वह सिद्ध होकर देवी का अभिन्न अंग बन जाता है, गन्धर्व के रूप में देवतुल्य हो जाता है और सभी प्रकार के सांसारिक संरक्षण में समर्थ हो जाता है ॥ ९ ॥

ऐसा व्यक्ति कहीं भी जाय तो उसे कोई भय नहीं रहता तथा अकाल मृत्यु को भी वह अपने वश में कर लेता है और आयुष्य के पूर्ण भोग के साथ मोक्ष लाभ करता है ॥ १० ॥

"One who frees himself from *Keel* in the proper manner and recites these hymns with clear enunciation becomes a *Siddha*, *gana* and a *gandharva* by its virtue. 9.

"No fear befalls him ever while he is on his journeys through the world. He is never caught by an untimely death and he attains liberation after his death. 10.

ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वाणो विनश्यति ।
ततो ज्ञात्वैव संपन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥ ११ ॥

सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद्दृश्यते ललनाजने ।
तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥ १२ ॥

शनैस्तु जाप्यमानेऽस्मिन्स्तोत्रे संपत्तिरुच्चकैः ।
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥ १३ ॥

ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसंपदः ।
शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥ १४ ॥

॥ इति देव्याः कीलकं सम्पूर्णम् ॥

इस कीलक विधान को जानकर उसके अनुसार पाठ करना चाहिए, ऐसा न करने वाला असफल और नष्ट हो जाता है। अतएव विज्ञ पुरुष कीलक ज्ञान के साथ दान प्रतिग्रह रूप विधान के साथ ही इस सप्तशती स्तोत्र का पाठ आरम्भ करते हैं ॥ ११ ॥

स्त्रियों में जो भी सौभाग्य, सौन्दर्य आदि दृष्टि-गोचर होता है, वह उसी की प्रसन्नता का फल है, इसीलिए इस स्तोत्र का जप शुभदायी होता है ॥ १२ ॥

सप्तशती के अस्फुट अथवा मन्द स्वर में पाठ करने से फल प्राप्ति में न्यूनता होती है, किन्तु उच्च स्वर में पाठ करने से पूर्ण सम्पत्ति का लाभ होता है। अतः इसका सस्वर पाठ ही सर्वोत्तम है ॥१३॥

जिसकी प्रसन्नता से ऐश्वर्य, सौभाग्य तथा आरोग्य और समस्त सम्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं साथ ही सर्व शत्रुओं का विनाश होता है एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है, ऐसी स्थिति में उस चिन्तामणि भगवती सर्वकामप्रपूरणी को छोड़कर भाग्यहीन लोग अन्य देवों की उपासना में क्यों लीन होते हैं ? ॥१४॥

देवी कीलक सम्पूर्ण हुआ ।

"After knowing all about the *Keelak*, the recitation of *Saptashatī* Hymns should begin. One not doing so will be destroyed. These Hymns are sanctified by the knowledge of *Keelak* and so the wise begin their *Saptashatī* recitation after knowing the *Keelak*. 11.

Whatever symptoms of good fortune and beauty etc. are to be seen in women are all due to the *Devī's* grace. The recitation is therefore highly profitable. 12.

"These hymns should be recited on a high pitch for reading in a low voice, shall yield low results too. Highpitched recitation alone will yield rich dividends. 13.

"By Her grace one attains excellence, good fortune, prosperity, defeat of enemies and deliverance. So why not people eulogize that Mother goddess ? 14."

Here ends the *Devī's Keelak*.

---

1. *Keelak* literally means a fixative, something which nails down.

ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वाणो विनश्यति ।
ततो ज्ञात्वैव संपन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥ ११ ॥

सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद्दृश्यते ललनाजने ।
तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥ १२ ॥

शनैस्तु जाप्यमानेऽस्मिन्स्तोत्रे संपत्तिरुच्चकैः ।
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥ १३ ॥

ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसंपदः ।
शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥ १४ ॥

॥ इति देव्याः कीलकं सम्पूर्णम् ॥

इस कीलक विधान को जानकर उसके अनुसार पाठ करना चाहिए, ऐसा न करने वाला असफल और नष्ट हो जाता है। अतएव विज्ञ पुरुष कीलक ज्ञान के साथ दान प्रतिग्रह रूप विधान के साथ ही इस सप्तशती स्तोत्र का पाठ आरम्भ करते हैं ॥ ११ ॥

स्त्रियों में जो भी सौभाग्य, सौन्दर्य आदि दृष्टि-गोचर होता है, वह उसी की प्रसन्नता का फल है, इसीलिए इस स्तोत्र का जप शुभदायी होता है ॥ १२ ॥

सप्तशती के अस्फुट अथवा मन्द स्वर में पाठ करने से फल प्राप्ति में न्यूनता होती है, किन्तु उच्च स्वर में पाठ करने से पूर्ण सम्पत्ति का लाभ होता है। अतः इसका सस्वर पाठ ही सर्वोत्तम है ॥१३॥

जिसकी प्रसन्नता से ऐश्वर्य, सौभाग्य तथा आरोग्य और समस्त सम्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं साथ ही सर्व शत्रुओं का विनाश होता है एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है, ऐसी स्थिति में उस चिन्तामणि भगवती सर्वकामप्रपूरणी को छोड़कर भाग्यहीन लोग अन्य देवों की उपासना में क्यों लीन होते हैं ? ॥१४॥

देवी कीलक सम्पूर्ण हुआ ।

"After knowing all about the *Keelak*, the recitation of *Saptashatī* Hymns should begin. One not doing so will be destroyed. These Hymns are sanctified by the knowledge of *Keelak* and so the wise begin their *Saptashatī* recitation after knowing the *Keelak*. 11.

Whatever symptoms of good fortune and beauty etc. are to be seen in women are all due to the *Devī's* grace. The recitation is therefore highly profitable. 12.

"These hymns should be recited on a high pitch for reading in a low voice, shall yield low results too. Highpitched recitation alone will yield rich dividends. 13.

"By Her grace one attains excellence, good fortune, prosperity, defeat of enemies and deliverance. So why not people eulogize that Mother goddess ? 14."

Here ends the *Devī's Keelak*.

---

1. *Keelak* literally means a fixative, something which nails down.

रात्री सूक्तम्

ओं रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः ।
विश्वा अधिश्रियोधित ॥ १ ॥

ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः ।
ज्योतिषा बाधते तमः ॥ २ ॥

वेदोक्त रात्रिसूक्त

प्रकाश स्वरूपा देवी अपने रात्रि स्वरूप के द्वारा, जिसे ब्रह्म की माया शक्ति कहते हैं, समस्त विश्व के महदादि तत्वों के प्रतिबिम्ब रूप इन्द्रियों द्वारा संसार के समस्त पदार्थों के स्वनिर्मित संसार चक्र के सत्-असत् कर्मों को सर्वप्रथम देखती हैं, तत्पश्चात् सांसारिक-प्राणियों के कर्मानुसार फल देती हैं। आशय यह है कि चिच्छक्ति स्वरूपा भगवती विश्व सृष्टि का कारण हैं, इसलिए अनन्त जीवों की शुभाशुभ अपरिपक्वता के कारण फल प्रदान का समय न होने से सम्पूर्ण विश्व प्रपंच सूत्र को अपने में विलीन कर लेती हैं और फल प्रदान का समय आ जाने पर रात्रिरूप वही चिच्छक्ति महत् आदि तत्वों द्वारा सृष्टि निर्माण कर समस्त प्राणियों के विभिन्न कर्मों का अवलोकन करती हैं और कर्मानुसार फल देती हैं ॥ १ ॥

यह अमर चिच्छक्ति समस्त ब्रह्माण्ड को अपने मे निहित कर लेती है और अपने तेज प्रकाश के द्वारा अधिष्ठान चैतन्य के रूप में जड़, चेतन, लता,

The Vaidic *RĀTRI-SŪKTA*

The goddess of the dark night who is also the Brahma's power of *Māyā*, is the veritable goddess of light and as such witnesses the good and evil deeds of the world's creatures created by herself and destines the fruit of their deeds accordingly by incarnating herself in various forms. (1)

This Eternal Power is immortal and pervades the entire universe of creepers and trees and also infuses the illumination of consciousness into the inert darkness of matter. (2)

निरुस्वसारमस्कृतोषसं देव्यायती ।
अपेदुहासते तमः ॥ ३ ॥

सा नो अद्य यस्या वयं नितेयामन्न विक्ष्महि ।
वृक्षेन वसतिं वयः ॥ ४ ॥

निग्रामासो अविक्षत निपद्वन्तो निपक्षिणः ।
निश्येनासश्चिदर्थिनः ॥ ५ ॥

वृक्षादि सभी पदार्थों को प्रकाशित करती है तथा वेदमार्गानुयायी प्राणियों की चित्त शुद्धि के अनुसार उनके तमोमूलक अज्ञान को अपने ज्योति-स्वरूप द्वारा नष्ट कर देती है ॥ २ ॥

प्रकाश स्वरूपा यह चिच्छक्ति अपनी बहन उषा को जो अविद्या की आवरण शक्ति है, तिरोहित कर देती है। उषा के बीज दग्ध होने पर अज्ञान रूप अन्धकार नष्ट हो जाता है ॥ ३ ॥

इस समय वह रात्रिस्वरूपिणी चिच्छक्ति हम पर प्रसन्न हो। रात्रि रूप में जिसके आने पर पक्षी अपने घोंसलों में रात्रिवास करते हैं, उसी प्रकार हम भी निद्रा के द्वारा सुखपूर्वक आत्मस्वरूप में स्थित होते हैं ॥ ४ ॥

इस चित्स्वरूपा रात्रि की सत्ता में बाल, वृद्ध, युवा सब लोग तथा ग्रामवासी गाय आदि पशु और पक्षी, सभी प्रकार की यात्रा करने वाले यात्री तक सुख से सोते हैं। तात्पर्य यह कि जो प्राणी भगवती से अपरिचित हैं, वे भी इस करुणामयी की कृपा से निद्रा द्वारा स्वस्थ होते हैं। जैसे—नासमझ बालक माँ की कृपा से सोते हैं ॥ ५ ॥

This Conscious power of light, Ratri Devi ushers in her sister Usha, the goddess of dawn who dispels the darkness of ignorance by her rays of consciousnese. (3)

On her appearance all living beings sleep happily like birds in their nests and She may be pleased to bless me with the sleep of self-bliss. (4)

In her lap, all villagers, other animals walking on their feet, birds and beetles flying on wings and wayfarens happily fall asleep and recoup their energies. (5)

यावया वृक्यं वृकं यवयस्तेनमूर्म्ये ।
अथानः सुतरा भव ॥ ६ ॥

उपमापेपिशत्तमः कृष्णं व्यक्तमस्थित ।
उष ऋणेव यातय ॥ ७ ॥

उप ते गा इवाकरं वृणीष्व दुहितर्दिवः ।
रात्रिस्तोमं न जिग्युषे ॥ ८ ॥

॥ इति रात्रिसूक्तं सम्पूर्णम् ॥

हे रात्रिरूपिणी चिच्छक्ति ! आप दयालु हैं, अतः हम जैसे अज्ञानियों के भले-बुरे कर्मों को अन-देखा करके वासना रूप भेड़िये को और उसके सदृश हिंसक पाप को हमसे दूर करें। इसी प्रकार तस्कर तथा चित्त और मन तथा अर्थ का अपहरण करने वाले कामादिक शत्रुओं को दूर कर मोक्ष दें ॥ ६ ॥

हे रात्रिदेवि ! अज्ञान रूप में सभी वस्तुओं के साथ लगा हुआ यह काला अन्धकार हमें अपनी लपेट में ले चुका है। इसलिए हे उषः ! ऋण मुक्ति की तरह हमें भी इससे मुक्त करो। जिस प्रकार स्तुति करने वालों को धन प्रदान कर उन्हें आप ऋण मुक्त करती हैं, उसी प्रकार ज्ञानरूपी धन प्रदान कर मुझे अज्ञान रूपी ऋण से मुक्ति दिलायें ॥ ७ ॥

हे रात्रि रूपे चिच्छक्ति ! दूध देने वाली गौ के पास जैसे आकृष्ट होकर दूध के लिए जाते हैं उसी प्रकार मैं आपकी स्तुति और जप आदि के द्वारा आपको आकृष्ट करना चाहता हूं। हे परमात्मरूप आकाश की कन्या ! आपके अनुग्रह से कामादि शत्रुओं को जीतने के लिए स्तोत्र की भांति मेरे द्वारा यथा शक्ति दिए हुए हविद्रव्य को अनुग्रह कर स्वीकार करो ॥ ८ ॥ ॥ वेदोक्त रात्रि सूक्त सम्पूर्ण हुआ ॥

O Conscious Power of the night of Souls ! be kind enough to keep the wolves of sins and passions from us. Sex and sensuousness are pirates and smugglers, so kindly keep them away and be approachable to us for granting ultimate release. 6.

O Goddess of night followed by the goddess of dawn, Usha ! The darkness of ignorance all around has come very near me. So kindly dispel it away, as you release your devotees from debts by bestowing wealth upon them. Illumine this darkness by throwing the light of knowledge on it. 7.

O Goddess of light, you are like milch cow. Drawn towards you by the milk's attraction I seek your eye of favour by singing eulogies to you. O daughter of the God of endless heavens, I have conquered the foes of sex and passion. So kindly accept my offering as you have accepted my hymn-singing. 8.

Here ends the Rātri-Sūkta.

अथ सप्तशती प्रारभ्यते

प्रथमोऽध्यायः

॥ ॐ नमश्चण्डिकायै ॥

ॐ मार्कण्डेय उवाच

॥ मन्त्र १ ॥

सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम ॥

॥ मन्त्र २-श्लोक १ ॥

प्रथम अध्याय

पौराणिक लेख के अनुसार व्यास के शिष्य जैमिनि ने गुरुमुख से धर्म के सम्पूर्ण मर्म को सुन लिया था—फिर भी कुछ जिज्ञासाओं के समाधान हेतु उन्होंने मार्कण्डेय ऋषि से प्रश्न किया था। ऋषि उस समय भगवच्चिन्तन में लीन थे। अतः उन्होंने विन्ध्याचल निवासी चतुःपक्षियों के द्वारा मार्कण्डेय-भागुरि सम्वाद के रूप में आठवें मन्वन्तर की यह कथा कहलवायी है।

मेधा नामक ऋषि द्वारा सुरथ और समाधि को मधु कैटभ वध का प्रसंग बताना—

मार्कण्डेय ने कहा—सूर्य पुत्र सावर्णि जो आठवें

Commencement of the DEVĪ-MĀHĀTMYA

The slaughter of Madhu and Kaitabha in the account of the Sāvarnika Manav-antara.

King Su-ratha being defeated and driven from his kingdom took refuge in ihe forest with a muni—He met a vaiśya who had been driven from his home by his relatives, and both asked the muni about the selfish feelings which still possessd them. He ascribes those feelings to the goddess Mahāmāyā or Great Illusion, and relates how Brahmā lauded the goddess at the end of a former kalpa in order to seek deliverence from the demons Madhu and Kaitabha, and how Vishnu awaking slew the demons.

Om : Reverence to Caṇḍikā.

Mārkandeya said :

Sūrya's son Sāvarni is he who is called the

महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः ।
स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः ।
सुरथो नाम राजाभूत्समस्ते क्षितिमण्डले ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ।
बभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ४ ॥

तस्य तैरभवद् युद्धमतिप्रबलदण्डिनः ।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ५ ॥

मनु कहलाते हैं, उनकी उत्पत्ति की कथा मैं विस्तार-पूर्वक सुनाता हूं ॥ श्लोक १ ॥

भगवती महामाया की कृपा से किस प्रकार सावर्णि मन्वन्तर के अधिपति बने यह प्रसंग मैं बतलाता हूं ॥ श्लोक २ ॥

बहुत समय पूर्व, स्वारोचिष नामक मन्वन्तर में, सुरथ नाम के राजा जो चैत्र वंश में उत्पन्न हुए थे, उनका शासन सम्पूर्ण भूलोक पर था।
॥ श्लोक ३ ॥

सुरथ अपनी प्रजा का पालन अपने पुत्रों के समान ही करते थे तथापि 'कोलाविध्वंसी' नामक कुल के क्षत्रिय वंशी राजा उनके शत्रु बन गए।
॥ श्लोक ४ ॥

राजा सुरथ की दण्ड नीति अत्यन्त कठोर थी। कोला विध्वंसी नामक शत्रुओं से युद्ध हुआ, इस युद्ध में संख्या में कम होते हुए भी कोलाविध्वंसी क्षत्रियों से सुरथ को पराजित होना पड़ा।
॥ श्लोक ५ ॥

eighth Manu. Hear about his birth, as I tell it at full length. 1.

How by reason of the authority of the Great Illusion that illustrious son of the Sun, Sāvarni, became the king of the eighth manv-antra. 2.

In times ago in the Svaroçisha period, a king named Suratha, sprung of the race of Çaitra, reigned over the whole earth. 3.

And while he guarded his subjects duly as if they were his own children, there arose hostile kings, who destroyed Kolā. 4.

He the bearer of a very powerful sceptre had war with them, and was defeated by them, inferior though they were, those destroyers of Kolā. 5.

ततः स्वपुरमायातो निजदेशाधिपोऽभवत् ।
आक्रान्तः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥

॥ मन्त्र ७-श्लोक ६ ॥

अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः ।
कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः ॥

॥ मन्त्र ८-श्लोक ७ ॥

ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः ।
एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥

॥ मन्त्र ९-श्लोक ८ ॥

स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विजवर्यस्य मेधसः ।
प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम् ॥

॥ मन्त्र १०-श्लोक ९ ॥

युद्ध के पश्चात् सुरथ अपने नगर को लौट आए तथा उनका शासन अब अपने ही राज्य तक सीमित हो गया और सम्पूर्ण पृथ्वी का एक छत्र अधिकार समाप्त हो गया। परन्तु राजा के शत्रुओं ने उनके राज्य पर फिर आक्रमण कर दिया।

॥ श्लोक ६ ॥

Then coming to his own city he reigned as king over his own country. That illustrious king was attacked then by those powerful enemies. 6.

युद्ध के कारण राजशक्ति क्षीण हो गई थी, अतः दुष्ट तथा दुरात्मा मंत्री लोग बलशाली हो गए तथा राजकीय सेना एवं खजाने को भी उन्होंने अपने अधिकार में ले लिया ॥ श्लोक ७ ॥

His powerful and corrupt ministers who were evil-disposed to a weak person, thereupon robbed him of treasury and army even there in his own city. 7.

राजा सुरथ अपने राज्य का प्रभुत्व खो चुके थे, अतः दुखी होकर वे शिकार खेलने के बहाने अकेले ही घोड़े पर सवार होकर घने जंगल में चले गए ॥ श्लोक ८ ॥

Hence the king deprived of his sovereignty departed alone on horse-back to a dense forest under the pretence of hunting. 8.

वन में राजा सुरथ ने मेधा ऋषि का आश्रम देखा जहां हिंसक जीव भी अपने आपसी वैर-भाव को त्याग कर शान्ति पूर्ण जीवन जीते थे तथा मुनि के अनेकों शिष्य भी वहाँ शोभा पा रहे थे।

॥ श्लोक ९ ॥

There he saw the hermitage of the noble *dvijā* Medhas, inhabited by wild animals which were peaceful, graced by the muni's disciples;

तस्थौ कञ्चित्स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः ।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन्मुनिवराश्रमे ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक १० ॥

सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः ।
मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मयाहीनं पुरं हि तत् ॥

॥ मन्त्र १२–श्लोक ११ ॥

मद्भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा ।
न जाने सप्रधानो मे शूरहस्ती सदामदः ॥

॥ मन्त्र १३–श्लोक १२ ॥

मम वैरिवशं यातः कान्भोगानुपलप्स्यते ।
ये ममानुगता नित्यं प्रसादधनभोजनैः ॥

॥ मन्त्र १४–श्लोक १३ ॥

मेधा ऋषि ने सुरथ का आदर किया। इधर-उधर वन में भ्रमण करते हुए कुछ समय तक सुरथ ने मुनि के आश्रम में निवास किया।

॥ श्लोक १० ॥

and he dwelt there some time, honoured by the muni. And roaming hither and thither in that fine hermitage of the muni. 9–10,

ममता के वशीभूत होकर राजा सुरथ अपने जीवन के पिछले वर्षों को याद करने लगे। मेरे पूर्वजों द्वारा संरक्षित नगर में आज मेरा आधिपत्य नहीं रह गया है। मेरे दुष्ट मन्त्री लोग मेरे उस राज्य की धर्म के अनुसार भली-भाँति रक्षा करते होंगे या नहीं यह भी सन्देहपूर्ण है। मेरा प्रधान हाथी हमेशा ही मद की वर्षा करता रहता था और अत्यन्त शूरवीर था ॥ ॥ श्लोक ११–१२ ॥

He fell into thought there then, his mind being distraught by selfishness, egotistical—"Lost indeed is the city which I guarded formerly. Whether it is guarded righteously or not by those my servants of wicked conduct, I know not. My chief war-elephant, always ardent, has passed into the power of my foes; what pleasures will he obtain ? 11–12.

मेरे शत्रुओं की अधीनता में रहता हुआ वह न जाने किन किन कष्टों को सहन करता होगा। जो मेरे अनुग्रह से भोजन, धन तथा अन्य सभी सुविधायें पाने के कारण मेरा पूर्णतया अनुसरण करते थे, वे

अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम् ।
असम्यग्व्ययशीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ॥

॥ मन्त्र १५—श्लोक १४ ॥

संचितः सोऽतिदुःखेन क्षयं कोषो गमिष्यति ।
एतच्चान्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः ॥

॥ मन्त्र १६—श्लोक १५ ॥

तत्र विप्राश्रमाभ्यासे वैश्यमेकं ददर्श सः ।
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ॥

॥ मन्त्र १७ – श्लोक १६ ॥

सशोक इव कस्मात्त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे ।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् ॥

॥ मन्त्र १८—श्लोक १७ ॥

अवश्य ही अब दूसरे राजाओं का अनुसरण करते होंगे। इन असंयमी लोगों द्वारा निरन्तर व्यय किए जाने के कारण मेरा अत्यन्त कष्ट से संचित किया गया राजकोष रिक्त हो गया होगा। इस प्रकार राजा सुरथ कई बातों का चिन्तन किया करते थे।
॥ श्लोक १३-१५ ॥

They who were my constant followers now assuredly pay court to other kings with favour, riches and food. The treasure which I amassed with great difficulty will go to waste through those men, addicted to unbecoming expenditure, who are squandering it continually." These and other matters the king thought of continually.
13–15.

राजा सुरथ ने विप्र मेधा के आश्रम में एक वैश्य को देखा। उन्होंने वैश्य से प्रश्न किया कि तुम कौन हो तथा तुम्हारा इस आश्रम में आने का उद्देश्य क्या है ? ॥ श्लोक १६ ॥

Near the brāhman's hermitage there he saw a solitary vaiśya, and asked him, "Ho ! who art thou ? and what is the reason of thy coming here ? 16.

अस्थिर चित्त और शोकयुक्त क्यों दिखलाई दे रहे हो ? राजा सुरथ की इस प्रेमपूर्ण वाणी को

Why appearest thou as if full of sorrow, as if afflicted in mind ?" Hearing this speech

प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् ॥

॥ मन्त्र १९ ॥

वैश्य उवाच

॥ मन्त्र २० ॥

समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ॥

॥ मन्त्र २१–श्लोक १८ ॥

पुत्रदारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः ।
विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ॥

॥ मन्त्र २२–श्लोक १९ ॥

वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्तबन्धुभिः ।
सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलाकुशलात्मिकाम् ॥

॥ मन्त्र २३–श्लोक २० ॥

सुनकर वैश्य ने नम्र भाव से नतमस्तक होकर उत्तर दिया–'मैं धनाढ्य कुल में उत्पन्न समाधि नामक वैश्य हूं ॥ श्लोक १७–१८ ॥

धन-सम्पत्ति के लालच से मेरी स्त्री, पुत्रों तथा विश्वसनीय परिजनों ने मेरा धन लेकर मुझे घर से निकाल दिया है। अतः इन सब से वंचित होकर एक दुखी व्यक्ति के रूप में मैं यहाँ वन में चला आया हूं। यहां रहते हुए मैं स्त्री, पुत्रों तथा बंधु-बांधवों के कुशल क्षेम या उनके दुःखमय जीवन के बारे में कुछ

of the king, which was uttered in friendly mood, the vaiśya, bowing respectfully, replied to the king, "I am a vaiśya, Samādhi by name, born in a family of wealthy folk. 17–18.

I have been cast out by my sons and wife, who are wicked through greed for wealth. And bereft of riches, wife and sons, taking my wealth I have come to the forest, unhappy and cast out by my trusted kinsmen. In this state I know not what is the behaviour of my sons as regards prosperity or adversity, nor of

प्रवृत्तिं स्वजनानां च दाराणां चात्र संस्थितः ।
किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु सांप्रतम् ॥

॥ मन्त्र २४–श्लोक २१ ॥

कथं ते किं नु सद्वृत्ताः दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः ।

॥ मन्त्र २५ ॥

राजोवाच

॥ मन्त्र २६ ॥

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्रदारादिभिर्धनैः ॥

॥ मन्त्र २७–श्लोक २२ ॥

तेषु किं भवतः स्नेहमनुबन्धाति मानसम् ।

॥ मन्त्र २८ ॥

नहीं जानता कि वे इस समय घर में सकुशल रह रहे हैं अथवा कष्ट से पीड़ित हैं। मेरे पुत्र सदाचरण कर रहे हैं या दुराचारी बन गए हैं।

॥ श्लोक १९–२१ ॥

राजा ने कहा—जिन लोभी पुत्रों और स्त्री तथा बन्धु-बान्धवों ने धन के लोभ में तुमको गृह-विहीन कर दिया है, उनके लिए तुम्हारे मन में इतना स्नेह क्यों उमड़ रहा है?

॥ श्लोक २२ ॥

my family nor of my wife. Here I dwell. Is welfare theirs at home now or ill-luck? How are they? Are my sons living good or evil lives?" 19–21.

The king said :

Why dost thou, Sir, fix thy mental affection on those covetous folk, thy sons, wife and others, who have cast thee out from thy wealth? 22.

वैश्य उवाच

॥ मन्त्र २९ ॥

एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं वचः ॥

॥ मन्त्र ३०–श्लोक २३ ॥

किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः ।
यैः संत्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः ॥

॥ मन्त्र ३१–श्लोक २४ ॥

पतिस्वजनहार्दं च, हार्दितेष्वेव मे मनः ।
किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते ॥

॥ मन्त्र ३२–श्लोक २५ ॥

वैश्य ने कहा—आपका यह कथन यथार्थ है परन्तु मैं क्या करूं ? उनके प्रति मेरा मन निष्ठुर नहीं बन पाता। जिन लोगों ने धन लोभ के कारण पिता एवं पति के स्नेह तथा सौहार्द्र को एकदम छोड़कर मुझे घर से निकाल दिया है, उनके प्रति भी हे महामते ! मेरे हृदय में इतना मोह है। इस दुर्व्यवहार के कारण उन गुणहीन बन्धु-बान्धवों के प्रति मेरा मन स्नेह से व्याकुल है, यह सब क्या है ? इसे जानता हुआ भी मैं नहीं जान पा

The vaiśya said :

This very thought has occurred to me, just as thou hast uttered it, Sir. What can I do ? My mind does not untertain implacability; and my mind, which bears affection as of a master to his family, is affectionate to those very persons, who have abandoned affection for a father and driven me out in their greed for riches. I do not comprehend, although I know it, O high-minded Sir, how it is that the mind is prone to love even towards worthless kins-

यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु ।
तेषां कृते मे निःस्वासो दौर्मनस्यं च जायते ॥

॥ मन्त्र ३३—श्लोक २६ ॥

करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ।

॥ मन्त्र ३४ ॥

मार्कण्डेय उवाच

॥ मन्त्र ३५ ॥

ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ ॥

॥ मन्त्र ३६—श्लोक २७ ॥

समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः ।
कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ॥

॥ मन्त्र ३७—श्लोक २८ ॥

रहा हूं। उनके लिए मैं दीर्घ निश्वास लेता हूं और मेरा हृदय अत्यन्त खिन्न है। मैं क्या करूं ? उन निष्ठुर लोगों के प्रति मेरा मन कठोर नहीं हो पाता।
॥ श्लोक २३–२६ ॥

men. On their account my sighs flow and distress of mind arises. What can I do since my mind is not relentless to those unloving relatives ? 23–26.

मार्कण्डेय ऋषि ने कहा--हे विप्र ! पहले बताये हुए आपसी वार्तालाप के बाद राजाओं में श्रेष्ठ सुरथ और समाधि नामक वैश्य दोनों ही एक साथ मेधा मुनि के पास गए उनके साथ मर्यादानुसार उचित और विनयपूर्वक सम्पर्क करके बैठ गए। तत्पश्चात् राजा और वैश्य ने मुनि के साथ वार्तालाप आरम्भ किया ॥। २७-२८ ॥

Mārkaṇḍeya said :

Thereupon they both, the vaiśya named Samādhi and the noble king approached the muni, O brāhman, and having both observed the etiquette worthy of him, as was proper, they sat down and held various discourse, the vaiśya and the king. 27–28.

उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ ॥

॥ मन्त्र ३८ ॥

राजोवाच

॥ मन्त्र ३९ ॥

भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ॥

॥ मन्त्र ४०–श्लोक २९ ॥

दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना ।
ममत्वं गतराज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि ॥

॥ मन्त्र ४१–श्लोक ३० ॥

जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम ।
अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ॥

॥ मन्त्र ४२–श्लोक ३१ ॥

राजा ने कहा—भगवन् ! मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूं, वह मुझे बतलाइए। मेरा मन डांवाडोल होने के कारण यह बात मेरे मन को दुखी बना रही है कि मेरे स्वयं के राज्य के, मेरे अधिकार से निकल जाने पर भी, उसके समस्त अंगों के प्रति मेरा मोह पूर्ववत् बना हुआ है। हे मुनि श्रेष्ठ ! यह जानते हुए भी कि अब राज्य मेरा नहीं रहा फिर भी अज्ञानी की भाँति मुझे उसके लिए सन्ताप क्यों हो रहा है? मेरे साथ आया हुआ यह वैश्य भी स्त्री-पुत्रों द्वारा अपमानित तथा आत्मीयजनों से भी परित्यक्त होकर यहाँ आया है। इतना होने पर भी इसके हृदय में उन लोगों के प्रति स्नेह उमड़ रहा है। इस प्रकार हम दोनों ही अत्यन्त दुखी हैं। जिस विषय

The king said :

Adorable Sir ! I desire to ask thee one thing; tell me that; since it tends to afflict my mind without producing submissiveness of my intellect. I have a selfish feeling for my kingdom, even with regard to all the requisites of regal administration, although I know what it is, yet like one who is ignorant; how is this, O best of munis ? And this man has been set at nought and cast off by his children, wife and servants; and when forsaken by his family he is nevertheless exceedingly full of affection towards them. Thus he and I also are both excessively unhappy; our minds are drawn by selfish

स्वजनेन च संत्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति ।
एवमेष तथाहं च द्वावप्यत्यन्तदुःखितौ ॥

॥ मन्त्र ४३-श्लोक ३२ ॥

दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ ।
तत्कैनैतन्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥

॥ मन्त्र ४४-श्लोक ३३ ॥

ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ॥

॥ मन्त्र ४४ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ४६ ॥

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे ॥

॥ मन्त्र ४७-श्लोक ३४ ॥

में हमने अपनी आंखों से दोष देखे हैं, उसके प्रति भी हमारे मन में मोह के कारण आकर्षण हो रहा है। हे महाभाग ! हम दोनों भली भाँति सब समझते हैं, फिर भी हमारे मन में इस मोह के उत्पन्न होने का क्या कारण है ? विवेकहीन मनुष्य की भाँति हम दोनों में मूढ़ता का यह भान प्रकट हो रहा है।

॥ श्लोक २९-३३ ॥

ऋषि ने कहा—हे बड़भागी ! विषयों से सम्बन्धित ज्ञान सब जीवों को होता है, किन्तु विषय भी सबके लिए अलग-अलग हुआ करते हैं। कुछ

thought to this matter, even though we perceive the faults in it. How happens this then, illustrious Sir, that we are deluded although aware of it, and that this state of delusion besets me and him, who are each blind in respect of discrimination ? 29–33.

The ṛishi said :

Every animal has this knowledge in objects cognizable by the senses and an object of sense reaches it thus in diverse ways illustrious Sir !

विषयश्च महाभाग याति चैवं पृथक् पृथक् ।
दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावन्धास्तथापरे ॥

॥ मन्त्र ४८-श्लोक ३५ ॥

केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः ।
ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किंतु ते नहि केवलम् ॥

॥ मन्त्र ४९-श्लोक ३६ ॥

यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः ।
ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम् ॥

॥ मन्त्र ५०-श्लोक ३७ ॥

मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः ।
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान्पतंगाञ्छावचञ्चुषु ॥

॥ मन्त्र ५१-श्लोक ३८ ॥

प्राणियों को दिन में नहीं दिखाई देता तथा कुछ को रात्रि में नहीं दिखाई देता। कुछ प्राणी रात और दिन दोनों में समान रूप से देखते हैं। मानव विवेकशील (ज्ञानी) होता है, यह सत्य है किन्तु केवल वे ही लोग विवेकशील नहीं कहे जा सकते क्योंकि पशु पक्षी तथा मृग आदि समस्त प्राणी ज्ञानवान होते हैं। मनुष्यों का ज्ञान ठीक वैसा ही होता है जैसे उन मृग, पक्षियों आदि का होता है। मनुष्यों और पक्षियों आदि में अन्तश्चेतना की दृष्टि से समानता पाई जाती है, तथा अन्य बातें भी दोनों में समान होती हैं। विवेक होने पर भी इन पक्षियों की ओर दृष्टि डालो तो ये स्वयं भूख से व्याकुल होने पर भी ममतावश अपने बच्चों को चोंच में इतने स्नेह से अन्न के दानों को डालते हैं॥ श्लोक ३४-३८॥

Some living beings are blind by day, and others are blind at night; some living beings can see equally well by day and at night. Mankind know what is true, but not they alone indeed, because cattle, birds, wild animals and other creatures all certainly know it; and men have the same knowledge which those wild animals and birds have, and equally both wild animals and birds have the other knowledge which those men have. Though they have such knowledge, look at these birds, which, though disressed by hunger themselves, are yet because of that same delusion assiduous in dropping grains into the beaks of their young ones. 34–38.

कणमोक्षादृतान्मोहात्पीड्यमानानपि क्षुधा ।
मानुषा मनुजव्याघ्रसाभिलाषाः सुतान्प्रति ॥

॥ मन्त्र ५२—श्लोक ३९ ॥

लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेते किं न पश्यसि ।
तथापि ममतावर्त्ते मोहगर्ते निपातिताः ॥

॥ मन्त्र ५३—श्लोक ४० ॥

महामायाप्रभावेण संसारस्थितिकारिणः ।
तन्नात्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः ॥

॥ मन्त्र ५४—श्लोक ४१ ॥

महामाया हरेश्चैतत्तया संमोह्यते जगत् ।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥

॥ मन्त्र ५५—श्लोक ४२ ॥

हे पुरुष श्रेष्ठ ! मनुष्य विवेकशील होकर भी स्वयं लोभ के कारण अपने द्वारा किए गए उपकार का प्रतिफल पाने की इच्छा से पुत्रों की अभिलाषा किया करते हैं ॥ श्लोक ३९ ॥

Human beings are full of longings towards their children, O hero; do they not pass from greed for self unto mutual benefaction; dost thou not perceive this ? 39.

क्या तुम नहीं देखते कि उनमें समझ की कोई कमी नहीं होती तथापि वे संसार की यथास्थिति अर्थात् जन्म-मरण के अनादि प्रवाह को यथावत् रखने वाली भगवती महामाया के प्रभाव से ममता से भरे हुए भंवर रूपी मोह के गहरे गड्ढे में पटक दिए गए हैं। अतएव इस विषय में कोई आश्चर्य नहीं करना चाहिए ॥ श्लोक ४० ॥

Nevertheless they are hurled into the whirlpool of selfishness which is the pit of delusion; through the power of the Great Illusion they make wordly existence permanent. Marvel not then at this. This is the contemplation-sleep of the lord of the world, and the Great Illusion that comes from Hari; by it the world is completely deluded. Verily she, the adorable goddess, Great Illusion,

संसार के अधिपति भगवान विष्णु की योग निद्रास्वरूपिणी भगवती जो महामाया कहलाती हैं, उनके द्वारा ही यह सम्पूर्ण विश्व सम्मोहित है। भगवती महामाया अपने बल से ज्ञानियों के मन को भी आकृष्ट कर मोहग्रस्त कर देती हैं, वे ही

कणमोक्षादृतान्मोहात्पीड्यमानानपि क्षुधा ।
मानुषा मनुजव्याघ्रसाभिलाषाः सुतान्प्रति ॥

॥ मन्त्र ५२—श्लोक ३९ ॥

लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेते किं न पश्यसि ।
तथापि ममतावर्त्ते मोहगर्ते निपातिताः ॥

॥ मन्त्र ५३—श्लोक ४० ॥

महामायाप्रभावेण संसारस्थितिकारिणः ।
तन्नात्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः ॥

॥ मन्त्र ५४—श्लोक ४१ ॥

महामाया हरेश्चैतत्तया संमोह्यते जगत् ।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥

॥ मन्त्र ५५—श्लोक ४२ ॥

हे पुरुष श्रेष्ठ ! मनुष्य विवेकशील होकर भी स्वयं लोभ के कारण अपने द्वारा किए गए उपकार का प्रतिफल पाने की इच्छा से पुत्रों की अभिलाषा किया करते हैं ॥ श्लोक ३९ ॥

Human beings are full of longings towards their children, O hero; do they not pass from greed for self unto mutual benefaction; dost thou not perceive this ? 39.

क्या तुम नहीं देखते कि उनमें समझ की कोई कमी नहीं होती तथापि वे संसार की यथास्थिति अर्थात् जन्म-मरण के अनादि प्रवाह को यथावत् रखने वाली भगवती महामाया के प्रभाव से ममता से भरे हुए भंवर रूपी मोह के गहरे गड्ढे में पटक दिए गए हैं। अतएव इस विषय में कोई आश्चर्य नहीं करना चाहिए ॥ श्लोक ४० ॥

Nevertheless they are hurled into the whirlpool of selfishness which is the pit of delusion; through the power of the Great Illusion they make wordly existence permanent. Marvel not then at this. This is the contemplation-sleep of the lord of the world, and the Great Illusion that comes from Hari; by it the world is completely deluded. Verily she, the adorable goddess, Great Illusion,

संसार के अधिपति भगवान विष्णु की योग निद्रास्वरूपिणी भगवती जो महामाया कहलाती हैं, उनके द्वारा ही यह सम्पूर्ण विश्व सम्मोहित है। भगवती महामाया अपने बल से ज्ञानियों के मन को भी आकृष्ट कर मोहग्रस्त कर देती हैं, वे ही

बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ।
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् ॥

॥ मन्त्र ५६—श्लोक ४३ ॥

सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ।
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ॥

॥ मन्त्र ५७—श्लोक ४४ ॥

संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ।

॥ मन्त्र ५८ ॥

राजोवाच

॥ मन्त्र ५९ ॥

भगवन् का हि सा देवी महामायेति यां भवान् ।

॥ मन्त्र ६०—श्लोक ४५ ॥

इस समस्त चराचर जगत् की रचना करने वाली हैं और प्रसन्न होने पर वे ही मानवों को मुक्ति प्रदान करने वाली हैं। वे ही पराविद्या के रूप में सांसारिक मोह एवं बन्धन की कारण है तथा समस्त ईश्वरों की ईश्वरी (मालकिन) एवं शाश्वत रूपा हैं ॥ श्लोक ४१-४४ ॥

forcibly drawing the minds even of those who know, presents them to delusion. By her is created this whole universal both movable and immovable; she it is who when propitious bestows boons on men with a view to their final emancipation, She is knowledge supreme; she is the eternal cause of final emancipation, and the cause of the bondage of worldly existence; she indeed is the queen over all lords. 40–44.

The king said :

राजा ने कहा—हे भगवन् ! आप जिन्हें महामाया कहते हैं वे देवी कौन हैं ? वे कैसे आविर्भूत हुईं और उनके क्रिया-कलाप किस प्रकार के हैं ?

Adorable Sir ! Who then is that goddess whom thou stylest Mahā-Māyā ? How was she born, and what is her sphere of action, O

ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज ।
यत्स्वभावा च सा देवी यत्स्वरूपा यदुद्भवा ॥

॥ मन्त्र ६१-श्लोक ४६ ॥

तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदांवर ।

॥ मन्त्र ६२ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ६३ ॥

नित्यैव सा जगन्मूर्त्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ।

॥ मन्त्र ६४-श्लोक ४७ ॥

तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम ।
देवानां कार्यसिद्धयर्थमाविर्भवति सा यदा ॥

॥ मन्त्र ६५-श्लोक ४८ ॥

हे ब्रह्मज्ञानियों में श्रेष्ठ ! उन देवी का आविर्भाव जिस स्वरूप में हुआ एवं उस स्वरूप का जो प्रभाव हो, वह सम्पूर्ण कथा-चरित्र मैं आपसे सुनना चाहता हूं ॥ श्लोक ४५-४६ ॥

brāhman ? And what is her disposition, and what is her nature, and whence did she originate, the goddess—all that I wish to hear from thee, O thou most learned in sacred knowledge ! 45-46.

The ṛishi said

ऋषि बोले—हे राजन् ! वह जगन्मूर्ति शाश्वत तथा नित्य हैं। यह समस्त संसार उन्हीं भगवती का व्यापक स्वरूप है ॥ श्लोक ४७ ॥

She exists eternally, embodied as the world. By her this universe was stretched forth. 47.

तथापि उनकी उत्पत्ति की कथा के अनेक रूप हैं, उन्हें मुझसे सुनो, यद्यपि वे नित्य एवं उत्पत्ति रहित हैं तथापि देवों की कार्य-सिद्धि हेतु जब वे प्रकट होती हैं तब उन्हें संसार में उत्पन्न कहा जाता है। प्रलय के समय जब समस्त चराचर जगत् एक समुद्र के रूप में निमग्न था और भगवान विष्णु शेष नाग की शय्या पर योगनिद्रा के सहारे सो रहे

Nevertheless her origin is in many ways; hear it from me. When she reveals herself in order to accomplish the purposes of the gods, it is then said in the world that she is born; she is also named the Eternal One. While the adorable lord Viśhṇu, stretching Śesha out,

उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते ।
योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ॥

॥ मन्त्र ६६-श्लोक ४९ ॥

आस्तीर्य शेषमभजत्कल्पान्ते भगवान्प्रभुः ।
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधुकैटभौ ॥

॥ मन्त्र ६७-श्लोक ५० ॥

विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ ।
स नाभिकमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः ॥

॥ मन्त्र ६८-श्लोक ५१ ॥

दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् ।
तुष्टाव योगनिद्रां तामेकाग्रहृदयस्थितः ॥

॥ मन्त्र ६९-श्लोक ५२ ॥

थे उस समय उनके कानों के मल से मधु और कैटभ नाम से विख्यात दो महाभयंकर राक्षस पैदा हुए और वे दोनों सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा को मार डालने के लिए उद्यत हो गए। विष्णु के नाभिकमल में अवस्थित प्रजापति ब्रह्मा ने जब उन भयंकर असुरों को देखा तब उन्होंने भगवान विष्णु को जगाने के लिए उनके नेत्रों में निवास करने वाली भगवती योगनिद्रा की एकाग्रचित्त से स्तुति की ॥ श्लोक ४८-५२ ॥

wooed the sleep of contemplation at the end of the kalpa, when the universe was converted into absolute ocean, then two terrible Asuras named Madhu and Kaiṭabha, springing from the root of Viṣṇu's ear, sought to slay Brahmā. Brahmā the Prajā-pati stood on the lotus that grew from Viṣṇu's navel; and seeing those two fierce Asuras and sleeping Janārdana, and standing with heart solely thereon intent, in order to awaken Hari, extolled that Sleep of contemplation which had made its dwelling in Hari's eyes. 48-52.

विबोधनार्थाय हरेर्हरिनेत्रकृतालयाम् ।
विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ॥

॥ मन्त्र ७०–श्लोक ५३ ॥

निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ।

॥ मन्त्र ७१ ॥

ब्रह्मोवाच

॥ मन्त्र ७२ ॥

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ।

॥ मन्त्र ७३–श्लोक ५४ ॥

सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ।
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ॥

॥ मन्त्र ७४–श्लोक ५५ ॥

जो समस्त चर-अचर विश्व की नियामिका शक्ति हैं, पालक एवं संहारकर्त्री हैं एवं तेजोमय भगवान विष्णु की अनुपम निद्रा शक्ति हैं उनकी स्तुति ब्रह्मा जी करने लगे ॥ श्लोक ५३ ॥

ब्रह्मा ने कहा—हे देवि ! आप स्वाहा, स्वधा तथा वषट्कार हैं। आप ही स्वरस्वरूपा हैं।

॥ श्लोक ५४ ॥

आप प्राणदायिनी सुधा हैं तथा ओंकार अथवा प्रणवरूप 'नित्य अक्षर' में क्रमशः अकार, उकार तथा मकार (त्रिधा मात्रा) इन तीनों रूपों में अवस्थित हो तथा ओंकार में नित्य बिन्दु रूप हो जिसका उच्चारण विशेष रूप से सम्भव नहीं होता अर्थात् आप ही ज्ञानगम्य रूपवाली हैं।

॥ श्लोक ५५ ॥

The lord of splendour extolled Viṣṇu's Sleep, which is Queen of the universe, the supporter of the world, the cause of permanence and dissolution, full of reverence, incomparable. 53.

Brahmā said :

Thou art Svāhā, thou art Svadhā; thou indeed art Vashaṭkāra, thou hast sound for thy soul. 54.

Thou art the nectar of the gods, the two eternal letters, thou existest having the threefold mātrās for thy soul; thou existest half a mātrā in duration yet eternal. 55.

त्वमेव सा त्वं सावित्री त्वं देवि जननी परा ।
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥

॥ मन्त्र ७५-श्लोक ५६ ॥

त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ।
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ॥

॥ मन्त्र ७६-श्लोक ५७ ॥

तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ।
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥

॥ मन्त्र ७७-श्लोक ५८ ॥

महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ।
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥

॥ मन्त्र ७८-श्लोक ५९ ॥

हे देवि ! संध्या, सावित्री तथा पराम्बा भी आप ही हैं। इस अखिल विश्व को धारण करने वाली तथा इसकी रचयिता भी आप ही हैं। अखिल चराचर का पालन तथा कल्पान्त में इसे आत्मसात् करने वाली आप ही हैं। हे जगत्स्वरूपिणि ! इस विश्व की उत्पत्ति में आप सृष्टिरूपिणी, पालन में स्थिति रूपिणी और प्रलय काल में संहाररूपिणी हैं। महाविद्या, महामाया, महामेघा, महास्मृति, महामोहा, महादेवी तथा महासुरी भी आप हैं। सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों की उत्पादिका तथा समस्त चराचर जगत् की आप प्रकृति हैं।

॥ श्लोक ५६-५९ ॥

Thou indeed canst not be uttered specifically; thou art the Savitri, thou art the divine mother sublime. By thee indeed everything is maintained, by thee this world is created, by thee it is protected, O goddess ! and thou dost always consume it at the end. At its emanation thou didst take the form of creation, and in protecting it thou hast the form of permanence, and at the end of this world thou wilt have the form of contraction, O thou who containest the world ! Thou art the Great Knowledge, the Great Illusion, the Great Vigour, the Great Memory, and the Great Delusion, the Lady, the Great Goddess, the Great Demon. And thou art the original source of the universe, the exciting cause of the three qualities; thou art the Night of

कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ।
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥

॥ मन्त्र ७९-श्लोक ६० ॥

लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ।
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥

॥ मन्त्र ८०-श्लोक ६१ ॥

शङ्खिनी चापिनी वाणभुशुण्डीपरिघायुधा ।
सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥

॥ मन्त्र ८१-श्लोक ६२ ॥

परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ।
यच्च किंचित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥

॥ मन्त्र ८२-श्लोक ६३ ॥

आप भयदायिका कालरात्रि, महारात्रि तथा मोहरात्रि हैं। आप लज्जा, पुष्टि, तुष्टि शांति और क्षमा हैं तथा आप ही खड्गधारिणी, शूलधारिणी, घोर स्वरूपा हैं एवं गदा, चक्रधारण करती हैं।
॥ श्लोक ६०–६१ ॥

the world's destruction, the Great Night, and the Night of delusion, terrible ! Thou art Good Fortune, thou art Queen, thou art Modesty; thou art Intelligence, characterized by perception; thou art Shame, Nourishment and Contentment, Tranquillity and Patience also. Thou art terrible, armed with sword, with spear, with club, and with discus. 56–61.

शंख, चाप (धनुष) बाण, भुशुण्डी तथा परिघ आपके अस्त्र हैं। आप सौम्य तथा सौम्यतर–समस्त सौम्य वस्तुओं की तुलना में अति सौम्य हैं, अति सुन्दरी हैं ॥ श्लोक ६२ ॥

Armed with conch, with bow, and having as weapons arrows, slings and an iron mace. Thou art gentle, yea more than gentle, exceedingly beautiful to those who are wholly gentle. 62.

आप पर एवं अपर से भी उत्कृष्टरूपिणी परमेश्वरी हैं, सत् एवं असत् के रूप में समस्त दृश्य जगत् की शक्ति आप ही हैं ॥ श्लोक ६३ ॥

Thou art indeed beyond the highest and the lowest, Queen supreme ! And whatever or wherever a thing is, whether good or bad, thou art the energy which all that possesses. 63.

तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पातात्ति यो जगत् ॥

॥ मन्त्र ८३-श्लोक ६४ ॥

सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ।
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च ॥

॥ मन्त्र ८४-श्लोक ६५ ॥

कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् ।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ॥

॥ मन्त्र ८५-श्लोक ६६ ॥

मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ।
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥

॥ मन्त्र ८६-श्लोक ६७ ॥

सर्वशक्तिस्वरूपिणि ! हे देवि ! आपकी स्तुति असम्भव है। जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार करने वाले ईश्वर को भी आपने जब निद्रा के वशीभूत कर दिया तब आपकी स्तुति कर सकना असम्भव है। विष्णु, शिव, तथा स्वयं मुझे भी आपने ही शरीर प्रदान किया है, इस कारण आपकी स्तुति करने की सामर्थ्य किसमें हो सकती है ! इस प्रकार आप अपनी उदार प्रभाव शक्ति से प्रशंसिता हो ॥ श्लोक ६४-६६ ॥

आप इन दुर्दमनीय मधु और कैटभ नाम के राक्षसों को मोहित कर संसार के स्वामी भगवान् विष्णु को तत्क्षण जगा दो तथा इन महाअसुरों को मार डालने के लिए प्रेरणा देकर उनको उद्‌बुद्ध कर दो ॥ श्लोक ६७ ॥

O thou who art the soul of everything. Can I extol thee more than this ? By thee, who art such, he indeed, who created the world, who protects the world, who consumes the world, is brought under the dominion of sleep, Who is able here to extol thee ? Since Viṡṇu, I and Śiva have been made by thee to assume bodies, who then may be powerful enough to extol thee ? 64-66.

Being such, do thou O goddess, lauded thus, bewitch these two unassailable Asuras, Madhu and Kaiṭabha, with thy exalted powers, and let the imperishable master of the world be lightly brought back to consciousness, and let him rouse up his intelligence to slay these two great Asuras ! 67.

बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ।

॥ मन्त्र ८७ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ८८ ॥

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा ।

॥ मन्त्र ८९–श्लोक ६८ ॥

विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधुकैटभौ ।
नेत्रास्यनासिकाबाहुहृदयेभ्यस्तथोरसः ॥

॥ मन्त्र ९०–श्लोक ६९ ॥

निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः ॥

॥ मन्त्र ९१–श्लोक ७० ॥

ऋषि ने कहा—इस प्रकार प्रजापति ब्रह्मा ने जब मधु एवं कैटभ को मारने तथा विष्णु को जगाने के लिए तमस्वरूपिणीभगवती योगनिद्रा की स्तुति की, तब विष्णु भगवान के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय एवं वक्षस्थल से प्रकट होकर देवी अव्यक्त जन्मा ब्रह्मा के सामने प्रकट हुईं। अनन्तर, जगत् के स्वामी जनार्दन विष्णु प्रलयरूपी समुद्र के जल में शेषनाग की शय्या से जाग गए।

॥ श्लोक ६८–७० ॥

The ṛishi said :

Then the goddess of darkness, extolled thus by the Creator there in order to awaken Viṣṇu to slay Madhu and Kaiṭabha, issued forth from his eyes, mouth, nose, arms and heart and breast, and stood in the sight of Brahmā whose birth is inscrutable; and Janārdana, master of the world, being quitted by her, rose up from his couch in the universal ocean; 68–70.

एकार्णवे हि शयनात्ततः स ददृशे च तौ ।
मधुकैटभौ दुरात्मानावतिवीर्यपराक्रमौ ।

॥ मन्त्र ९२–श्लोक ७१ ॥

क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ ।
समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः ॥

॥ मन्त्र ९३–श्लोक ७२ ॥

पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो विभुः ।
तावप्यतिबलोन्मत्तौ महामायाविमोहितौ ॥

॥ मन्त्र ९४–श्लोक ७३ ॥

उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो ब्रियतामिति केशवम् ।

॥ मन्त्र ९५ ॥

उन्होंने उन दोनों राक्षसों को देखा। दुष्टात्मा मधु और कैटभ अत्यन्त वीर्यशाली और पराक्रमी थे एवं क्रोध से रक्तनेत्र होकर ब्रह्मा को उदरस्थ करने के लिए प्रयत्नशील थे। अनन्तर भगवान विष्णु ने निद्रा से जागकर खड़े होकर उन दोनों राक्षसों के साथ पांच हजार वर्षों की अवधि तक बाहु-युद्ध किया। महामाया द्वारा मोहित होने के कारण उन दोनों ही राक्षसों ने अत्यन्त बलोन्माद के साथ विष्णु से कहा कि हम तुम्हारे पराक्रम से प्रसन्न हैं, तुम हम से वर मांगो ॥ श्लोक ७१-७३ ॥

भगवान ने कहा—आप दोनों राक्षस यदि मुझसे सन्तुष्ट हों तो मेरे द्वारा आप दोनों मारे जायें, यही वर मैं माँगता हूं। इसके अतिरिक्त अन्य किसी वर से मेरा कोई प्रयोजन नहीं है।

॥ श्लोक ७४ ॥

And he saw those two then, Madhu and Kaiṭabha, evil of soul, excelling in heroism and prowess, red-eyed through anger, fully prepared to devour Brahmā. Thereupon the adorable lord Hari rose up and fought with those two, striking them with his arms, for five thousands of years. And they, exceedingly frenzied with their power, deluded by the Great Illusion, exclaimed to Keśava, "Choose a boon from us !" 71–73.

The god said :

Be ye both now content with me; ye must both be slain by me ! What need is there of any other boon here ? Thus much indeed is my choice. 74.

भगवानुवाच

॥ मन्त्र ९६ ॥

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि ॥

॥ मन्त्र ९७–श्लोक ७४ ॥

किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम ॥

॥ मन्त्र ९८ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ९९ ॥

वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत् ॥

॥ मन्त्र १००–श्लोक ७५ ॥

विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान्कमलेक्षणः ।
ग्रावां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ॥

॥ मन्त्र १०१–श्लोक ७६ ॥

ऋषि ने कहा—इस प्रकार धोखा खाकर जब उन दोनों ने सारे संसार को जलमय देखा तो कमल-नयन भगवान् विष्णु से कहा—'जहाँ पृथ्वी जल-मग्न न हो वहाँ अर्थात् शुष्क स्थान में हम दोनों को मारो ॥ श्लोक ७५ ॥

ऋषि ने कहा—शंख, चक्र, गदाधारी विष्णु भगवान् ने 'तथास्तु' कहकर उन दोनों के मस्तक अपनी जंघा पर रख कर सुदर्शन चक्र से काट दिए ॥ श्लोक ७६-७७ ॥

The ṛishi said :

Gazing then at the entire world which was nothing but water, those two, who had been thus tricked, spoke to the adorable lotus-eyed god,—"Slay us where the earth is not overwhelmed with water." 75.

The ṛishi said :

"Be it so" said the adorable wielder of the conch, discus and club, and cutting them with his discus clove them both asunder, heads and buttocks. 76–77.

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १०२ ॥

तथेत्युक्त्वा भगवता शङ्खचक्रगदाभृता ॥
कृत्वा चक्रेण वै छिन्ने जघने शिरसी तयोः ॥

॥ मन्त्र १०३–श्लोक ७७ ॥

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् ।
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ॥

॥ मन्त्र १०४–श्लोक ७८ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
मधुकैटभवधो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥

इस प्रकार भगवती महामाया ब्रह्मा की स्तुति के द्वारा स्वयं आविर्भूत हुई हैं। अब आगे मैं उनके लोकोत्तर प्रभाव [का वर्णन करता हूं, उसे] तुम सुनो ॥ श्लोक ७८ ॥

Thus was she born when praised by Brahmā himself. Now listen again, I tell thee of this goddess, majesty. 78.

इति श्रीमार्कण्डेय-पुराण में सावर्णि से
सम्बद्ध मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत
देवी माहात्म्य में मधु-कैटभ वध
नामक प्रथम अध्याय
सम्पूर्ण हुआ ।

अथ मध्यमचरित्रारम्भः

द्वितीयोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

देवासुरमभूद्युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा ।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥

॥ मन्त्र २-श्लोक १ ॥

मध्यम चरित्र

द्वितीय अध्याय

महिषासुर की सेना का वध

असुरों द्वारा छेड़े गये भयंकर युद्ध में देवता हार गये और असुरों ने स्वर्ग पर कब्जा कर लिया। महिषासुर स्वर्ग का अधिपति हो गया। तब समस्त देवताओं ने अपना-अपना तेज (शक्ति) दिया। उस सम्मिलित शक्ति-पुंज से देवी चण्डिका की उत्पत्ति हुई। असुरों को परास्त करने के लिए देवताओं ने भगवती को अपने शस्त्र दिये।

ऋषि ने कहा—प्राचीन काल में देवों एवं असुरों में निरन्तर पूरे सौ वर्षों तक भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में असुरों का नेता महिषासुर नामक असुर तथा देवताओं के प्रमुख नेता इन्द्र थे।

॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

Slaughter of the army of the Asura Mahisha.

The gods were defeated in a great battle formerly by the Asuras and driven from heaven, and the Asura Mahisha became Supreme.—All the gods gave forth their special energies, which combined and formed the goddess Caṇḍikā. They gave her their weapons, and she fought with and destroyed the Asuras.

The ṛishi said :

Of yore there was a fight for a full hundred years between the gods and Asuras, when Mahisha was lord of the Asuras, and Indra lord of the gods; **1.**

तत्रासुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम् ।
जित्वा च सकलान्देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम् ।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेशगरुडध्वजौ ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टितम् ।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ४ ॥

सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च ।
अन्येषां चाधिकारान्स स्वयमेवाधितिष्ठति ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ५ ॥

इस युद्ध में महाबलिष्ठ असुरों ने देव सेना को पराजित कर दिया। समस्त देवताओं पर विजय प्राप्त कर महिषासुर ने इन्द्र का आसन ग्रहण कर लिया ॥ श्लोक २ ॥

अनन्तर पराजित देवगण प्रजापति ब्रह्मा को अपना अगुआ बना कर भगवान शंकर एवं विष्णु के पास गए ॥ श्लोक ३ ॥

देवताओं ने महिषासुर के साथ भयंकर युद्ध तथा अपनी पराजय का सम्पूर्ण वृत्तान्त विस्तारपूर्वक उन दोनों देवों को सुनाया ॥ श्लोक ४ ॥

उन्होंने कहा कि भगवन् ! महिषासुर सूर्य, इन्द्र, अग्नि, वायु, चन्द्रमा, यम (यमराज), वरुण तथा अन्य सभी देवताओं के अधिकारों को बलपूर्वक छीनकर स्वयं सबका स्वामी बन गया है ।
॥ श्लोक ५ ॥

In it the army of the gods was vanquished by the Asuras who excelled in valour, and the Asura Mahīsha after conquering all the gods became the Indra. 2.

Then the vanquished gods, placing the Prajā-pati *Brahmā* at their head, went where abode Śiva and Viṣṇu. 3.

The thirty *gods* described to them accurately what had happened, the full story of the gods' discomfiture which had been wrought by the Asura Mahisha. 4.

"He, Mahisha, in his own person domineers over the jurisdictions of the Sun, Indra, Agni, Vāyu and the Moon, of Yama and Varuṇa and of the other *gods*. 5.

स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि ।
विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥

॥ मन्त्र ७-श्लोक ६ ॥

एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम् ।
शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ॥

॥ मन्त्र ८-श्लोक ७ ॥

इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः ।
चकार कोपं शंभुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ॥

॥ मन्त्र ९-श्लोक ८ ॥

ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः ।
निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शंकरस्य च ॥

॥ मन्त्र १०-श्लोक ९ ॥

दुष्टात्मा महिषासुर ने समस्त देवों को स्वर्ग-लोक से निकाल दिया है तथा वे लोग अब मनुष्यों की भाँति भूमण्डल पर घूम रहे हैं ॥ श्लोक ६ ॥

देवशत्रु असुरों के सारे दुर्व्यवहारों को हमने आप दोनों को बता दिया है, अब हम लोग आपके शरणागत हैं अतः आप महिषासुर के वध का उपाय सोचिए ॥ श्लोक ७ ॥

देवताओं के इन वचनों को सुनकर भगवान विष्णु तथा शंकर ने राक्षसों पर क्रोध किया और उनकी भौंहें तन गईं एवं मुख मण्डल क्रोध से लाल हो गया ॥ श्लोक ८ ॥

इसके अनन्तर अत्यन्त क्रुद्ध चक्रपाणि भगवान विष्णु, ब्रह्मा एवं शंकर के मुख से एक अद्भुत तेजपुंज का आविर्भाव हुआ ॥ श्लोक ९ ॥

Cast out by that evil-souled Mahisha from Svarga all the hosts of the gods wander on the earth like mortals. 6.

It has *now* been related to you both, all that has been wrought by the foe of the Immortals, and we have sought *you both* as a refuge; let his destruction be devised !" 7.

Having thus heard the words of the gods, Viṡṇu was wroth and Śiva also; both their faces became furrowed with frowns. 8.

Then issued forth great energy from the mouth of Viṡṇu who was full of intense anger, and from the mouths of Brahmā and Śiva. 9.

अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः ।
निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक १० ॥

अतीव तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम् ।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम् ॥

॥ मन्त्र १२–श्लोक ११ ॥

अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम् ।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा ॥

॥ मन्त्र १३–श्लोक १२ ॥

यदभूच्छांभवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् ।
याम्येन चाभवन्केशा बाहवो विष्णुतेजसा ॥

॥ मन्त्र १४–श्लोक १३ ॥

इन्द्र आदि अन्य देवों के शरीरों से भी प्रचण्ड तेज प्रकट हुआ। और यह समस्त तेज एक स्थान पर पुंजीभूत हो गया ॥ श्लोक १० ॥

देवताओं के तेज का वह महापुंज दैदीप्यमान पर्वत के आकार में सभी दिशाओं में व्याप्त ज्वालाओं के रूप में दिखाई दिया ॥ श्लोक ११ ॥

समस्त देवताओं के शरीर से आविर्भूत वह तेज अनुपम था। वह संचित तेजपुंज नारी रूप में परिवर्तित होकर तीनों लोकों में व्याप्त हो गया ॥ श्लोक १२ ॥

भगवान शिव के तेज से उन देवी का मुख-मण्डल तथा यम के तेज से मस्तक में केश उत्पन्न हुए। इसी प्रकार विष्णु के तेज से उनकी भुजाएं प्रकटीं ॥ श्लोक १३ ॥

And from the bodies of Indra and the other gods went forth a very great energy; and it *all* amalgamated. 10.

The gods beheld the mass of intense energy there like a burning mountain, pervading the other regions of the sky with blaze. 11.

And that unparalleled energy born of the bodies of all the gods, which pervaded the three worlds with its light, gathering into one became a female. 12.

By what was Śiva's energy her face was developed and by Yama's energy grew her hair, and her arms by Viṣṇu's energy. 13.

सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यमैन्द्रेण चाभवत् ।
वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक १४ ॥

ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योर्कतेजसा ।
वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च नासिका ॥

॥ मन्त्र १६-श्लोक १५ ॥

तस्यास्तु दन्ताः संभूताः प्राजापत्येन तेजसा ।
नयनत्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा ॥

॥ मन्त्र १७-श्लोक १६ ॥

भ्रुवौ च संध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च ।
अन्येषां चैव देवानां संभवस्तेजसां शिवा ॥

॥ मन्त्र १८-श्लोक १७ ॥

चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तन तथा इन्द्र के तेज से कटि प्रदेश की रचना हुई और वरुण के तेज से जंघाएं एवं ऊरू तथा पृथ्वी के तेज से नितम्ब प्रदेश बना ॥ श्लोक १४ ॥

ब्रह्मा के तेज से दोनों पैर, सूर्य के तेज से अंगलियाँ, वसुओं के तेज से दोनों हाथों की अंगुलियाँ तथा कुवेर के तेज से नासिका प्रस्फुटित हुई ॥ श्लोक १५ ॥

प्रजापति ब्रह्मा के तेज से दन्त पङ्क्ति और अग्नि के तेज से तीनों नेत्र प्रकट हुए ॥ श्लोक १६ ॥

संध्या के तेज से भौंहें और वायु के तेज से दोनों कान प्रकट हुए तथा इसी प्रकार अन्य देवों के तेज से भगवती कल्याणी देवी का अवतरण हुआ ।
॥ श्लोक १७ ॥

By the Moon's her twin breasts; and her waist came into being by Indra's energy, and by Varuṇa's her legs and thighs, by the Earth's energy her hips; 14.

By Brahmā's energy her feet, her toes by the Sun's energy, and by the Vasus' energy her hands and fingers, and by Kuvera's her nose; 15.

And her teeth grew by the Prajā-pati's energy, and three eyes were developed by Agni's energy; 16.

And her eyebrows were the energy of the two twilights, and her ears Vayu's energy; and the coming into being of the energies of the other gods became the auspicious goddess. 17.

ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम् ।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १८ ॥

शूलं शूलाद्विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक् ।
चक्रं च दत्तवान्कृष्णः समुत्पाद्य स्वचक्रतः ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १९ ॥

शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः ।
मारुतो दत्तवांश्चापं वाणपूर्णे तथेषुधी ॥

॥ मन्त्र २१-श्लोक २० ॥

वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः ।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात् ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक २१ ॥

इसके अनन्तर महिषासुर द्वारा पीड़ित देवगण समस्त देवों के तेजपुंज से आविर्भूत उस देवी को देखकर अत्यन्त आह्लादित हुए ॥ श्लोक १८ ॥

पिनाक धनुषधारी भगवान् शंकर ने अपने शूल से एक शूल निकालकर देवी को दिया तथा श्यामवर्ण भगवान् विष्णु ने सुदर्शन चक्र से एक चक्र उत्पन्न कर देवी को भेंट किया ॥ श्लोक ॥ १९ ॥

वरुण देवता ने शंख, अग्नि ने शक्ति, वायु ने धनुष तथा बाणों से परिपूर्ण तरकस देवी को समर्पित किए ॥ श्लोक २० ॥

देवराज इन्द्र ने अपने वज्र से वज्र उत्पन्न कर तथा ऐरावत हाथी से अलग कर एक घंटा भी देवी को अर्पित की ॥ श्लोक २१ ॥

Then gazing at her who had sprung from the combined energies of all the *gods*, the Imortals who were afflicted by Mahisha felt a keen joy. 18.

The bearer of the bow Pināka drawing a trident forth from his own trident gave it to her; and Krishṇa gave a discus pulling it out of his own discus; 19.

And Varuṇ gave her a couch, Agni a spear, Māruta gave a bow and a quiver filled with arrows. 20.

Indra lord of the Immortals gave a thunder- bolt pulling it out of his own thunder-bolt; the Thousand-eyed gave her a bell from his elephant Airāvaṭa. 21.

कालदण्डाद्यमो दण्डं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ ।
प्रजापतिश्चाक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥
॥ मन्त्र २३-श्लोक २२ ॥

समस्तरोमकूपेषु निजरश्मीन्दिवाकरः ।
कालश्च दत्तवान्खड्गं तस्यै चर्म च निर्मलम् ॥
॥ मन्त्र २४-श्लोक २३ ॥

क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे ।
चूड़ामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ॥
॥ मन्त्र २५-श्लोक २४ ॥

अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान्सर्वबाहुषु ।
नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥
॥ मन्त्र २६-श्लोक २५ ॥

यमराज ने अपने कालरूपी दण्ड से दण्ड तथा जलदेव वरुण ने पाश, प्रजापति ने रुद्राक्ष की माला और ब्रह्मा ने कमण्डलु (जलपात्र) अर्पित किया। ॥ श्लोक २२ ॥

सूर्यदेव ने अपनी रश्मियाँ को देवी के सम्पूर्ण रोम कूपों में प्रविष्ट कर दिया तथा काल ने दिव्य ढाल और तलवार (खड्ग) भेंट की ॥ श्लोक २३ ॥

क्षीर समुद्र ने देदीप्यमान हार और जीर्ण एवं जर्जर न होने वाले दो वस्त्र देवी को अर्पित किए, इसके अतिरिक्त उसने दिव्य चूड़ामणि, दो कुण्डल और कड़े भी भेंट किए ॥ श्लोक २४ ॥

सम्पूर्ण हाथों के लिए प्रकाशमान केयूर तथा दिव्य नूपुर (पायल) और गले में धारण करने के लिए चन्द्रहार और उत्कृष्ट हंसली तथा अंगुलियों में

Yama gave a rod from his own rod of Fate, and the lord of the waters a noose; and the Prajā-pati gave her a necklace of beads, Brahmā an earthen water-pot; 22.

The Sun bestowed his own rays on all the pores of her skin, and Destiny gave her a sword and a spotless shield; 23.

And the Ocean of Milk a spotless necklace of pearls and also a pair of undecaying garments. And a celestial crest-jewel, a pair of ear-rings, and bracelets, 24.

And a brilliant half-moon ornament, and armlets over all her arms, and also a pair of bright anclets, a necklet of the finest make,

अङ्गुलीयकरत्नानि समस्तास्वङ्गुलीषु च ।
विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चातिनिर्मलम् ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २६ ॥

अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाभेद्यं च दंशनम् ।
अम्लानपङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम् ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक २७ ॥

अददज्जलधिस्तस्यै पङ्कजं चातिशोभनम् ।
हिमवान्वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ॥

॥ मन्त्र २९-श्लोक २८ ॥

ददावशून्यं सुरया पानपात्रं धनाधिपः ।
शेषश्च सर्वनागेशो महामणिविभूषितम् ॥

॥ मन्त्र ३०-श्लोक २९ ॥

धारण करने के लिए रत्न निर्मित अंगूठियाँ प्रदान कीं। विश्वकर्मा ने उनको अत्यन्त सुन्दर फरसा तथा विविध प्रकार के अस्त्र एवं अभेद्य कवच के साथ मस्तक एवं वक्षस्थल पर धारण करने हेतु सदा नवीन रहने वाले (न कुम्हलाने वाले) कमलों की मालायें अर्पित कीं ॥ श्लोक २५-२७ ॥

समुद्र ने देवी को अत्यन्त सुन्दर कमल पुष्प भेंट किया और हिमालय ने वाहन के रूप में सिंह तथा विविध प्रकार के रत्न भेंट में दिए।

॥ श्लोक २८ ॥

घन के स्वामी कुवेर ने सुरा से परिपूर्ण चषक (पान पात्र), समस्त सर्पों के स्वामी शेषनाग ने जो इस पृथ्वी को धारण करते हैं, देवी को बहुमूल्य मणियों से जटित नागहार अर्पित किया तथा अन्य

and rings and gems on all her fingers—these Viśva-karman gave to her, and also a brightly polished axe, weapons of many shapes and also armour that could not be pierced. 25-27.

And ocean gave her a garland of fadeless lotus-flowers for her head and another for her breast, and a very brilliant lotus-flower besides. Himāvat gave her a lion to ride on and gems of various kinds. 28.

Kuvera gave a drinking cup full of wine. And Sesha, the lord of all the serpents, who supports this earth, gave her a serpent-

नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम् ।
अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥

॥ मन्त्र ३१–श्लोक ३० ॥

संमानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः ।
तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ॥

॥ मन्त्र ३२–श्लोक ३१ ॥

अमाययातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत् ।
चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ॥

॥ मन्त्र ३३–श्लोक ३२ ॥

चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः ।
जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ॥

॥ मन्त्र ३४–श्लोक ३३ ॥

देवगणों ने भी इसी प्रकार भगवती को भांति-भांति के आभूषण और शस्त्रास्त्र प्रदान कर उन्हें सम्मानित किया ॥ श्लोक २९-३० ॥

इसके बाद सर्वसम्मानिता देवी ने बार-बार अट्टहास करते हुए गर्जन किया। उनकी भयकारी गर्जना सम्पूर्ण आकाश में व्याप्त होगई।

॥ श्लोक ३१ ॥

देवी के उस महानाद की प्रतिध्वनि कहीं न समा सकी। उस वेगपूर्ण प्रतिध्वनि से सम्पूर्ण विश्व क्षुब्ध हो उठा और समुद्र भी कम्पित हो गए, पृथ्वी डगमगाने लगी और सभी पर्वत हिल उठे तब देवताओं ने प्रसन्न होकर सिंहवाहिनी देवी से कहा कि हे देवि ! आपकी जय हो, तथा मुनियों ने

necklace adorned with large gems. Honoured by other gods also with gifts of ornaments and weapons; 29–30.

The goddess uttered a loud roar blended with a horse–laugh again and again. The whole welkin was fllled with her terrible roar. 31.

By that penetrating and exceedingly great roar a great echo arose, all the *worlds* shook and the seas trembled, the earth quaked and all the mountains moved. And "Conquer thou !" exclaimed the gods with joy to her who rode on the lion and the munis extolled

तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्तिनम्रात्ममूर्त्तयः ।
दृष्ट्वा समस्तं सङ्क्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः ॥

॥ मन्त्र ३५-श्लोक ३४ ॥

संनद्धाखिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः ।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः ॥

॥ मन्त्र ३६-श्लोक ३५ ॥

अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः ।
स ददर्श ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा ॥

॥ मन्त्र ३७-श्लोक ३६ ॥

पादाक्रान्त्या नतभुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम् ।
क्षोभिताशेषपातालां धनुर्ज्यानिःस्वनेन ताम् ॥

॥ मन्त्र ३८-श्लोक ३७ ॥

विनम्र होकर भक्ति भाव से उनकी स्तुति की। देव-शत्रु दैत्य तीनों लोकों को पूर्ण रूप से क्षुब्ध देखकर अपनी सम्पूर्ण सेना को सुसज्जित कर अस्त्र शस्त्र लेकर युद्ध-हेतु तैयार हो गए। "आह यह क्या है ?" इस प्रकार क्रोध से कहकर महिषासुर अपनी समस्त राक्षस सेना के साथ देवी के उस सिंहनाद की ओर दौड़ा और अपने तेज से तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाली भगवती सिंहवाहिनी को देखा ॥ श्लोक ३२-३६ ॥

her as they bowed their bodies in faith. Seeing all the three worlds greatly agitated, the foes of the—Immortals uniting all their armies rose up together, with up-lifted weapons. "Ha ! what is this ?"exclaimed the Asura Mahisha in wrath, and rushed surrounded by all the Asuras towards that roar. Then he saw the goddess, pervading the three worlds with her light. 32-36.

उनके पैरों के दबाव से पृथ्वी नीचे दब गई थी और मस्तक पर शोभित मुकुट से आकाश में चिह्न अंकित हो गया था तथा वे अपने धनुष की टंकार से सप्त पातालों को क्षुब्ध कर रही थीं।
॥ श्लोक ३७ ॥

Causing the earth to bow at the touch of her feet, grazing the firmament with her crest, shaking the whole of Patala with the twang of her bow-string. 37.

दिशो भुजसहस्रेण समन्ताद्व्याप्य संस्थिताम् ।
ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुरद्विषाम् ॥

॥ मन्त्र ३९–श्लोक ३८ ॥

शस्त्रास्त्रैर्बहुधामुक्तैरादीपितदिगन्तरम् ।
महिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः ॥

॥ मन्त्र ४०—श्लोक ३९ ॥

युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्गबलान्वितः ।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महासुरः ॥

॥ मन्त्र ४१—श्लोक ४० ॥

अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण महाहनुः ।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः ॥

॥ मन्त्र ४२—श्लोक ४१ ॥

देवी अपनी हजार भुजाओं से दशों दिशाओं को ढक कर सामने खड़ी थीं। देवी के साथ असुरों का युद्ध आरम्भ हो गया ॥ श्लोक ३८ ॥

अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग से समस्त दिशायें प्रकाशित हो उठीं। महिषासुर का सेनापति, चिक्षुर नामक महान् दैत्य था। चामर नामक दैत्य अन्य सभी राक्षसों की चतुरंगिणी सेना के साथ देवी से युद्ध करने लगा। साठ हजार रथों के साथ उदग्र नाम का महाअसुर तथा एक करोड़ रथारोहियों के साथ महाहनु नामक दैत्य तथा पाँच करोड़ रथारोही सेना के साथ खड्ग के समान तीक्ष्ण रोम वाले असिलोमा नामक महादैत्य युद्ध करने लगा।
॥ श्लोक ३९-४१ ॥

Standing pervading the sky all around with her thousand arms. Then began a battle between the goddess and the enemies of the gods, in which every region of the sky was illumined with the weapons and arms hurled in abundance. And the Asura Mahisha's General, the great Asura named Çikshura, fought with her; and the Asura Çamara attended by his cavalry fought along with others. The great Asura named Udagra with six myriads of chariots fought; and Mahā-hanu with a thousand myriads gave battle; and the great Asura Asi-loman with fifty millions; 38-41.

अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे ।
गजवाजिसहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥

॥ मन्त्र ४३-श्लोक ४२ ॥

वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुद्धयत ।
विडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिरथायुतैः ॥

॥ मन्त्र ४४-श्लोक ४३ ॥

युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः ।
अन्ये च तत्रायुतशो रथनागहयैर्वृताः ॥

॥ मन्त्र ४५-श्लोक ४४ ॥

युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः ।
कोटिकोटिसहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥

॥ मन्त्र ४६-श्लोक ४५ ॥

साठ लाख रथारोहियों की सेना को लेकर वाष्कल नामक दैत्य भी युद्ध भूमि में आकर मोर्चा लेने लगा। इसी प्रकार परिवारित नामक दैत्य हजारों हाथी और घुड़ सवारों के अनेक समूहों के साथ तथा एक करोड़ रथारोहियों की सेना लेकर युद्ध करने लगा। विडाल नामधारी असुर पाँच अरब रथारोहियों की सेना के साथ रणक्षेत्र में आ गया। इन लोगों के अतिरिक्त अन्य हजारों महा-दैत्य हाथी और घोड़ों की सेना सहित युद्ध भूमि में आकर देवी के साथ युद्ध करने लगे। महिषासुर

With six hundred myriads Vāskala fought in the battle; Ugra-darśana with many troops of thousands of elephants and horses, and surrounded with ten million chariots fought in that battle; and the Asura named Viḍāla fought in the battle there, surrounded with fifty myriads of chariots. And other great Asuras in myriads, surrounded with chariots, elephants and horses, fought with the goddess in that battle there. Now the

हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः ।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ॥

॥ मन्त्र ४७–श्लोक ४६ ॥

युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः परशुपट्टिशैः ।
केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित्पाशांस्तथापरे ॥

॥ मन्त्र ४८–श्लोक ४७ ॥

देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः ।
सापि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका ॥

॥ मन्त्र ४९–श्लोक ४८ ॥

लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्रवर्षिणी ।
अनायस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ॥

॥ मन्त्र ५०–श्लोक ४९ ॥

स्वयं भी कई करोड़ रथों, हाथी तथा घोड़ों की सेना के साथ युद्ध क्षेत्र में उतर आया था। दैत्यगण तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति, मुसल, खड्ग तथा पट्टिश प्रभृति शस्त्रास्त्रों द्वारा देवी पर प्रहार करते हुए युद्ध में निरत थे। कतिपय असुरों ने देवी पर शक्ति से प्रहार किया तथा उन पर पाश से आक्रमण किया ॥ श्लोक ४२-४८ ॥

अन्य दैत्यों ने खड्गों के प्रहार से देवी का प्राणान्त कर डालने का प्रयास किया। देवी ने भी

Asura Mahisha was surrounded with thousands of ten million times ten millions of chariots and elephants and horses in the battle there. With iron maces and javelins, with spears and clubs, with swords, with axes and halberds they fought in the battle against the goddess. And some hurled spears, and others nooses.42–48.

But they assailed the goddess with blows from then the goddess Caṇḍikā clove,

मुमोचासुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी ।
सोऽपि क्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेसरी ॥

॥ मन्त्र ५१-श्लोक ५० ॥

चचारासुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः ।
निश्वासान्मुमुचे यांश्च युद्धयमानारणेऽम्बिका ॥

॥ मन्त्र ५२-श्लोक ५१ ॥

त एव सद्यः संभूता गणाः शतसहस्रशः ।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासिपट्टिशैः ॥

॥ मन्त्र ५३-श्लोक ५२ ॥

नाशयन्तोऽसुरगणान्देवीशक्त्युपबृंहिताः ।
अवादयन्त पटहान्गणाः शङ्खाँस्तथापरे ॥

॥ मन्त्र ५४—श्लोक ५३ ॥

क्रोध से प्रचण्ड होकर विनोद की मुद्रा में ही अपने अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करते हुए असुरों के समस्त आयुधों को छिन्न-भिन्न कर दिया। देवी का मुख मण्डल क्रोध एवं थकान से मुक्त था तथा देवगण एवं ऋषि लोग उनकी स्तुति कर रहे थे ॥ श्लोक ४९-५० ॥

as it were in merest play, those weapons and arms by raining forth her own weapons and arms. The goddess betrayed no exertion in her countenance, while the gods and rishis were praising her. 49–50.

भगवती ने असुरों के शरीर पर अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग खुलकर किया। देवी का वाहन सिंह भी क्रुद्ध होकर अपने गले के बालों को घुमाता हुआ जंगल में फैले हुए दावानल की तरह राक्षसों की सेनाओं पर टूट पड़ा। असुरों के साथ युद्ध क्षेत्र में युद्ध करती हुई अम्बिका ने जितने भी श्वांस छोड़े वे सभी तुरन्त हजारों गणों के रूप में उपस्थित हो गए। तथा परशु, भिन्दिपाल, खड्ग, और पट्टिश आदि अस्त्रों को लेकर दैत्यों से युद्ध करने लगे।
॥ श्लोक ५१-५३ ॥

The queenly goddess hurled her weapons and arms at the Asuras' bodies. The lion also that bore the goddess, enraged and with ruffled mane, stalked among the armies of Asuras, like fire through the forests. And the deep breaths, which Ambikā fighting in the battle breathed forth, came into real being at once as troops by hundred and thousands. These fought with axes, with javelins, and swords and halberds, destroying the Asura bands, being invigorated by the goddess' energy. 51–53.

मृदङ्गाँश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्धमहोत्सवे ।
ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्तिवृष्टिभिः ॥

॥ मन्त्र ५५ – श्लोक ५४ ॥

खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान् ।
पातयामास चैवान्यान् घण्टास्वनविमोहितान् ॥

॥ मन्त्र ५६—श्लोक ५५ ॥

असुरान्भुवि पाशेन बध्द्वाचान्यानकर्षयत् ।
केचिद् द्विधाकृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे ॥

॥ मन्त्र ५७—श्लोक ५६ ॥

विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते ।
वेमुश्च केचिद्रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ॥

॥ मन्त्र ५८–श्लोक ५७ ॥

देवी की शक्ति से संख्या में वृद्धि को प्राप्त समस्त गण, राक्षसों का संहार करते हुए शंख और नगाड़े बजाने लगे। इस युद्ध महोत्सव में कुछ अन्य देवगण मृदंग भी बजा रहे थे, इसके बाद देवी ने त्रिशूल, गदा, शक्ति आदि की वर्षा करते हुए खड्ग आदि अस्त्रों द्वारा सैंकड़ों महाअसुरों का संहार कर दिया, तथा बहुत से असुरों को अपने घण्टे के नाद से ही मूर्छित कर मार दिया ॥ श्लोक ५४–५५ ॥

अनेक दैत्यों को पाश से बांधकर पृथ्वी पर घसीट डाला तथा अन्यों के तलवार की तीखी धार से टुकड़े टुकड़े कर दिये ॥ श्लोक ५६ ॥

कुछ दैत्य भगवती द्वारा गदा की मार से ही अधमरे होकर पृथ्वी पर सो गए तथा कुछ अन्य राक्षस लोग मुसल की मार से खून की उल्टियाँ करने

And of these bands some raised a din with large drums, and others with conchs, and others besides with drums, in that great battle–festival. Then the goddess with her trident, her club, with showers of spears, and with her sword and other weapons slaughtered the great Asuras in hundreds, and laid others low who were bewitched with the ringing of her bell; 54–55.

And binding other Asuras with her noose dragged them on the ground. And others again, cloven in twain by sharp slashes of her sword and crushed by blows with her mace, lie on the ground; 56.

And some grievously battered by her club vomited forth blood. Some were felled to the ground, pierced in the breast by

केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि ।
निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे ॥

॥ मन्त्र ५९-श्लोक ५८ ॥

श्येनानुकारिणः प्राणान्मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः ।
केषांचिद्बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे ॥

॥ मन्त्र ६०-श्लोक ५९ ॥

शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः ।
विच्छिन्नजङ्घास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः ॥

॥ मन्त्र ६१-श्लोक ६० ॥

एकबाह्वक्षिचरणाः केचिद्देव्या द्विधा कृताः ।
छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ॥

॥ मन्त्र ६२-श्लोक ६१ ॥

लगे। कुछ दैत्य शूल के प्रहार द्वारा वक्षस्थल फट जाने से रण क्षेत्र में सो गए तथा कितने ही दैत्यों के कटि भाग वाणों की वर्षा से दो टुकड़े हो गए ॥ श्लोक ५७–५८ ॥

बाज पक्षी की भांति आक्रमण करने वाले देवताओं के उत्पीड़क राक्षस लोग प्राण विहीन हो गए। कुछ के हाथ कट-कट कर गिरने लगे कुछ के गले। अनेक दैत्यों के मस्तक कट कर गिर गए तथा अन्यों के शरीर बीच वाले भाग से ही टुकड़ों में बंट गए। कितने ही महादैत्यों की जंघाएं कट-कट कर भूमि पर गिर गईं ॥ श्लोक ५९–६० ॥

तथा इसी प्रकार अनेकों राक्षसों को एक हाथ, एक आँख और एक पैर वाला करके भगवती ने दो टुकड़े कर डाले।

कुछ राक्षस सिर के कट जाने पर भी नीचे गिरकर फिर उठ पड़ते और धड़ के सहारे ही

her trident. Some being closely massed together were cut in pieces by the torrent of her arrows in the battle-field. 57–58.

Following the manner of an army, the afflicters of the thirty gods gave up the ghost; some with their arms cut off, and others with severed necks; their heads fell from others, others were torn asunder in the middle; and other great Asuras fell to the earth with legs clean cut off; 59–60.

Some were cloven by the goddess into two parts, with a single arm and eye and foot to each part; And others fell and rose again, although with head cut off. Headless corpses,

कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः ।
ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः ॥

॥ मन्त्र ६३-श्लोक ६२ ॥

कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्गशक्त्यृष्टिपाणयः ।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः ॥

॥ मन्त्र ६४-श्लोक ६३ ॥

पातितै रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुंधरा ।
अगम्या साभवत्तत्र यत्राभूत् स महारणः ॥

॥ मन्त्र ६५-श्लोक ६४ ॥

शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः ।
मध्ये चासुरसैन्यस्य वारणासुरवाजिनाम् ॥

॥ मन्त्र ६६-श्लोक ६५ ॥

उत्तमोत्तम अस्त्र-शस्त्रों को लेकर देवी से युद्ध करते थे। अन्य बहुत से कबन्ध, लड़ाई के गधों की लय के अनुसार नाच रहे थे ॥ श्लोक ६१-६२ ॥

still grasping the finest weapons, fought with the goddess; and others danced there in the battle, keeping time to the strains of the musical instruments. 61-62.

बहुत से सिर विहीन धड़ अपने-अपने हाथों में तलवार (खड्ग) शक्ति, और ऋष्टि लेकर इधर उधर दौड़ लगा रहे थे एवं अन्यान्य महादैत्य, 'ठहर जाओ, ठहर जाओ' इस प्रकार युद्ध के लिए देवी को ललकार रहे थे ॥ श्लोक ६३ ॥

Corpses, with heads severed, still held swords and spears and lances in their hands; and other great Asuras were shouting to the goddess, "Stand ! stand !" 63.

जहाँ यह भयंकर युद्ध हुआ वहाँ की भूमि देवी द्वारा ध्वस्त कर गिराए गए रथ, हाथी, घोड़े और दैत्यों के शवों से इस प्रकार भर गई थी कि उस स्थान पर किसी का चलना-फिरना असम्भव था। ॥ श्लोक ६४ ॥

With the prostrate chariots elephants and horses and Asuras the earth became impassable where that great battle took place. 64.

असुर सेना के हाथी, घोड़ों तथा राक्षसों के स्वयं के शरीरों से इतना अधिक रक्त प्रवाहित हुआ कि तत्काल ही उस स्थल पर रक्त की महानदियां वह चलीं ॥ श्लोक ६५ ॥

And large rivers formed of torrents of blood straightway flowed along there amidst the armies of Asuras, and among the elephants, Asuras and horses. 65.

क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदारुमहाचयम् ॥

॥ मन्त्र ६७-श्लोक ६६ ॥

स च सिंहो महानादमुत्सृजन्धुतकेसरः ।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥

॥ मन्त्र ६८-श्लोक ६७ ॥

देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः ।
यथैषां तुष्टुवुर्देवाः पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ॥

॥ मन्त्र ६९-श्लोक ६८ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
महिषासुरसैन्यवधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥

भगवती अम्बिका ने पल भर में दैत्यों की उस विशाल सेना को इस प्रकार नष्ट कर दिया, जैसे घास और लकड़ी के बड़े भारी ढेर को अग्नि क्षण-मात्र में भस्म कर देती है ॥ श्लोक ६६ ॥

देवी का वाहन सिंह भी अपनी गर्दन के केशों को हिला डुलाकर अत्यधिक वेग से गर्जना करता हुआ राक्षसों की देह से उनके प्राण पखेरू चुन रहा था ॥ श्लोक ६७ ॥

देवी के गणों ने भी उन महाअसुरों के साथ ऐसा अद्‌भुत युद्ध किया जिसे देख कर आकाश स्थित परम सन्तुष्ट देवमण्डल ने उन पर पुष्पवर्षा की ॥ श्लोक ६८ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में महिषासुर सेना का वध नामक द्वितीय अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

Thus Ambikā brought that great army of the Asuras to utter destruction in a moment, even as fire utterly consumes a huge pile of grass and timber. 66.

And the lion, with quivering mane, stalked on roaring aloud. While he prowled as it were for lives out of the bodies of the foes of the Immortals. 67.

The battle was fought there between those troops of the goddess and the Asuras, so that the gods in heaven sending down showers of flowers gratified her. 68.

The end of Slaughter of the army of the *Asura Mahisha*

तृतीयोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

निहन्यमानं तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः ।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद् ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् ॥

॥ मन्त्र २–श्लोक १ ॥

तृतीय अध्याय

महिषासुर वध

युद्ध का वर्णन चल रहा है : देवी ने प्रमुख असुरों का युद्ध में विनाश कर अन्त में महिषासुर का वध कर डाला।

ऋषि ने कहा—इस प्रकार महिषासुर की सेना के वध को देखकर उसका सेनापति महादैत्य चिक्षुर अत्यन्त क्रुद्ध होकर अम्बिका से युद्ध करने के लिए आया ॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The slaying of the Asura Mahisha.

The description of the battle is continued.—The goddess slew the Asura chiefs in single combat and finally the Asura Mahisha.

The ṛishi said :

Now the great Asura, the general Çikshura, seeing that army being slaughtered, advanced in wrath to fight with Ambikā. 1-

स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः ।
यथा मेरुगिरेः शृङ्गं तोयवर्षेण तोयदः ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

तस्य च्छित्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् ।
जघान तुरगान्बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चातिसमुच्छ्रितम् ।
विव्याध चैव गात्रेषु छिन्नधन्वानमाशुगैः ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ४ ॥

स च्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः ।
अभ्यधावत तां देवीं खड्गचर्मधरोऽसुरः ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ५ ॥

चिक्षुर देवी पर असंख्य बाणों की वर्षा करने लगा। उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मेरु पर्वत की चोटी को बादलों ने पानी बरसा कर ढक दिया हो ॥ श्लोक २ ॥

The Asura rained a snower of arrows on the goddess in the battle, as a cloud deluges mount Meru's summit with a shower of rain. 2.

देवी ने चिक्षुर द्वारा अचानक की गई बाण वर्षा के बाणों को अपने बाणों से छिन्न-भिन्न कर डाला तथा उसके घोड़ों एवं सारथियों को भी मार दिया ॥ श्लोक ३ ॥

The goddess, cutting asunder the masses of his arrows then as it were in play, smote his horses with her arrows and their charioteer. 3.

देवी ने शीघ्र ही उसके धनुष तथा ध्वजा को भी छिन्न-भिन्न कर दिया। और धनुष के कट जाने के पश्चात् देवी ने अपने धनुष बाणों से चिक्षुर के शरीर को भी बींध डाला ॥ श्लोक ४ ॥

And split his bow forthwith and his banner raised high aloft; and with swift missiles pierced his limbs as he stood with shattered bow. 4.

धनुष, रथ, घोड़े एवं सारथि विहीन होने पर चिक्षुर के पास जब कोई उपाय न रह गया तो वह क्रोधित होकर ढाल तथा तलवार लेकर देवी पर झपटा ॥ श्लोक ५ ॥

His bow shattered, his chariot useless, his horses killed, his charioteer slain, the Asura armed with sword and shield rushed at the goddess. 5.

सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि ।
आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान् ॥ ॥

॥ मन्त्र ७–श्लोक ६ ॥

तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन ।
ततो जग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः ॥

॥ मन्त्र ८–श्लोक ७ ॥

चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः ।
जाज्वल्यमानं तेजोभी रविविम्बमिवाम्बरात् ॥

॥ मन्त्र ९–श्लोक ८ ॥

दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवीशूलममुञ्चत ।
तेन तच्छतधा नीतं शूलं स च महासुरः ॥

॥ मन्त्र १०–श्लोक ९ ॥

उसने अपनी तेज तलवार से देवी के वाहन सिंह के मस्तक पर प्रहार किया तथा देवी की भुजा पर भी अत्यन्त तीव्र प्रहार किया ॥ श्लोक ६ ॥

हे राजा ! देवी की भुजा पर प्रहार करते ही चिक्षुर की तलवार के टुकड़े हो गए इससे क्रोधित होकर चिक्षुर ने आंखें लाल करते हुए शूल हाथ में ले लिया ॥ श्लोक ७ ॥

चिक्षुर ने उस शूल का प्रयोग देवी भद्रकाली पर किया और आकाश से गिरता हुआ वह शूल सूर्य के तेजपुंज के समान अपने तेज से प्रज्वलित हो उठा ॥ श्लोक ८ ॥

राक्षस द्वारा प्रयुक्त शूल को देवी ने जब अपनी ओर आते हुए देखा, तब उन्होंने भी अपने शूल का प्रयोग किया इससे राक्षस का शूल सैकडों टुकड़ों में बंट गया तथा स्वयं राक्षस की भी यही गति हुई और वह अपने प्राणों से हाथ धो बैठा ॥ श्लोक ९ ॥

With the utmost celerity he smote the lion on the head with his sharp-edged sword, and struck the goddess also on her left arm. 6.

His sword shivered to pieces as it touched her arm (O prince). Thereon red-eyed with anger, he grasped his pike. 7.

And he, the great Asura, flung it at Bhadra-kāli, as it were the Sun's orb blazing brightly with its splendour from out the sky. 8.

Seeing that pike falling on her, the goddess hurled her pike, and it shattered that pike into a hundred fragments and the great Asura also. 9.

हते तस्मिन्महावीर्ये महिषस्य चमूपतौ ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ॥

॥ मन्त्र ११-श्लोक १० ॥

सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् ।
हुंकाराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥

॥ मन्त्र १२-श्लोक ११ ॥

भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः ।
चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत् ॥

॥ मन्त्र १३-श्लोक १२ ॥

ततः सिंहः समुत्पत्य गजकुम्भान्तरस्थितः ।
बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥

॥ मन्त्र १४-श्लोक१३ ॥

महाबलशाली सेनापति चिक्षुर के युद्ध में मारे जाने के बाद देवताओं का पीडक चामर नामक दैत्य हाथी पर बैठकर युद्ध करने के लिए आया।
॥ श्लोक १० ॥

When he, Mahisha's very valiant general, was slain, Cāmara, the afflicter of the thirty gods, advanced mounted on an elephant. 10.

चामर ने देवी पर शक्ति से प्रहार किया किन्तु अम्बिका ने अपनी 'हुँकार' से ही उस असुर को तेज-हीन करके भूमि पर गिरा दिया ॥ श्लोक ११ ॥

And he also hurled his spear at the goddess. Down to the ground Ambikā quickly struck it, assailed with a contemptuous hoot and rendered lustre-less. 11.

शक्ति के टूट जानें के पश्चात् चामर अत्यन्त क्रोधित हो उठा और उसने शूल से आक्रमण किया किन्तु अम्बिका ने शूल को भी छिन्न-भिन्न कर दिया ॥ श्लोक १२ ॥

Seeing his spear broken and fallen, Cāmara filled with rage flung a pike; and that she split with her arrows. 12.

इसके तुरन्त बाद ही देवी का वाहन सिंह झपट कर चामर के हाथी के मस्तक पर बैठ गया तथा अपने बाहुओं के द्वारा दैत्य से भयंकर युद्ध करने लगा ॥ श्लोक १३ ॥

Then the lion leaping up fastened on to the hollow of the elephant's forehead, and fought in close combat aloft with that foe of the thirty gods. 13.

युध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ ।
युयुधातेतिसंरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक १४ ॥

ततो वेगात्खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा ।
करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्कृतम् ॥

॥ मन्त्र १६-श्लोक १५ ॥

उदग्रश्चरणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः ।
दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥

॥ मन्त्र १७-श्लोक १६ ॥

देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् ।
बाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्धकम् ॥

॥ मन्त्र १८-श्लोक १७ ॥

वे दोनों हाथी के ऊपर युद्ध करते हुए पृथ्वी पर आ पहुँचे तथा अत्यन्त क्रोध में भरे हुए परस्पर भयंकर प्रहार करने लगे ॥ श्लोक १४ ॥

अचानक सिंह जोर से आकाश की ओर उछला और फिर नीचे गिरते हुए उसने अपने हाथ के पंजों के प्रहार से चामर का सिर धड से अलग कर दिया ॥ श्लोक १५ ॥

इसी तरह उदग्र नामक असुर भी देवी के साथ युद्ध करते हुए शिला एवं वृक्ष की चोट से मारा गया तथा कराल नामधारी असुर दाँतों, मुक्कों तथा थप्पडों की मार से प्राणहीन हो गया।
॥ श्लोक १६ ॥

इस प्रकार क्रुद्ध भगवती ने अपनी गदा के प्रहार से उद्धत नामक असुर का प्राणान्त कर दिया तथा भिन्दिपाल नामक अस्त्र से वाष्कल को और बाणों के प्रहार से ताम्र तथा अंधक जैसे असुरों को भी मार गिराया ॥ श्लोक १७ ॥

But both then fell, as they were fighting, from the elephant to the ground. They fought closely locked together with most terrible blows. 14.

Then quickly springing up to the sky and descending, the lion severed Cāmara's head with a blow from his paw. 15.

And Udagra was slain in battle by the goddess with stones, trees and other things, and Karāla also was stricken down by her teeth and fists and feet. 16.

And the goddess enraged ground Ud-dhata to powder with blows from her club; and killed Vāskala with a dart. Tāmra and Andhaka with arrows. 17.

उग्रास्यमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम् ॥
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥
॥ मन्त्र १९-श्लोक १८ ॥

विडालस्यासिना कायात्पातयामास वै शिरः ।
दुर्धरं दुर्मुखं चौभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम् ॥
॥ मन्त्र २०-श्लोक १९ ॥

एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः ।
माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान्गणान् ॥
॥ मन्त्र २१-श्लोक २० ॥

कांश्चित्तुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान् ।
लाङ्गूलताडितांश्चान्याञ्च्छृङ्गाभ्यां च विदारितान् ।
॥ मन्त्र २२-श्लोक २१ ॥

तीन नेत्रों वाली अम्बिका ने अपने त्रिशूल से उग्रास्य, उग्रवीर्य तथा महाहनु नामक असुरों का भी वध कर दिया ॥ श्लोक १८ ॥

And the supreme three-eyed goddess slew Ugrāsya and Ugravirya and Mahā-hanu also with her trident. 18.

देवी ने तलवार से विडाल के मस्तक को काट दिया तथा दुर्धर और दुर्मुख को अपने बाणों के प्रहार से यमलोक पहुँचा दिया ॥ श्लोक १९ ॥

With her sword she struck Viḍāla's head clean down from his body. She despatched both Dur-dhara and Dur-mukha to Yama's abode with her arrows. 19.

महिषासुर ने अपनी सेना का यह भयंकर संहार होते देखकर भैंसे का रूप धारण कर लिया और वह देवी के गणों को त्रास पहुँचाने लगा।
॥ श्लोक २० ॥

Now, as his army was being thus destroyed utterly, the Asura Mahisha in his own buffalo-shape terrified her troops. 20.

किसी गण को उसने अपने थूथुन से (मुंह से) मारा, किसी को खुरों के प्रहार से तथा किसी को पूंछ से आहत करने लगा और अन्यों को अपने सींगों के प्रहार से विदीर्ण कर डाला।
॥ श्लोक २१ ॥

Some he laid low by a blow from his muzzle, and others by stamping with his hooves, and others because they were lashed with his tail and gashed with his horns. 21.

वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च ।
निःश्वासपवनेनान्यान्पातयामास भूतले ॥

॥ मन्त्र २३-श्लोक २२ ॥

निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः ।
सिंहं हन्तुं महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २३ ॥

सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः ।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक २४ ॥

वेगभ्रमणविक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत ।
लाङ्गूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २५ ॥

कुछ गणों को अपने वेग से तथा कुछ को सिंह-नाद करके तथा कुछ को चक्कर खिलाकर और अनेकों को अपनी निःस्वास वायु के झोंकों से भूमि पर गिरा दिया ॥ श्लोक २२ ॥

And others again by his impetuous rush, his bellowing and his wheeling career, and others by the blast of his breath—thus he laid them low on the face of the earth. 22.

देवी के गणों की सेना को परास्त करने के बाद वह असुर जब देवी के सिंह को मारने के लिए झपटा तब इससे जगदम्बा अत्यन्त क्रोधित हो गईं ।
॥ श्लोक २३ ॥

Having laid low the van of her army, the Asura rushed to attack the great goddess' lion. Thereat Ambikā displayed her wrath. 23.

पराक्रमी महिषासुर अत्यधिक क्रोधित होकर अपने खुरों से भूमि को खोदने लगा तथा अपनी सींगों से ऊंचे-ऊंचे पर्वतों को उठा कर पटकने लगा तथा भयंकर गर्जना करने लगा ॥ श्लोक २४ ॥

And he, great in valour, pounding the surface of the earth with his hooves in his rage tossed the mountains aloft. with his horns and bellowed. 24.

इस उठापटक से समस्त पृथ्वी क्षुब्ध हो उठी और फटने लगी । तथा महिषासुर की पूंछ से टकरा कर समुद्र के जल से पृथ्वी जलमग्न हो गई ।
॥ श्लोक २५ ॥

Crushed by his impetuous wheelings the earth crumbled to pieces; and the sea lashed by his tail overflowed in every direction. 25.

धुतश्रृङ्गविभिन्नाश्च खण्डखण्डं ययुर्घनाः ।
श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ॥

॥ मन्त्र २७–श्लोक २६ ॥

इति क्रोधसमाध्मातमापतन्तं महासुरम् ।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्वधाय तदाकरोत् ॥

॥ मन्त्र २८–श्लोक २७ ॥

सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महासुरम् ।
तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे ॥

॥ मन्त्र २९–श्लोक २८ ॥

ततः सिंहोऽभवत्सद्यो यावत्तस्याम्बिका शिरः ।
छिनत्ति तावत्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत ॥

॥ मन्त्र ३०–श्लोक २९ ॥

महिषासुर की सींगों के प्रहार से बादलों के टुकड़े होने लगे तथा उसके भयंकर श्वास-प्रश्वास से सैंकडों पर्वत उड़ते हुए आकाश से गिरने लगे।
॥ श्लोक २६ ॥

इस प्रकार उस महादैत्य को क्रोधित होकर अपनी ओर आता हुआ देख भगवती ने उसका वध करने के लिए कोप किया ॥ श्लोक २७ ॥

भगवती चण्डिका ने उस समय पाश के प्रयोग से उस दैत्य को बांध लिया। पाश से बद्ध हो जाने पर उस असुर ने अपना महिष रूप त्याग दिया।
॥ श्लोक २८ ॥

शीघ्र ही वह असुर सिंह के रूप में प्रकट हो गया। और अम्बिका ने जैसे ही उसका शिरच्छेद करना चाहा वह खड्गधारी पुरुष के रूप में परिवर्तित हो गया ॥ श्लोक २९ ॥

And the clouds pierced by his swaying horns were rent to fragments; mountains fell in hundreds from the sky, being cast down by the blast of his breath. 26.

Caṇḍikā looked on the great Asura, as swollen with rage he rushed on, and gave a way to her wrath then in order to slay him. 27.

She flung her noose full over him, and bound the great Asura fast. And he quitted his buffalo shape when held bound in the great battle. 28.

And then became a lion suddenly. While Ambikā is cutting off his head he took the appearance of a man with scymitar in hand. 29.

तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः ।
तं खड्गचर्मणा सार्धं ततः सोऽभून्महागजः ॥

॥ मन्त्र ३१-श्लोक ३० ॥

करेण च महासिंहं तं चकर्ष जगर्ज च ।
कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥

॥ मन्त्र ३२-श्लोक ३१ ॥

ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः ।
तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥

॥ मन्त्र ३३-श्लोक ३२ ॥

ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् ।
पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुणलोचना ॥

॥ मन्त्र ३४-श्लोक ३३ ॥

इस प्रकार उत्पन्न हुए इस पुरुष को देवी ने अपने बाणों से और ढाल एवं तलवार से ही बींध डाला तब उसने अपना यह रूप परिवर्तित कर लिया और वह गजराज के रूप में आ गया ॥ श्लोक ३० ॥

गजराज के रूप में वह असुर गर्जना करता हुआ जब अपनी सूंड से देवी के सिंह को अपनी ओर खींचने लगा, इस बीच देवी ने अपनी तलवार से उसकी सूंड काट डाली ॥ श्लोक ३१ ॥

इसके बाद उस असुर ने पहले की तरह पुनः भैंसे का रूप धारण कर लिया और तीनों लोकों के चराचर प्राणियों को अपने क्रियाकलापों से संत्रस्त करने लगा ॥ श्लोक ३२ ॥

इस पर जगदम्बा चण्डिका क्रोधित होकर बार-बार उत्कृष्ट मधु का पान करने लगीं तथा उनके नेत्र रक्तवर्ण हो उठे ॥ श्लोक ३३ ॥

Straightway the goodess with her arrows swiftly pierced the man together with his scymitar and shield. Then he became a huge elephant. 30.

And tugged at her great lion with his trunk and roared, but the goddess cut off his trunk with her sword as he made his tugs. 31.

Next the great Asura assumed his buffalo shape again, and so shook the three worlds with all that is moveable and immoveable therein. 32.

Enraged thereat Caṇḍikā, the mother of the world, quaffed a sublime beverage again and again, and laughed as her eyes gleamed ruddy. 33.

ननर्द चासुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः ।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ॥

॥ मन्त्र ३५–श्लोक ३४ ॥

सा च तान्प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः ।
उवाच तं मदोद्धूतमुखरागाकुलाक्षरम् ॥

॥ मन्त्र ३६—श्लोक ३५ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र ३७ ॥

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत्पिबाम्यहम् ।
मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥

॥ मन्त्र ३८—श्लोक ३६ ॥

अपने बल तथा पराक्रम के अभिमान में उन्मत्त होकर वह राक्षस उद्दण्डता से गजना करने लगा तथा बड़ी-बड़ी पर्वत शिलाओं को भगवती के ऊपर पटकने लगा ॥ श्लोक ३४ ॥

उन पर्वत शिलाओं को देवी ने अपने बाणों के प्रहार से चूर्ण कर दिया। उनका मुख मण्डल मधुपान करने से लाल रंग का हो उठा और वह हर्ष से उद्दीप्त हो गईं।

॥ श्लोक ३५ ॥

देवी ने कहा—अरे मूर्ख, मैं जब तक मधुपान करती हूं उस क्षण तक तू खूब गर्जना कर ले। जब मैं अपने हाथों से इसी स्थान पर शीघ्र ही तेरा वध करूंगी तब देवता लोग भी गर्जना करेंगे।

॥ श्लोक ३६ ॥

And the Asura roared out, puffed up with his strength and valour and frenzy, and hurled mountains against Caṇḍikā with his horns. 34

And she, shivering to atoms with showers of arrows those mountains that he hurled, spoke to him in confused words, while her mouth was rendered ruddier by the mead that she had drunk. 35.

The Goddess said :

Roar, roar on thy brief moment, O fool, the while I quaff this mead: The gods shall soon roar, when I shall slay thee even here. 36.

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ३९ ॥

एवमुक्त्वा समुत्पत्य सारुढा तं महासुरम् ।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ॥

॥ मन्त्र ४०—श्लोक ३७ ॥

ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः ।
अर्धनिष्क्रान्त एवातिदेव्या वीर्येण संवृतः ॥

॥ मन्त्र ४१—श्लोक ३८ ॥

अर्धनिष्क्रान्त एवासौ युध्यमानो महासुरः ।
तया महासिना देव्या शिरश्छित्वा निपातितः ॥

॥ मन्त्र ४२—श्लोक ३९ ॥

ऋषि ने कहा—यह कहकर देवी उछलीं, तथा उस महाअसुर पर चढ़ बैठी। और अपने पैरों से उसे दबाकर शूल के द्वारा उसके कण्ठ को आहत कर दिया ॥ श्लोक ३७ ॥

Exclaiming thus she leaped upwards and sat herself on that great Asura, and kicked him on the neck with her foot and struck him with her spear. 37.

देवी के पैरों से दब जाने पर भी महिषासुर अपने मुख के द्वारा अन्य रूप में बाहर निकलने लगा। वह आधा ही बाहर निकल पाया कि इसके पूर्व ही देवी ने अपने पराक्रम से उसे रोक दिया। ॥ श्लोक ३८ ॥

And thereupon he, being assailed by her foot, half issued forth from his own mouth in sooth. Being completely encompassed by the goddess' valour. 38.

आधा निकला हुआ होने पर भी जब वह महादैत्य महिषासुर देवी से युद्ध करने लगा, तब देवी ने तलवार से उस असुर का सिर काट कर नीचे गिरा दिया ॥ श्लोक ३९ ॥

That great Asura being thus attacked half issued forth indeed. The goddess struck off his head with her great sword and laid him low. 39.

ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाश तत् ।
प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवतागणाः ॥

॥ मन्त्र ४३—श्लोक ४० ॥

तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः ।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥

॥ मन्त्र ४४—श्लोक ४१ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
महिषासुरवधो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥

महिषासुर के वध के पश्चात् सम्पूर्ण दैत्य सेना हाहाकार करती हुई भाग खड़ी हुई तथा देवता लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ श्लोक ४० ॥

देवताओं ने सन्तुष्ट होकर महर्षियों सहित भगवती जगदम्बा की स्तुति की तथा गन्धर्वों और अप्सराओं ने गान एवं नृत्य कर विजय महोत्सव मनाया ॥ श्लोक ४१ ॥

मार्कण्डेय पुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में महिषासुर वध नामक तृतीय अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

Then perished all that Daitya army with great lamentation. And all the hosts of the gods rose to the highest exultation. 40.

The gods and the great heavenly rishis poured forth praises to the goddess, the Gandharva chiefs burst into song and the bevies of Apsarases into dances. 41.

The Slaying of the Asura Mahisha concluded.

चतुर्थोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या ।
तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥

॥ मन्त्र २-श्लोक १ ॥

चतुर्थ अध्याय

देवताओं द्वारा देवी की स्तुति

देवी की विजय पर देवताओं ने उनकी स्तुति की। देवी ने उनको यह वर दिया था कि संकट के समय जब वे लोग उनका स्मरण करेंगे तब वे उनकी सदा सहायता करेंगी।

ऋषि ने कहा—भगवती द्वारा प्रबल बलशाली दुष्टात्मा महिषासुर तथा उसकी असुर सेना के विनाश कर देने के बाद इन्द्र आदि देवगणों ने नत-मस्तक होकर भगवती जगदम्बिका की श्रद्धा पूर्वक वन्दना और स्तुति की। उस समय अत्यन्त प्रसन्न होने के कारण देवताओं के शरीर रोमाँचित हो रहे थे॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The gods poured forth their praises to Caṇḍikā *on her victory—And she gave them the boon that she would always befriend them, if they recalled her to mind in calamities.*

The ṛishi said :

When that most valiant evil-souled army of the gods' foes was vanquished by the goddess, Śakra and the hosts of other gods poured forth their praises to her with their voices, reverently bending down their necks and shoulders, while their bodies looked handsome because their hair stood erect with exultation. 1.

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निःशेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ।
तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च नहि वक्तुमलं बलञ्च ।

देवताओं ने कहा कि जिन भगवती ने अपनी शक्ति से सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त कर रखा है तथा समस्त देवगणों की सम्मिलित शक्ति ही जिनका स्वरूप है उन देवताओं तथा ऋषियों की वन्दनीया भगवती जगदम्बिका को हम भक्तिभाव से प्रणाम करते हैं, वे हमारा कल्याण करें ।

॥ श्लोक २ ॥

The goddess, who stretched out this world by her power, Whose body comprises the entire powers of all the hosts of gods.

Her, Ambikā, worthy of worship by all gods and great ṛishis. We bow before in faith; may she ordain blessings for us ! 2.

जिन के अनुपम प्रभाव एवं बल का वर्णन करने में शेष नाग, ब्रह्मा तथा शंकर भी समर्थ नहीं हैं,

May she, whose peerless majesty and power Ananta Adorable, Brahma and Hara cannot in sooth declare,

सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥

॥ मन्त्र ४–श्लोक ३ ॥

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥

॥ मन्त्र ५–श्लोक ४ ॥

वह भगवती चण्डिका अखिल ब्रह्माण्ड का परिपालन करने तथा संसार के अशुभ भय का नाश करने का विचार करें॥ श्लोक ३॥

May she, Caṇḍikā, to protect the entire world
And to destroy the fear of evil turn her mind ! 3.

भगवती सत्कर्मियों के घरों में लक्ष्मी के रूप में तथा पापात्माओं के घर में दरिद्रता बन कर निवास करती हैं एवं पवित्र हृदय लोगों के मन में बुद्धि के रूप में तथा सत्पुरुषों में श्रद्धा के रूप में और कुलीन लोगों में लज्जा के रूप में निवास करती हैं। उन भगवती को हम प्रणाम करते हैं। हे देवि ! आप विश्व का परिपालन करें।

॥ श्लोक ४॥

Her, who is good-Fortune herself in the dwellings of men of good deeds, Ill-Fortune
In those of men of sinful souls; who is Intelligence in the hearts of the prudent,
Who is Faith in those of the good, and Modesty in that of the high-born man.
Her, even thee, we bow before; protect the universe, O goddess ! 4.

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि ।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि
सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ५ ॥

हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा ।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥

॥ मन्त्र ७-श्लोक ६ ॥

आपके इस अचिन्त्य स्वरूप का तथा असुरों का विनाश करने वाले अद्‌भुत पराक्रम एवं समस्त देवों और दैत्यों के सम्मुख अनेक युद्धों में प्रकट किए गए अद्‌भुत चरित्रों का हम कैसे और किस प्रकार वर्णन कर सकते हैं क्योंकि आपका चरित्र वर्णनातीत है उसका वर्णन करना हमारी शक्ति से परे है।

॥ श्लोक ५ ॥

Can we describe this thy thought-transcending form ?
Or thy abundant surpassing valour that destroyed the Asuras ?
Or thy surpassing feats which were displayed in battles
Among all the hosts of Asuras, gods and others, O goddess ? 5.

भगवती आप ही सम्पूर्ण विश्व की उत्पत्ति का मूल कारण हैं तथा आप सत्व, रज एवं तम तीनों गुणों से सम्पन्न हैं, तथापि दोषों से आपका सामीप्य बिल्कुल ही नहीं दिखाई देता। विष्णु तथा शंकर आदि देवता भी आपका पार पा सकने में असमर्थ हैं अर्थात् वे आपकी शक्ति का ज्ञान भली भाँति नहीं कर सकते। आप ही अखिल विश्व को आश्रय देने वाली हैं। समस्त विश्व के कण में आपकी सत्ता विद्यमान है क्योंकि आप आद्या (आदि स्वरूपा) अव्याकृत और पराप्रकृति हैं ॥ श्लोक ६ ॥

Thou art the cause of all the worlds ! Though characterized by the three qualities, By faults Thou art not known ! Even by Hari, Hara and the other gods thou art incomprehensible !
Thou art the resort of all; thou art this entire world which is composed of parts !
Thou verily art sublime original Nature untransformed ! 6.

यस्याः समस्तसुरतासमुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि ।
स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥

॥ मन्त्र ८-श्लोक ७ ॥

या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता च
अभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः ।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै-
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ॥

॥ मन्त्र ९-श्लोक ८ ॥

हे देवि ! सभी प्रकार के यज्ञों में जिसका उच्चारण करने से देवता तृप्त हो जाते हैं वह स्वाहा स्वरूपिणी आप ही हैं। पितृमण्डल की तृप्ति के कारण रूप में भी आप ही अवस्थित हैं अतः आपको लोग स्वधा के रूप में भी सम्बोधित करते हैं ।
॥ श्लोक ७ ॥

Thou, whose complete divinity by means of utterance
Finds satisfaction in all sacrifices, O goddess,
Art verily Svahā, and givest satisfaction to the Pitṛi-hosts:
Hence thou art in truth declared by men to be Svadhā also. 7.

हे देवि ! कैवल्य किंवा मुक्तिलाभ की जो निमित्त हैं, अचिन्तनीय, अहिंसादिक महाव्रतों के स्वरूप में अवस्थित सम्पूर्ण दोषों से मुक्त, जितेन्द्रिय तथा ब्रह्मतत्व को ही सारभूत मानने वाले मुमुक्षु मुनि जनों का आधार तथा सनकादिक मुनिगण भी जिसकी शिक्षा ग्रहण करते हैं वह पराविद्या स्वरूपिणी आप ही हैं ॥ श्लोक ८ ॥

Thou art she, who effects final emancipation and performs great thought-transcending penances !
Thou studiest with the organs, which are the essence of strength, well-restrained !
With munis, who seek final emancipation and who have shed all their faults,
Thou art The Knowledge, adorable, sublime in sooth, O goddess ! 8.

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-
मुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् ।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्त्तिहन्त्री ॥

॥ मन्त्र १०-श्लोक ६ ॥

मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्ग ।
श्रीः कैटिभारिहृदयैककृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥

॥ मन्त्र ११-श्लोक १० ॥

आप शब्दब्रह्म स्वरूपिणी हैं, तथा सुविमल ऋक् और यजुष् की निधान हैं और साम (ध्वनि विशेष) उद्गीथ के रमणीय पद पाठ से संयुक्त सामवेद की भी आप ही आश्रय हैं। देवी त्रयी और वीर्यातिशालिनी (षड् ऐश्वर्य सम्पन्न) भगवती तथा संसार चक्र की प्रवर्तिका के रूप में आप ही प्रवृत्ति मार्ग (संसारोत्पत्ति) की नियामिका हैं और कृषि, वाणिज्य, पशु पालन आदि की भी प्रेरक हैं तथा तीनों भुवनों की सभी प्रकार की पीड़ाओं को नष्ट करने वाली हैं ॥ श्लोक ९ ॥

Sound is thy soul ! thou art the repository
of the most spotless ṛic and yajus hymns,
And of the sāmans, which have the
charming-worded texts of the Ud-githa !
Thou as goddess art the triple Veda, the
adorable, and for the existence and production
Of all the worlds art active; thou art the
supreme destroyer of their pains. 9.

आप मेधा स्वरूपिणी हैं तथा समस्त शास्त्रों के तत्त्वों की अधिष्ठात्री हैं। अनासक्त रूप से संसार रूपी दुर्गम समुद्र से पार करने वाली दुर्गा देवी के रूप में आप प्रतिष्ठित हैं। कैटभ दैत्य के एकमात्र शत्रु भगवान विष्णु के वक्षस्थल पर निवास करने वाली लक्ष्मी के रूप में आप ही विराजमान हैं तथा शंकर द्वारा समादृत भगवती गौरी भी आप ही हैं। ॥ श्लोक १० ॥

Thou art Mental Vigour, O goddess !
thou hast comprehended the essence of all the
Scriptures !
Thou art Durgā; the boat to cross the
difficult ocean of existence; devoid of attach-
ments !
Thou art Srī, who has planted her dominion
alone in the heart of Kaiṭabha's foe :
Thou indeed art Gaurī, who has fixed her
dweling in the moon-crested god ! 10.

ईषत्सहाससममलं परिपूर्णचन्द्र–
बिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम् ।
अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥

॥ मन्त्र १२–श्लोक ११ ॥

दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकराल–
मुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः ।
प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥

॥ मन्त्र १३–श्लोक १२ ॥

मन्दस्मित से युक्त, आपका मुखमण्डल पूर्णिमा के विमल चन्द्रबिम्ब के समान आह्लादक तथा श्रेष्ठ सुवर्ण की भाँति आकर्षक कान्ति से रमणीय है। तो भी यह बड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसे आह्लादयुक्त सौम्य मुखमण्डल को देख कर भी महिषासुर नामक असुर ने क्रोधित होकर अकस्मात् ही आपके मुखमण्डल पर आघात किया।

॥ श्लोक ११ ॥

देवि ! आपका मुखमण्डल क्रोध से कुपित होने पर उदित होते हुए चन्द्र के सदृश रक्तवर्ण तथा तनाव युक्त भौंहों के कारण विकराल रूप में परिणत हुआ। किन्तु यह बड़े आश्चर्य की बात है कि उस मुखमण्डल को देख कर भी महिषासुर के प्राण पखेरू तत्काल ही नहीं निकले। क्रोध से परिपूर्ण यमराज को देख कर भला ऐसा कौन प्राणी होगा जो फिर जीवन धारण कर सके ॥ श्लोक १२ ॥

Slightly-smiling, spotless, resembling the full moon's
Orb, beautiful as the choicest gold, and lovely was thy face !
Yet't was very marvellous that, being swayed by anger,
The Asura Mahisha suddenly smote thy face when he saw it. 11.

But after seeing the wrathful face, O goddess, terrible with its frowns,
And sheeny in hue like the rising moon, that Mahisha
Did not forthwith yield up his life, It was passing wonderful:
For who can live after beholding the King of Death enraged ? 12.

देवि प्रसीद परमाभवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि ।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत–
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥

॥ मन्त्र १४–श्लोक १३ ॥

ते संमता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥

॥ मन्त्र १५–श्लोक १४ ॥

देवि ! आप प्रसन्न हों। हे परमात्मस्वरूपिणि ! आपकी प्रसन्नता से विश्व का अभ्युदय होता है तथा क्रुद्ध होने पर आप क्षणमात्र में ही अनेकों वंशों का विनाश कर देती हैं। यह रहस्य अब ज्ञात हो गया क्योंकि आपके क्रोध से महिषासुर की बहुत बड़ी सेना विनाश को प्राप्त हो गई है।

॥ श्लोक १३ ॥

आप सदा अभ्युदय देने वाली हैं। आप जिन लोगों पर प्रसन्न होती हैं, वे देश-विदेश सभी में सम्मान्य हो जाते हैं तथा उन्हें विपुल सम्पत्ति तथा यश की उपलब्धि होती है। तथा उनके पुरुषार्थ से सम्बद्ध धार्मिक क्रिया-कलाप कभी क्षीण नहीं होते और वे ही लोग विनीत पुत्र, भृत्य (नौकर चाकर) तथा गृहिणी से युक्त धन्य भाग्य माने जाते हैं एवं आपकी कृपा से उनका अभ्युदय होता रहता है।

॥ श्लोक १४ ॥

Be gracious, O goddess, as supreme lady, to life ;
When enraged thou forthwith destoryest whole families !
Known at this very moment is this, that here is brought to its end
The Asura Mahisha's most extensive might ! 13.

Esteemed are they among the nations, theirs are riches,
Theirs are glories, and their sum of right-eousness perishes not,
Happy are they indeed, and they possess devoted children, servants and wives,
On whom thou, well-pleased, dost always bestow prosperity, O lady ! 14.

धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादा-
ल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥

॥ मन्त्र १६-श्लोक १५ ॥

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीवशुभां ददासि ।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥

॥ मन्त्र १७-श्लोक १६ ॥

भगवति ! आपके ही अनुग्रह से पुण्य पुरुष आदरपूर्वक प्रतिदिन धार्मिक कृत्यों को सम्पन्न करते हैं तथा स्वर्ग लाभ करते हैं। अतएव प्रसन्न होकर तीनों लोकों में आप अभीष्ट फल प्रदान करती हैं। ॥ श्लोक १५ ॥

All righteous actions ever indeed, O goddess,
With utmost respect the man of good deeds daily performs,
And gains heaven thereafter by thy favour, O lady.
Dost thou not by him bestow rewards even on the three worlds, O goddess ? 15.

हे माँ दुर्गे ! स्मरण करने मात्र से ही आप सांसारिक प्राणियों का भय दूर कर देती हैं तथा स्वस्थ लोगों द्वारा स्मरण करने पर उनको आप अत्यन्त फल देने वाली बुद्धि प्रदान करती हैं। आप दरिद्रता के दुख का भय भी निर्मूल कर समस्त प्राणियों को उपकृत करने के लिए सदा सर्वदा करुणाशालिनी रहती हैं ॥ श्लोक १६ ॥

Thou, O Durgā, when called to mind, dost remove terror from every creature :
Thou, when called to mind by those in health, dost bestow a mind extremely bright :
What goddess but thou, O dispeller of poverty, pain and fear,
Hast ever benevolent thoughts in order to work benefits to all ? 16.

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान्विनिहंसि देवि ॥

॥ मन्त्र १८-श्लोक १७ ॥

दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म
सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् ।
लोकान्प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १८ ॥

भगवति, आप इन दैत्यों का विनाश इसलिए करती हैं कि विश्व सुखी बने तथा वे लोग दीर्घकाल तक नरकवास करने हेतु—पाप कर्मों में ही चाहे संलग्न क्यों न हों तथापि आप इन शत्रुओं का नाशकर उन्हें मृत्यु का वरण कराकर सीधे स्वर्ग पहुँचाती हैं, यह आपकी असीम कृपा है ।

॥ श्लोक १७ ॥

यदि आप चाहें तो समस्त दैत्य समुदाय को केवल अपनी दृष्टि डालकर ही भस्म कर सकती हैं किन्तु आप शस्त्रों के द्वारा ही उनको नष्ट करना उपयुक्त मानती हैं, क्योंकि आप उदार हृदया हैं अतः आप चाहती हैं कि वे दैत्य लोग आपके शस्त्रों के प्रहार से पवित्र होकर श्रेष्ठ लोकों की प्राप्ति करें ॥ श्लोक १८ ॥

By these slain foes the world attains
to happiness; thus let these
Forsooth practise sin so as to descend to
hell for long !
Meeting death in battle let them proceed
to heaven—
Thinking thus, thou dost assuredly destroy
the enemies, O goddess. 17.

Having indeed seen them, why dost thou
not, O lady, reduce to ashes,
All the Asuras, since thou directest thy
weapons against the foes ?
Let even enemies, purified by dying in
arms, attain in sooth to the bright worlds—
Such is thy most kindly intention towards
even them. 18.

खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् ।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड–
योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥

॥ मन्त्र २०–श्लोक १६ ॥

दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।
वीर्यं च हन्तृहृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥

॥ मन्त्र २१–श्लोक २० ॥

देबि ! आपके पवित्र खड्ग के प्रभापुंज के प्रकाश से तथा उग्र त्रिशूल की धार की कांति की चकाचौंध से दैत्य लोगों ने अपने नेत्रों की ज्योति इसीलिए नहीं खोयी क्योंकि वे चन्द्रमा के समान आपके सुन्दर किरणों से युक्त मुखचन्द्र का दर्शन कर रहे थे ॥ श्लोक १९ ॥

भगवति ! आपका अद्भुत चरित्र दुष्टात्माओं के दुष्कर्मों को नष्ट करने वाला है तथा आपका अतुलनीय स्वरूप अचिन्त्य है अर्थात् वह चिन्तन से परे है। आपका यह शौय तथा बल उन भयंकर असुरों का ही संहार करने वाला है जिन्होंने किसी काल विशेष में देवताओं को पराजित कर दिया था। आप अपने बैरियों पर सदा ही दयाल रही हैं ॥ श्लोक २० ॥

And though, neither by the sharp flashes of abundant light from thy scymitar,
Nor by the copious lustre of thy spear-point, the eyes of the Asuras,
Were destroyed; yet, as they gazed upon thy countenance
Which bore a portion of the radiant moon, this very thing happened. 19.

Thy disposition, O goddess, subdues the conduct of men of evil conduct;
And this thy form surpasses thought and rivalry by others;
And thy valour vanquishes those who have robbed the gods of their prowess;
Thou hast as it were manifested pity thus even on enemies. 20.

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र ।
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक २१ ॥

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्द्धनि तेऽपि हत्वा ।
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥

॥ मन्त्र २३-श्लोक २२ ॥

आपके इस अद्भुत बल की तुलना नहीं की जा सकती और आपका मनोहारी स्वरूप जो शत्रुओं को भयभीत कर देता है वह संसार में दुर्लभ है। आपके हृदय में सदैव दयालुता रहती है किन्तु युद्ध क्षेत्र में निष्ठुरता। ये गुण तीनों लोकों में केवल आप में ही विद्यमान हैं, अन्य किसी में नहीं।

॥ श्लोक २१ ॥

भगवति ! आपने शत्रुओं का संहार कर इस सम्पूर्ण त्रिलोकी को बचाया है तथा आपने समस्त दैत्यों को युद्ध क्षेत्र में प्राणहीन करके स्वर्गलोक में पहुँचाया है। इस प्रकार भयंकर उन्मत्त दैत्यों से भयभीत हम लोगों को आपने भयमुक्त किया है। यह आपकी असीम अनुकम्पा है। हम देवगण आपको प्रणाम करते हैं॥ श्लोक २२ ॥

To what may this thy prowess be compared ?
And whereto thy form most charming,
which strikes fear among foes ?
Compassion in mind and relentlessness in
battle are seen
In thee, O goddess, who bestowest boons
even on the three worlds. 21.

Through the destruction of the foes, these
three worlds entire,
Have been saved by thee. Having slain
them in the battle-front
Thou hast led even those hosts of foes to
heaven, and dispelled the fear.
Which beset us from the frenzied foes of
the gods. Reverence to thee ! 22.

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २३ ॥

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक २४ ॥

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यन्तघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २५ ॥

खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २६ ॥

देवि ! आप त्रिशूल से हमारी रक्षा करो तथा हे अम्बिके ! आप अपने खड्ग से हमारी रक्षा करो और घण्टे की ध्वनि एवं धनुष की टंकार से भी आप हमारी रक्षा करो ॥ श्लोक २३ ॥

पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण इन तीनों ही दिशाओं में सभी प्रकार के भयों से हे चण्डिके ! आप हमारी रक्षा करें तथा हे ईश्वरि ! आप अपने त्रिशूल को घुमाते हुए उत्तर दिशा में हमारी रक्षा करें ॥ श्लोक २४ ॥

तीनों लोकों में वे जीवात्माएं जो सुन्दर तथा भयंकर रूप धारण करके विचरण करती हैं उनसे भी आप हम लोगों की तथा इस संसार की रक्षा करें ॥ श्लोक २५ ॥

हे जगदम्बिके ! खड्ग, शूल एवं गदा आदि विभिन्न अस्त्रों को आप अपने कर-पल्लवों में सदा धारण किये रहती हैं अतः आप उनके द्वारा हमारी सब प्रकार से रक्षा करें ॥ श्लोक २६ ॥

With thy spear protect us, O goddess !
Protect us with thy sword also, O Ambikā !
By the clanging of thy bell protect us,
And by the twanging of the thong
of thy bow ! 23.

In the east guard us, and in the west;
O Caṇḍikā, guard us in the south
By the brandishing of thy spear,
And also in the north, O goddess ! 24.

Whatever gentle forms of thee wander about
in the three worlds,
And whatever exceedingly terrible forms
wander, by means of them guard us
and the earth ! 25.

Thy sword and spear and club, and what-
ever other weapons, O Ambikā,
Rest in thy pliant hand, with them guard
us on every side ! 26.

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र २८ ॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥

॥ मन्त्र २९—श्लोक २७ ॥

भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता ।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान्प्रणतान्सुरान् ॥

॥ मन्त्र ३०—श्लोक २८ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र ३१ ॥

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ।

॥ मन्त्र ३२ ॥

ऋषि ने कहा—इस तरह देवगण ने भगवती जगदम्बिका की स्तुति की तथा पवित्र नन्दन-वन के सुन्दर पुष्पों तथा चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्यों से उनकी अर्चना की ॥ श्लोक २७ ॥

देवताओं ने भक्ति भाव से सभी प्रकार की दिव्य सुगन्धियां देवी को अर्पित कीं, तब देवी दुर्गा ने प्रसन्नता पूर्वक प्रणाम करते हुए देवों से कहा—॥ श्लोक २८ ॥

हे देवो ! आप लोग अपना अभीष्ट वर माँगो ।

The ṛishi said :

Thus was she, the Upholder of the worlds, hymned by the gods, and they paid honour to her with celestial flowers that blossomed in Nandana, and with perfumes and unguents. 27.

Moreover all the thirty gods in faith censed her with heavenly incenses. Benignly sweet in countenance she spoke to all the prostrate gods. 28.

देवा ऊचुः

॥ मन्त्र ३३ ॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ।

॥ मन्त्र ३४—श्लोक २९ ॥

यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ।
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि ॥

॥ मन्त्र ३५–श्लोक ३० ॥

संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥

॥ मन्त्र ३६–श्लोक ३१ ॥

The goddess said :

Choose, ye thirty all ! whatever ye desire of me, for I grant it with pleasure, being highly honoured by these hymns. 28.

The gods said :

Thou, O adorable lady, hast accomplished all, nought remains undone, in that this Asura Mahisha, our foe has been slain. 29.

Yet if thou must grant us a boon, O goddess great ! whenever we call thee, call thee to mind, do thou away with our direst calamities ! 30–31.

देवताओं ने कहा—हे भगवति ! आपने हमारी सभी आकांक्षाओं को पूर्ण कर दिया है, अब हमारी कोई भी इच्छा शेष नहीं है ॥ श्लोक २९ ॥

यद्यपि हमारा परम शत्रु महिषासुर आपके द्वारा मारा गया है, तथापि यदि आप मह पर और अधिक कृपा कर कोई वरदान देना चाहती हैं तो आप हमें यही वरदान दें कि हम जब कभी भी आपका स्मरण करें आप हमें अपना दिव्य दर्शन देकर हमारी कठिन विपत्तियों को दूर करें ।

॥ श्लोक ३०–३१ ॥

तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसंपदाम् ।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ।

॥ मन्त्र ३७-श्लोक ३२ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ३८ ॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथात्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥

॥ मन्त्र ३९-श्लोक ३३ ॥

इत्येतत्कथितं भूप संभूता सा यथा पुरा ।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥

॥ मन्त्र ४०-श्लोक ३४ ॥

हे अम्बिके ! इसके अतिरिक्त आप हम पर यह भी कृपा करें कि जो कोई भी इन स्तुतियों से आपकी स्तुति करे उसे आप सुख समृद्धि प्रदान करें तथा स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति आदि की वृद्धि हेतु सदैव हम पर अपनी प्रसन्नता बनाए रखें ॥ श्लोक ३२ ॥

ऋषि ने कहा—हे राजन् ! इस प्रकार स्तुति करके जब देवताओं ने अपने तथा सम्पूर्ण विश्व के कल्याण के लिए भगवती, भद्रकाली को प्रसन्न किया तब वे 'तथास्तु' कहकर तुरन्त ही अन्तर्धान हो गईं । ॥ श्लोक ३३ ॥

हे राजन् ! पूर्व समय में तीनों लोकों का कल्याण करने वाली भगवती जगदम्बिका जिस प्रकार देवताओं के शरीरों से प्रकट हुईं वह कथा मैंने तुम्हें सुना दी है ॥ श्लोक ३४ ॥

And whatever mortal shall praise thee with these hymns, O lady of spotless countenance, to prosper him in wealth and wife and other blessings by means of riches, success and power do thou incline always, O Ambikā, who art propitious to us ! 32.

The ṛishi said :

Being thus propitiated by the gods for the good of the world and on their own behalf, "Be it so !" said she, Bhadrakālī; and vanished from their sight, O king ! 33.

Thus I have narrated this, O king, how the goddess came into being of yore out of the gods' bodies, she who desires the good of all the three worlds. 34.

पुनश्च गौरी देहासा समुद्भूता यथाभवत् ।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः ॥

॥ मन्त्र ४१-श्लोक ३५ ॥

रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ।
तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्कथयामि ते ॥

॥ मन्त्र ४२-श्लोक ३६ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥

पुनः देवताओं का कल्याण करने वाली भगवती, तथा दुष्ट दैत्यों शुम्भ-निशुम्भ का वध करके त्रिलोकी की रक्षा करने हेतु जिस प्रकार गौरी देवी के शरीर से प्रकट हुई वह कथा यथावत् सुना रहा हूं ।

॥ श्लोक ३५–३६ ॥

मार्कण्डेयपुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवी-माहात्म्य में शक्रादि-स्तुति नामक चतुर्थ अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

And again she came into existence having the body of Gaurī, just as she did before, in order to slay the wicked Daityas and Śumbha and Niśumbha and to preserve the worlds, as benefactress of the gods. Hearken then to what I have declared to thee. I have truly told it to thee. 35–36.

The end of the Gods' prayer to Caṇḍikā

अथाध्यायनवकात्मकमुत्तरचरित्रमारभ्यते

पञ्चमोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः ।
त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात् ॥

॥ मन्त्र २–श्लोक १ ॥

पंचम अध्याय

देवी दूत संवाद

शुम्भ और निशुम्भ ने देवताओं को पराजित कर स्वर्ग से निकाल दिया। देवताओं ने हिमायल जाकर चण्डिका का आह्वान किया। पार्वती की देह से चण्डिका प्रकट हुईं। शुम्भ और निशुम्भ के दूतों ने देवी के सौन्दर्य की शुम्भ से प्रशंसा की। शुम्भ ने दूत भेज कर देवी को विवाह का आमन्त्रण दिया। देवी ने कहा कि उनका संकल्प है कि वे उससे विवाह नही करेंगी जो उन्हें युद्ध में हरा न सके।

ऋषि ने कहा—प्राचीन समय में शुम्भ और निशुम्भ नाम के महादैत्यों ने अपने शौर्य एवं पराक्रम के अभिमान में शचीपति इन्द्र को तीनों लोकों के राज्य तथा यज्ञ भाग से वंचित कर उसे अपने अधिकार में कर लिया। ॥ श्लोक १ ॥

The goddess' conversation with the Asura's messenger.

The Asuras Śumbha aud Niśumbha conquered the gods and drove them, from heaven.—The gods invoked Çaṇḍikā at Himāvat in a hymn, appealing to her by all her attributes to help them—Pārvatī came there and Çaṇḍikā sprang, forth fram her body.—The servants of Śumbha and Niśumbha saw her and extolled her perfect beauty to Śumbha.—He sent a messenger to invite her to marry him.—She explained that by a vow she could marry no one who did not conquer her in fight.

The ṛishi said :

Of yore the Asuras Śumbha and Niśumbha trusting in their pride and strength, robbed Śaçi's lord of the three worlds and of his portions of the sacrifices. 1.

तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम् ।
कौवेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च ।
ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः ।
महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ४ ॥

तयास्माकं वरो दत्तो यथापत्सु स्मृताखिलाः ।
भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात्परमापदः ॥

॥ मन्त्र ६—श्लोक ५ ॥

इसके अतिरिक्त ये दोनों ही दत्य सूर्य, चन्द्र, कुवेर, यम तथा वरुण आदि देवताओं के अधिकारों पर भी अपना स्वामित्व स्थापित कर उनका उपयोग करने लग गये ॥ श्लोक २ ॥

They both usurped likewise the sun's dignity and the moon's dominion, and Kuvera's and Yama's and Varuṇa's. 2.

वायुदेव तथा अग्निदेव का कार्यक्षेत्र भी उनका अपना हो गया। इस तरह उन दोनों महान् असुरों ने सभी देवों को अपमानित, राज्यच्युत तथा पराजित कर स्वर्ग लोक से निष्कासित कर दिया। ॥ श्लोक ३ ॥

And they both exercised Vāyu's authority and Agni's sphere of action. Thereby the gods were scattered, deprived of their sovereignties and put to rout. 3.

उन दोनों महाअसुरों द्वारा पराजित तथा अधिकार विहीन देवताओं ने भगवती अपराजिता की वंदना की ॥ श्लोक ४ ॥

The thirty gods, bereft of their dominion and set at nought by those two great Asuras, all recall to mind that never-vanquished goddess : 4.

पूर्व में जगदम्बा ने हमें वर दिया था कि संकट के समय मेरा स्मरण करने मात्र से मैं सभी प्रकार के संकटों का तत्क्षण ही नाश कर दूंगी। ॥ श्लोक ५ ॥

Thou didst grant us the boon, 'As ye when in calamities shall call me to mind, that very moment will I put an end to all your direst calamities.' 5.

इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् ।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ॥

॥ मन्त्र ७—श्लोक ६ ॥

देवा ऊचुः

॥ मन्त्र ८ ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥

॥ मन्त्र ९—श्लोक ७ ॥

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमोनमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥

॥ मन्त्र १०-श्लोक ८ ॥

इस प्रकार यह स्मरण करके देवता लोग पर्वतराज हिमालय के पास गए और वहाँ उन्होंने भगवती विष्णुमाया का स्तवन किया ॥ श्लोक ६ ॥

देवताओं ने कहा—हे कल्याणकारिणि देवि ! आपको हम प्रणाम करते हैं। महादेवी शिवा को हमारा सदैव प्रणाम स्वीकार हो। हम नित्य प्रकृति एवं भद्रा को प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक ७ ॥

भगवती रौद्रा एवं नित्या, गौरी और धात्री को भी प्रणाम करते हैं। चन्द्ररूपिणी भगवती ज्योत्स्ना और सुखा को प्रणाम करते हैं।
॥ श्लोक ८ ॥

Making this resolve the gods went to Himāvat, lord among mountains, and there raised their hymn to the goddess, who is Vishṇu's illusive power. 6.

The gods said :

Reverence to the goddess, to the great goddess !
To her who is auspicious reverence perpetually !
Reverence to Prakṛiti the good !
Submissive we fall prostrate before her ! 7.

Reverence to her who is terrible, to her who is constant !
To Gauri, to Dhātrī reverence, yea reverence !
And to the Moon-light, to her who has the moon's form,
To her who is happy, reverence continually !
8.

कल्याण्यै प्रणता वृद्धचै सिद्धचै कुर्मो नमोनमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमोनमः ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक ९ ॥

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥

॥ मन्त्र १२–श्लोक १० ॥

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमोनमः ।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र १३–श्लोक ११ ॥

सभी प्रकार के कल्याण करने वाली, भगवती कल्याणी को, धन-धान्य एवं सुखों की वृद्धि करने वाली वृद्धि को तथा सभी सिद्धियों को प्रदान करने वाली सिद्धि को हम प्रणाम करते हैं। तथा नैर्ऋति, राजलक्ष्मी और शर्वाणी स्वरूप में अवस्थित हे अम्बिके ! हम आपको बारम्बार प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक ९ ॥

भगवती दुर्गा, भीषण संकटों से उद्धार करने वाली देवी दुर्गपारा, सारभूता, तथा जो सभी कार्यों की कारण हैं, उन सर्वकारिणी को हम प्रणाम करते हैं। ख्याति तथा कृष्णा एवं भगवती धूम्रा को भी हम निरन्तर प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक १० ॥

अति सौम्या, तथा अति रौद्ररूपवाली रौद्ररूपा को हम प्रणाम करते हैं। जो इस चराचर विश्व का आधार हैं उन कृति देवी को हम प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक ११ ॥

Falling prostrate, to her who is propitious, to Prosperity,
To Perfection let us pay reverence, yea reverence !
To Nirṛiti, to the goddess of Good-Fortune of kings,
To thee, Sarvāṇī, reverence, yea reverence ! 9.

To Durgā, to her who is a further shore difficult to be reached,
To her who is essential, to her who works all things,
And to Fame also, to her who is blue-black,
To her who is smoke-dark reverence continually ! 10.

Before her who is at once most gentle and most harsh,
We fall prostrate; to her reverence, yea reverence !

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै(१४) नमस्तस्यै(१५) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र १६-श्लोक १२ ।।

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।
नमस्तस्यै(१७) नमस्तस्यै(१८) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र १९-श्लोक १३ ।।

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(२०) नमस्तस्यै(२१) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र २२-श्लोक १४ ।।

भगवती का वह स्वरूप जो विश्व में विष्णु-माया के नाम से विख्यात हैं, उनको हम कायिक, वाचिक एवं मानसिक प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक १२ ॥

जो देवी प्राणियों में चेतना के रूप में अवस्थित हैं उनको हम कायिक, वाचिक एवं मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक १३ ॥

जो भगवती प्राणियों में बुद्धितत्त्व के रूप में विद्यमान हैं उनको हम कायिक, वाचिक एवं मानसिक प्रणाम करते हैं॥ श्लोक १४ ॥

Reverence to her who is the foundation of the world !
To the goddess who is Action reverence, yea reverence ! 11.

To the goddess who among all created things
Is called Vishṇu's illusive power !
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence ! 12.

To the goddess who among all created beings
Bears the name Consciousness,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence ! 13.

To the goddess who among all created beings,
Stands firm with the form of Intellect,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence yea reverence ! 14.

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(२३) नमस्तस्यै(२४) नमस्तस्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक १५ ॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(२६) नमस्तस्यै(२७) नमस्तस्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक १६ ॥

या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(२९) नमस्तस्यै(३०) नमस्तस्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र ३१-श्लोक १७ ॥

समस्त प्राणियों में निद्रा के रूप में रहने वाली निद्रारूपिणी देवी को हम कायिक, वाचिक, तथा मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक १५ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Sleep,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
15.

जो प्राणियों में क्षुधा जाग्रत करती हैं उनको हम कायिक, वाचिक और मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक १६ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Hunger,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence.
16.

समस्तप्राणी जिसके प्रतिबिम्ब रूप हैं उन छाया रूपिणी देवी को हम कायिक, वाचिक, तथा मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक १७ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Shadow,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
17.

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(३२) नमस्तस्यै(३३) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र ३४-श्लोक १८ ।।

या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(३५) नमस्तस्यै(३६) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र ३७-श्लोक १९ ।।

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।।
नमस्तस्यै(३८) नमस्तस्यै(३९) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र ४०-श्लोक २० ।।

जो भगवती प्राणिमात्र की शक्तियों का स्रोत हैं उन देवी को हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं॥ श्लोक १८ ॥

देवी का जो स्वरूप प्राणिमात्र में उपभोग की अभिलाषा उत्पन्न करता है, उस तृष्णा रूप को हम कायिक, वाचिक और मानसिक प्रणाम करते हैं॥ १९ ॥

क्षान्तिरूपा देवी जो समस्त प्राणियों में क्षमा का भाव उत्पन्न करती हैं। उन्हें हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक २० ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Energy,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
18.

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Thirst,
Reverence to her, yea reverence to her!
Reverence to her, reverence, yea reverence !
19.

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Patience,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
20.

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(४१) नमस्तस्यै(४२) नमस्तस्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र ४३-श्लोक २१ ॥

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(४४) नमस्तस्यै(४५) नमस्तस्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र ४६-श्लोक २२ ॥

या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(४७) नमस्तस्यै(४८) नमस्तस्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र ४९-श्लोक २३ ॥

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(५०) नमस्तस्यै(५१) नमस्तस्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र ५२-श्लोक २४ ॥

जातिरूप में अवस्थित देवी जो जातिभेद के आधार पर प्राणियों का वर्गीकरण करती हैं उनको हम कायिक, वाचिक एवं मानसिक प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक २१ ॥

भगवती लज्जा देवी जो प्राणियों में लज्जा का भाव उत्पन्न करने वाली हैं उनको हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक २२ ॥

शान्तिभाव का उदय कर शान्ति स्थापित करने वाली शान्तिस्वरूपा देवी को हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक २३ ॥

जो देवी सब प्राणियों में श्रद्धा के रूप में विद्यमान रहती हैं उनको हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं॥ श्लोक २४ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Speciality,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
21.

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Modesty,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
22.

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Peaceableness,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
23.

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Faith,
Reverence to her, yea, reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
24.

या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(५३) नमस्तस्यै(५४) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र ५५-श्लोक २५ ।।

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(५६) नमस्तस्यै(५७) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र ५८-श्लोक २६ ।।

या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(५९) नमस्तस्यै(६०) नमस्तस्यै नमोनमः ।।

।। मन्त्र ६१-श्लोक २७ ।।

भगवती कान्तिरूपिणी जो प्राणियों के उज्वल रूप तथा उनकी शोभा बढ़ाने वाली हैं उनको हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक २५ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Loveliness
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
25.

देवी का जो स्वरूप प्राणिमात्र के लिए लक्ष्मी रूप में स्थित है वह कायिक वाचिक, मानसिक तीनों ही प्रणाम स्वीकार करें॥ श्लोक २६ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Good-Fortune,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
26.

जो भगवती विभिन्नरूपों में संसार की आजीविका का आधार हैं, उनको हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं।

॥ श्लोक २७ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Activity,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
27.

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(६२) नमस्तस्यै(६३) नमस्तस्यै नमोनमः ।।
॥ मन्त्र ६४-श्लोक २५ ॥

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(६५) नमस्तस्यै(६६) नमस्तस्यै नमोनमः ।।
॥ मन्त्र ६७-श्लोक २६ ॥

या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(६८) नमस्तस्यै(६९) नमस्तस्यै नमोनमः ।।
॥ मन्त्र ७०-श्लोक ३० ॥

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(७१) नमस्तस्यै(७२) नमस्तस्यै नमोनमः ।।
॥ मन्त्र ७३-श्लोक ३१ ॥

जो देवी स्मरण शक्ति के रूप में समस्त प्राणिजगत् में व्याप्त हैं, उनको हम कायिक,वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक २८ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Memory,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
28.

जो प्राणियों में दया का भाव जाग्रत करती हैं, उनको हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक २९ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Mercy,
Reverence to her, yea reverence to her
Reverence to her, reverence, yea reverence !
29.

जो प्राणियों की इच्छाओं को सन्तुष्ट करती हैं, उन तुष्टिरूपा देवी को कायिक, वाचिक तथा मानसिक तीनों प्रणाम स्वीकार हों ॥ श्लोक ३० ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Contentment,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
30.

जो देवी प्राणिमात्र की जननी हैं उन जगज्जननी मातृरूपा को हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक ३१ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Mother,

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै(७४) नमस्तस्यै(७५) नमस्तस्यैन मोनमः ॥

॥ मन्त्र ७६-श्लोक ३२ ॥

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमोनमः ॥

॥ मन्त्र ७७-श्लोक ३३ ॥

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै(७८) नमस्तस्यै(७९) नमस्तस्यैन मोनमः ॥

॥ मन्त्र ८०-श्लोक ३४ ॥

Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
31.

जो देवी सांसारिक प्राणियों में भ्रान्ति का कारण हैं, उनको हम कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक ३२ ॥

To the goddess who among all created beings
Stands firm with the form of Error,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
32.

जो देवी समस्त प्राणियों की इन्द्रियों की अधिष्ठात्री हैं तथा निरन्तर उनमें अवस्थित रहती हैं उन व्याप्तिदेवी को हम बारम्बार प्रणाम करते हैं ॥ श्लोक ३३ ॥

To her who both governs the organs of sense
Of created beings, and rules among all
Created beings perpetually,—to her
The goddess of Pervasiveness reverence, yea reverence ! 33.

चैतन्यस्वरूपा भगवती जो अखिल विश्व में व्यापक रूप में अवस्थित हैं, उनको कायिक, वाचिक तथा मानसिक प्रणाम स्वीकार हो ।
॥ श्लोक ३४ ॥

To her who exists pervading this entire
World with the form of Thinking Mind,
Reverence to her, yea reverence to her !
Reverence to her, reverence, yea reverence !
34.

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रया-
त्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥

॥ मन्त्र ८१-श्लोक ३५ ॥

या सांप्रतं चोद्धतदैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्त्तिभिः ॥

॥ मन्त्र ८२-श्लोक ३६ ॥

देवताओं ने प्राचीन काल में अपने मनोरथ की प्राप्ति हेतु जिस भगवती की वन्दना की तथा देवताओं के राजा इन्द्र ने भी लम्बे समय तक जिसका अर्चन किया वह कल्याणकारिणी देवी ईश्वरी आपदाओं को दूर कर हमारा सदैव कल्याण करें ॥ श्लोक ३५ ॥

अपने बल के अहंकार से उन्नत दुष्ट दैत्यों द्वारा त्रस्त हम देवता लोग उन कल्याणस्वरूपा जगदम्बिका को प्रणाम करते हैं, जिनके स्मरण मात्र से भक्ति विनम्र पुरुष समस्त आपत्तियों से तत्काल छुटकारा पा जाते हैं ॥ श्लोक ३६ ॥

Praised by the gods afore-time because of eagerly-desired protection,
And waited upon by the lord of the gods many days,
May she, the goddess, the origin of bright-ness, accomplish for us
Bright things, yea good things, and ward off calamities ! 35.

And she, who is both reverenced as queen by us gods,
Who are tormented now by the arrogant Daityas,
And whom we called to mind as we bow our bodies in faith,
She this very moment destroys all our calamities ! 36.

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ८३ ॥

एवं स्तवादियुक्तानां देवानां तत्र पार्वती ।
स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन ॥

॥ मन्त्र ८४-श्लोक ३७ ॥

साब्रवीत्तान्सुरान्सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का ।
शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताब्रवीच्छिवा ॥

॥ मन्त्र ८५-श्लोक ३८ ॥

स्तोत्रं ममैतत्क्रियते शुम्भदैत्यनिराकृतैः ।
देवैः समस्तैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥

॥ मन्त्र ८६-श्लोक ३९ ॥

ऋषि ने कहा—हे राजन् ! देवता लोग जिस समय यह स्तुति कर रहे थे उसी समय वहां भगवती पार्वती जाह्नवी नदी में स्नान करने आईं ।
॥ श्लोक ३७ ॥

देवताओं द्वारा की जा रही स्तुति को सुनकर सुन्दर भ्रकुटियों वाली भगवती पार्वती ने देवमण्डली से पूछा कि आप सब लोग किसकी स्तुति कर रहे हैं ? इस बीच, उन के शरीर कोश से प्रकट होकर देवी शिवा ने कहा ॥ श्लोक ३८ ॥

शुम्भ नामक दैत्य द्वारा अपमानित तथा निशुम्भ नामक दैत्य से युद्ध में पराजित ये सभी देवता एक होकर यहां मेरी ही स्तुति कर रहे हैं ।
॥ श्लोक ३९ ॥

The ṛishi said :

While the gods were thus engaged in offering hymns and other reverential acts, Pārvatī came there to bathe in the water of the Ganges, O prince. 37.

She, the beautiful-browed, said to those gods.—"whom do ye, lords, hymn here ?"

And springing forth from the treasure-house of her body the auspicious goddess spoke : 38.

"For me this hymn is uttered by the assembled gods, who have been set at nought by the Daitya Śumbha and routed in battle by Niśumbha. 39.

शरीरकोशाद्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका ।
कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥

॥ मन्त्र ८७-श्लोक ४० ॥

तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत्सापि पार्वती ।
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया ॥

॥ मन्त्र ८८-श्लोक ४१ ॥

ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम् ।
ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भनिशुम्भयोः ॥

॥ मन्त्र ८९-श्लोक ४२ ॥

ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा ।
काप्यास्ते स्त्री महाराज भासयन्ती हिमाचलम् ॥

॥ मन्त्र ९०-श्लोक ४३ ॥

देवी पार्वती के शरीर कोश से अम्बिका की उत्पत्ति हुई थी, अतः वे कौशिकी के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुईं ॥ श्लोक ४० ॥

देवी कौशिकी की उत्पत्ति के पश्चात् भगवती पार्वती का रंग श्याम वर्ण हो गया और वे हिमाचल पर निवास करने वाली कालिका देवी के नाम से प्रसिद्ध हुईं ॥ श्लोक ४१ ॥

तत्पश्चात् अम्बिका ने आश्चर्यचकित कर देने वाले सुन्दर स्वरूप को धारण कर लिया। अनन्तर शुम्भ-निशुम्भ के दूत चण्ड-मुण्ड वहां आ गए और उन्होंने अत्यन्त सुन्दरी के रूप में भगवती अम्बिका को देखा ॥ श्लोक ४२ ॥

वे दोनों (चण्ड तथा मुण्ड) शुम्भ के पास गए और उन्होंने कहा कि महाराज एक अत्यन्त सुन्दरी स्त्री अपने अद्भुत सौन्दर्य से हिमालय पर्वत को प्रकाशित कर रही है ॥ श्लोक ४३ ॥

Because Ambikā issued forth from the treasure-house of Pārvatī's body, she is therefore named in song as Kaushikī among all the worlds. 40.

Now after she had issued forth, the other also, even Pārvatī, became Kṛishṇā; she is celebrated as Kālikā; she fixed her abode on Mount Himāvat. 41.

Thereafter Caṇḍa, and Muṇḍa, the two servants of Śumbha and Niśumbha, saw Ambikā displaying her sublime and most captivating form. 42.

And both spake out unto Śumbha;—"What woman then, most surpassingly captivating, dwells here, illuminating Mount Himāvat, O great king? 43.

नैव तादृक् क्वचिद्रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् ।
ज्ञायतां काप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ॥

॥ मन्त्र ९१-श्लोक ४४ ॥

स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा ।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र तां भवान्द्रष्टुमर्हति ॥

॥ मन्त्र ९२-श्लोक ४५ ॥

यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो ।
त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे॥

॥ मन्त्र ९३-श्लोक ४६ ॥

ऐरावतः समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात् ।
पारिजाततरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा हयः ॥

॥ मन्त्र ९४-श्लोक ४७ ॥

ऐसा अद्भुत सुन्दर स्वरूप किसी ने कहीं भी नहीं देखा है। हे दैत्यों के अधिपति ! आप यह ज्ञात करें कि वह सुन्दरी स्त्री कौन है तथा उस देवी को आप अपने यहाँ ले आवें ॥ श्लोक ४४ ॥

"Such sublime beauty was never in sooth seen by anyone anywhere; let it be ascertained if she is any goddess, and let her be taken possession of, O lord of the Asuras. 44.

वह सुन्दरी समस्त स्त्रियों में रत्न-रूपिणी है, उसके शरीर का प्रत्येक अवयव अत्यन्त सुन्दर तथा प्रभापूर्ण है। अतः वह अपने शरीरावयवों की प्रभा से सम्पूर्ण दिशाओं को प्रकाशित कर रही है। हे दैत्यराज ! अभी वह हिमालय पर्वत पर ही बैठी है, आप उसको देख सकते हैं।
॥ श्लोक ४५ ॥

"A gem among women, surpassingly beautiful in body, illuminating the regions of the sky with her lustre, there she is then, O lord of the Daityas; deign, sir, to look at her. 45.

प्रभो ! तीनों लोकों का समस्त ऐश्वर्य हाथी, घोड़े तथा मणि आदि सभी रत्न आपके पास असीमित मात्रा में हैं ॥ श्लोक ४६ ॥

"Moreover, whatever gems, precious stones, elephants, horses and other valuable things indeed exist in the three worlds, O lord, all these display their splendour at this present time in thy house. 46.

हाथियों में सर्वश्रेष्ठ ऐरावत हाथी जो इन्द्र का हाथी है तथा पारिजात नामक कल्पवृक्ष जो सभी कामनाओं को पूर्ण करता है और

Airāvata, gem among elephants, has been captured from Purandara; and this Pārijāta tree and also the horse Uccaihśravas. 47.

विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेंऽङ्गने ।
रत्नभूतमिहानीतं यदासीद्वेधसोऽद्भुतम् ॥

॥ मन्त्र ९५-श्लोक ४८ ॥

निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात् ।
किंजल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लानपङ्कजाम् ॥

॥ मन्त्र ९६-श्लोक ४९ ॥

छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चनस्रावि तिष्ठति ।
तथायं स्यन्दनवरो यः पुरासीत्प्रजापतेः ॥

॥ मन्त्र ९७-श्लोक ५० ॥

उच्चैःश्रवा नामक घोड़ा, त्रिलोकी के ये सर्वश्रेष्ठ रत्न आपने इन्द्र से छीन ही लिए हैं।
॥ श्लोक ४७ ॥

इसी प्रकार यह सुन्दर विमान जो हंसों के द्वारा चलाया जाता है, वह भी अब आपके आंगन में शोभायमान हो रहा है। यह रत्नों से जटित अद्भुत विमान जो पहले ब्रह्मा के पास था वह भी अब आपके अधिकार में है ॥ श्लोक ४८ ॥

महापद्म नामक खजाना भी आपने कुवेर से छीन कर अपने अधिकार में ले लिया है तथा समुद्र ने आपके पराक्रम को देखकर किञ्जल्किनी नामक केसर से मण्डित माला आपको भेंट की है। जिसके कमल कभी नहीं कुम्हलाते ॥ श्लोक ४९ ॥

वरुण देवता का स्वर्ण वर्षा करने वाला छत्र तथा प्रजापति ब्रह्मा का श्रेष्ठ रथ भी अब आपके अधिकार में है ॥ श्लोक ५० ॥

"Here stands the heavenly chariot yoked with swans in thy court-yard; it has been brought here, the wonderful chariot composed of gems, which belonged to Brahmā. 48.

"Here is the Nidhi Mahāpadma, captured from the Lord of wealth. And the Ocean gave a garland made of filaments and of undying lotus flowers. 49.

"In thy house stands Varuṇa's umbrella, which streams with gold. And here is the choice chariot that belonged to Praja-pati formerly. 50.

मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश त्वया हृता ।
पाशः सलिलराजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ॥

॥ मन्त्र ९८-श्लोक ५१ ॥

निशुम्भस्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः ।
वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ॥

॥ मन्त्र ९९-श्लोक ५२ ॥

एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते ।
स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥

॥ मन्त्र १००-श्लोक ५३ ॥

मृत्युदायिनी उत्क्रान्तिदा नामक शक्ति भी यम से आपने छीन ली है तथा वरुण देवता का पाश और समुद्र में उत्पन्न होने वाले विभिन्न रत्न आपके भ्राता निशुम्भ के अधिकार में है तथा अग्निदेव ने स्वेच्छा से ही अपने दो पवित्र वस्त्र आपको दे दिये हैं ॥ श्लोक ५१–५२ ॥

इस प्रकार हे दैत्याधिपति ! सभी उत्कृष्ट रत्नों के आप स्वामी हैं, अतः स्त्रियों में जो रत्न-रूप देवी है उसे भी आप अपने अधिकार में क्यों नहीं कर लेते ॥ श्लोक ५३ ॥

"Thou, O lord, hast carried off Death's power which is named Utkrānti-dā. The noose of the Ocean-king is in thy brother's possession. And Niśumbha has every kind of gem which is produced in the sea. Agni also gave thee two garments which are purified by fire. 51–52.

"Thus, O lord of the Daityas, all gems have been captured by thee; why dost thou not seize this auspicious lady, this gem of womankind ?" 53.

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १०१ ॥

निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्डमुण्डयोः ।
प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ॥

॥ मन्त्र १०२-श्लोक ५४ ॥

इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम ।
यथा चाभ्येति संप्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ॥

॥ मन्त्र १०३-श्लोक ५५ ॥

स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने ।
सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ॥

॥ मन्त्र १०४-श्लोक ५६ ॥

ऋषि ने कहा—चण्ड और मुण्ड नामक दूतों की बातों को सुनकर शुम्भ ने महादैत्य सुग्रीव को दूत के रूप में अम्बिका के पास भेजा ॥ श्लोक ५४ ॥

निशुम्भ ने दूत से कहा कि तुम मेरे आदेशानुसार अमुक २ बातें उससे कहना और प्रयास करना कि वह प्रसन्न होकर शीघ्र ही यहाँ आ जावे।
॥ श्लोक ५५ ॥

शुम्भ द्वारा प्रेषित दूत हिमाचल के अत्यन्त सुन्दर प्रदेश में गया, जहाँ देवी उपस्थित थीं और वह मधुर वाणी में बोला ॥ श्लोक ५६ ॥

The ṛishi said :

Śumbha, on hearing this speech then from Caṇḍa and Muṇḍa sent the great Asura Sugrīva as messenger to the goddess, saying : 54.

"Go and address her thus and thus according to my words, and lightly conduct the matter so that she may come to me of her own good pleasure." 55.

He went to where the goddess sat on a very bright spot in the mountain and spoke gently with mellifluous voice. 56.

दूत उवाच

॥ मन्त्र १०५ ॥

देवि दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः ।
दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्सकाशमिहागतः ॥

॥ मन्त्र १०६–श्लोक ५७ ॥

अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु ।
निर्जिताखिलदैत्यारिः स यदाह श्रृणुष्व तत् ॥

॥ मन्त्र १०७–श्लोक ५८ ॥

मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः ।
यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ॥

॥ मन्त्र १०८–श्लोक ५९ ॥

दूत ने कहा—देवि ! दैत्यों के राजा शुम्भ तीनों लोकों के स्वामी हैं। मैं उनके द्वारा ही भेजा गया दूत हूं और आपके पास आया हूं ॥ श्लोक ५७ ॥

दैत्यराज शुम्भ की आज्ञा का पालन सभी देवता करते हैं, कोई भी उनकी आज्ञाओं का उल्लंघन नही करता। क्योंकि सभी देवता शुम्भ से पराजित हो गये हैं। अतः अपने लिए तुम उनका सन्देश सुनो ॥ श्लोक ५८ ॥

तीनों लोकों का सम्पूर्ण स्वामित्व मेरे अधिकार में है। सभी देवता लोग मेरे वशीभूत होकर कार्य करते हैं तथा मैं ही अलग-अलग देवताओं के सम्पूर्ण यज्ञांश का उपभोग करता हूं ॥ श्लोक ५९ ॥

The messenger said:

O goddess : Sumbha, lord of the Daityas, is supreme lord, over the three worlds. A messenger am I, sent by him; to thy presence here I have come. 57.

Hearken to what he has said, whose command is never resisted among all beings of divine origin, and who has vanquished every foe of the Daityas. 58.

"Mine are all the three worlds; obedient to my authority are the gods, I eat every protion of the sacrifices separately. 59.

त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः ।
तथैव गजरत्नानि हृत्वा देवेन्द्रवाहनम् ॥

॥ मन्त्र १०९-श्लोक ६० ॥

क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः ।
उच्चैःश्रवससंज्ञं तत्प्रणिपत्य समर्पितम् ॥

॥ मन्त्र ११०-श्लोक ६१ ॥

यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च ।
रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ॥

॥ मन्त्र १११-श्लोक ६२ ॥

स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि लोके मन्यामहे वयम् ।
सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम् ॥

॥ मन्त्र ११२-श्लोक ६३ ॥

तीनों लोकों के सम्पूर्ण श्रेष्ठ रत्न मेरे अधिकार में हैं। देवराज इन्द्र का वाहन ऐरावत जो हाथियों में सर्वश्रेष्ठ रत्न है, उसे मैंने ले लिया है ॥ श्लोक ६० ॥

क्षीर सागर का मन्थन करने के बाद उच्चैःश्रवा नामक जो सर्वश्रेष्ठ अश्वरत्न प्रकट हुआ था उसे भी देवताओं ने नतमस्तक होकर मुझे समर्पित कर दिया है ॥ श्लोक ६१ ॥

हे सुन्दरि ! इसके अतिरिक्त त्रिलोकी में अन्यान्य जो भी रत्नभूत द्रव्य देवताओं, गन्धर्वों तथा नागों के पास थे, वे सब अब मेरे ही पास हैं।
॥ श्लोक ६२ ॥

देवि ! आप संसार की स्त्रियों में सर्वश्रेष्ठ रत्न हैं, हम ऐसा मानते हैं, अतः तुम हमारे पास आ जाओ क्योंकि रत्नों के एकमात्र उपभोक्ता हमीं लोग हैं ॥ श्लोक ६३ ॥

"The choicest gems in the three worlds; are altogether under my power; and so are the finest elephants and the chariot of the lord of the gods, since I have captured them. 60.

"That gem among horses, named Uccaih-śravasa, which came forth at the churning of the sea of milk, was presented to me by the immortals who prostrated themselves before me. 61.

"And whatever other created things in the shape of gems existed among the gods, Gandharvas and Nāgas, they were presented even to me, O brilliant lady. 62.

"I esteem thee O goddess, to be the gem of womankind in the world; do thou, who art such, approach unto me, since I am an enjoyer of gems. 63.

मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरुविक्रमम् ।
भज त्वं चञ्चलापाङ्गि रत्नभूतासि वै यतः ॥

॥ मन्त्र ११३-श्लोक६४ ॥

परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् ।
एतद्बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज ॥

॥ मन्त्र ११४-श्लोक ६५ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ११५ ॥

इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तःस्मिता जगौ ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ॥

॥ मन्त्र ११६-श्लोक ६६ ॥

चंचल नेत्रों वाली सुन्दरि ! मेरे या मेरे पराक्रमी भ्राता निशुम्भ के आश्रय में आ जाओ, क्योंकि तुम रत्नरूपा हो ॥ श्लोक ६४ ॥

मेरे आश्रय में आ जाने पर तुम्हें अतुलनीय ऐश्वर्य की प्राप्ति होगी, यह विचार कर मेरे आश्रय में आ जाओ ॥ श्लोक ६५ ॥

ऋषि ने कहा—दूत के इस प्रकार कहने पर, भगवती दुर्गा जो संसार को धारण करने वाली और सारी सृष्टि की आधार हैं, गम्भीरता से मन ही मन मुस्करायीं और बोलीं ॥ श्लोक ६६ ॥

"Either to me, or to my younger brother Niśumbha of wide-reaching prowess, approach thou, O lady of quick side-glances, since thou art in truth a gem. 64.

"Supreme dominion beyond compare thou shalt gain by wedding me. Understand and consider this, and come unto wedlock with me". 65.

The ṛishi said :

Thus accosted the goddess, smiling deeply within herself, she, Durgā the adorable good, and who supports this world, sang this reply then. 66.

देव्युवाच

॥ मन्त्र ११७ ॥

सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किंचित्त्वयोदितम् ।
त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः ॥

॥ मन्त्र ११८–श्लोक ६७ ॥

किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्क्रियते कथम् ।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञा या कृता पुरा ॥

॥ मन्त्र ११९–श्लोक ६८ ॥

यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति ।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥

॥ मन्त्र १२०–श्लोक ६९ ॥

देवी ने कहा—तुम ने जो कुछ कहा है, वह सब सत्य है, झूंठ बिल्कुल नहीं है। शुम्भ तीनों लोकों का अधिपति है तथा निशुम्भ भी उसी के समान बलशाली है ॥ श्लोक ६७ ॥

परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा को असत्य कैसे होने दूं ? अपनी अल्प बुद्धि के कारण पूर्व में मैंने जो प्रतिज्ञा की थी वह सुनो ॥ श्लोक ६८ ॥

युद्ध में जो कोई भी मुझे पराजित कर मेरा घमण्ड नष्ट कर देगा तथा लोक में जो मेरे ही समान बलशाली होगा वही मेरा पति होगा।

॥ श्लोक ६९ ॥

The goddess said :

Truly hast thou spoken; nought hast thou uttered falsely herein. Sovereign of the three worlds is Sumbha, and like unto him is Niśumbha also. 67.

But how can that which has been promised concerning this myself be fulfilled falsely ? Hearken, what vow I made formerly by reason of my small understanding at that time. 68.

'He who vanquishes me in fight, who forces my pride from me, and who is my match in strength in the world, he shall be my husband.' 69.

तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः ।
मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ॥

॥ मन्त्र १२१-श्लोक ७० ॥

दूतउवाच

॥ मन्त्र १२२ ॥

अवलिप्तासि मैवं त्वं देवि ब्रूहि ममाग्रतः ।
त्रैलोक्ये कः पुमाँस्तिष्ठेदग्रे शुम्भनिशुम्भयोः ॥

॥ मन्त्र १२३-श्लोक ७१ ॥

अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे दैवा न वै युधि ।
तिष्ठन्ति संमुखे देवि किं पुनः स्त्री त्वमेकिका ॥

॥ मन्त्र १२४-श्लोक ७२ ॥

अतः शुम्भ या निशुम्भ दोनों में से कोई भी यहाँ आवे तथा युद्ध में मुझे पराजित कर शीघ्र ही मेरा पाणिग्रहण करे, फिर इसमें विलम्ब नहीं ॥ श्लोक ७० ॥

दूत ने कहा— देवि, अभिमान के कारण तुम इस प्रकार की बातें मेरे सामने मत करो। त्रिलोकी में ऐसा कौन पुरुष होगा जो शुम्भ-निशुम्भ के सामने टिक सके ॥ श्लोक ७१ ॥

अन्य असुरों के सामने जब सब देवता मिल कर भी युद्ध में नहीं टिक सके तब तुम अकेली स्त्री होकर कैसे मुकाबला कर पावोगी ॥ श्लोक ७२ ॥

Let Sumbha come here then, or Niśumbha the great Asura; let him vanquish me–what need of delay here ? and let him lightly take my hand in marriage ! 70.

The messenger said :

Proud art thou; Talk not so before me, O goddess; ! What male in the three worlds may stand front to front with Śumbha and Niśumbha ? 71.

All the gods verily stand not face to face with even the other Daityas in battle, O goddess; how much less canst thou so stand, a woman single–handed ! 72.

इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे ।
शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि संमुखम् ॥

॥ मन्त्र १२५-श्लोक ७३ ॥

सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः ।
केशाकर्षणनिर्धूतगौरवा मा गमिष्यसि ॥

॥ मन्त्र १२६-श्लोक ७४ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र १२७ ॥

एवमेतद्बली शुम्भो निशुम्भश्चातिवीर्यवान् ।
किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥

॥ मन्त्र १२८—श्लोक ७५ ॥

इन्द्र आदि समस्त देवता लोग संयुक्त रूप से भी जिसका मुकाबला नहीं कर सके, उस शुम्भ का मुकाबला तुम स्त्री होकर कैसे कर पाओगी ?

॥ श्लोक ७३ ॥

अतः तुम मेरे कहने से ही, शुम्भ-निशुम्भ के पास चलो और अपनी मर्यादा की रक्षा करो। अन्यथा जब वे तुम्हें केश पकड़ कर बलात् यहाँ से ले जावेंगे तो तुम अपमानित होकर और अपना गौरव खोकर जाओगी ॥ श्लोक ७४ ॥

देवी ने कहा—तुम्हारा कथन उपयुक्त है। शुम्भ तथा निशुम्भ दोनों ही महाबली तथा पराक्रमी हैं। किन्तु मैं विवश हूं क्योंकि बिना सोचे-विचारे ही मैंने पूर्व में ऐसी प्रतिज्ञा कर ली है ॥ श्लोक ७५ ॥

With Śumbha and those other Daityas, against whom Indra and all the other gods stood not in battle, how shalt thou, a woman venture face to face ? 73.

Do thou, being such, to whom I have in sooth delivered my message, go near unto Śumbha and Niśumbha ; let it not be that thou shalt go with thy dignity shattered in that thou wilt be dragged thither by thy hair ! 74.

The goddess said :

So strong as this is Śumbha ; and so exceedingly heroic is Niśumbha ! What can I do, since there stands my ill-considered promise of long ago ? 75.

स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः ।
तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु यत् ॥

॥ मन्त्र १२६-श्लोक ७६ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
देव्या दूतसंवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥

अब तुम यहां से जाओ तथा मैंने तुमसे जो-जो बातें कहीं हैं उनको दैत्यराज शुम्भ से आदरपूर्वक कहना इसके बाद उन्हें जो उचित लगेगा करेंगे।

॥ श्लोक ७६ ॥

इति श्रीमार्कण्डेय-पुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में देवी दूत संवाद नामक पञ्चम अध्याय सम्पूर्ण हुआ।

Go thou thyself; make known respectfully to the lord of the Asuras all this that I have said to thee, and let him do whatever is fitting. 76.

The end of goddess' conversation with the Asura's messenger.

षष्ठोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः ।
समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात् ॥

॥ मन्त्र २-श्लोक १ ॥

षष्ठ अध्याय

धूम्रलोचन वध

शुम्भ ने अपने सेनापति धूम्रलोचन और सेना को, देवी को बन्दी बनाने के लिए भेजा और देवी ने उन्हें नष्ट कर दिया। तब उसने चण्ड और मुण्ड को दूसरी सेना लेकर भेजा।

ऋषि ने कहा—देवी की यह बात सुन कर वह दूत क्रुद्ध हो उठा और उसने दैत्यराज शुम्भ के पास जाकर विस्तार से सारी बात बतलाई।

॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The slaying of Śumbha and Niśumbha's general Dhūmra-loçana.

Śumbha despatched his general Dhūmra-loçana *and an army to capture the goddess and she destroyed them. He then despatched* Caṇḍa *and* Muṇḍa *with another army.*

The ṛishi said :

The messenger, on hearing this speech from the goddess, was filled with indignation, and approaching related it fully to the Daitya king. 1.

तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः ।
सक्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम् ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः ।
तामानय बलाद्दुष्टां केशाकर्षणविह्वलाम् ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

तत्परित्राणदः कश्चिद् यदि वोत्तिष्ठते परः ।
स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ४ ॥

शुम्भ ने दूत के उस कथन को सुना और क्रुद्ध होकर दैत्यों के सेनापति धूम्रलोचन से कहा।

॥ श्लोक २ ॥

हे धूम्रलोचन! तुम शीघ्र ही अपनी सेना लेकर जाओ और केश पकड़कर घसीटने से विह्वल उस दुष्टा को बलपूर्वक यहां ले आओ ॥ श्लोक ३ ॥

उसको बचाने वाला यदि कोई सामने आये तो उसे अवश्य ही मार डालना वह देव, यक्ष या गन्धर्व ही क्यों न हो ॥ श्लोक ४ ॥

The Asura monarch then, after hearing that report from his messenger, was wroth and commanded Dhūmra-loçana, a chieftain of the Daityas. 2.

"Ho ! Dhūmra-loçana, haste thee together with thy army; fetch by force that shrew, who will be unnerved when dragged along by her hair. 3.

"Or if any man besides stands up to offer her deliverance, let him be slain, be he an Immortal, a Yaksha or a Gandharva forsooth." 4.

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ६ ॥

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः ।
वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ॥

॥ मन्त्र ७-श्लोक ५ ॥

स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचलसंस्थिताम् ।
जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः ॥

॥ मन्त्र ८-श्लोक ६ ॥

न चेत्प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति ।
ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षणविह्वलाम् ॥

॥ मन्त्र ९-श्लोक ७ ॥

ऋषि ने कहा—इसके बाद शुम्भ की आज्ञा पाकर धूम्रलोचन नामक वह दैत्य साठ हजार राक्षसों की सेना के साथ शीघ्र ही वहां से चल पड़ा।

॥ श्लोक ५ ॥

उसने हिमाचल पर निवास करने वाली देवी को वहाँ देखा और बड़े उच्च स्वर से बोला—"तुम शुम्भ-निशुम्भ के पास चली जाओ।

॥ श्लोक ६ ॥

"यदि तुम प्रसन्नता से मेरे मालिक के पास नहीं जावोगी तो मैं बलपूर्वक केशों को पकड़कर तुमको घसीटता हुआ ले चलूंगा" ॥ श्लोक ७ ॥

The ṛishi said :

Thereupon at his command the Daitya Dhūmra-loçana went forthwith quickly, accompanied by sixty thousand Asuras. 5.

On seeing the goddess stationed on the snowy mountain, he cried aloud to her there—"Come forward to the presence of Śumbha and Niśumbha. 6.

"If thou wilt not, lady, approach my lord with affection now, I will here take thee by force, who wilt be unnerved since thou shalt be dragged along by the hair !" 7.

देव्युवाच

॥ मन्त्र १० ॥

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान्बलसंवृतः ।
बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक ८ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १२ ॥

इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः ।
हूंकारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥

॥ मन्त्र १३—श्लोक ९ ॥

देवी बोली—दैत्यों के स्वामी ने तुम्हें भेजा है, तुम स्वयं बलशाली हो तथा तुम्हारे साथ सेना भी है, ऐसी स्थिति में यदि तुम मुझे जबरदस्ती ले चलोगे तो मैं तुम्हारा क्या कर सकती हूं।

॥ श्लोक ८ ॥

ऋषि ने कहा—देवी के ऐसा कहने पर धूम्र-लोचन उनकी ओर दौड़ा, तब अम्बिका ने हुंकार शब्द के उच्चारण से ही उसे भस्म कर दिया।

॥ श्लोक ९ ॥

The goddess said :

Sent by the king of the Daityas, mighty thyself, and accompanied by an army, thou dost thus take me by force—then what can I do unto thee ? 8.

The ṛishi said :

At this reply the Asura Dhūmra-loçana rushed towards her, then Ambikā with a mere roar reduced him to ashes. 9.

अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिकाम् ।
ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥

॥ मन्त्र १४—श्लोक १० ॥

ततो धुतसटः कोपात्कृत्वा नादं सुभैरवम् ।
पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक ११ ॥

कांश्चित्करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् ।
आक्रम्य चाधरेणान्यान्संजघान महासुरान् ॥

॥ मन्त्र १६—श्लोक १२ ॥

केषांचित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी ।
तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान्पृथक् ॥

॥ मन्त्र १७—श्लोक १३ ॥

इसके बाद क्रोध से परिपूर्ण राक्षसों की विशाल सेना और अम्बिका ने परस्पर तीक्ष्ण बाणों, शक्तियों, फरसों आदि की वर्षा करना प्रारम्भ कर दिया ॥ श्लोक १० ॥

And the great army of Asuras enraged poured on Ambikā a shower both of sharp arrows and of javelins and axes. 10.

भगवती जगदम्बा का वाहन सिंह क्रोध से उद्दीप्त होकर भयंकर गर्जना करते हुए अपनी ग्रीवा के केशों को आन्दोलित करता हुआ राक्षसों की सेना पर कूद पड़ा ॥ श्लोक ११ ॥

The lion that carried the goddess, shaking his mane in anger and uttering a most terrific roar, fell on the army of Asuras. 11.

देवी वाहन सिंह ने कुछ असुरों को अपने अगले पंजों के प्रहार से और अन्य दैत्यों को मुख से, कितनों को अपनी दाढ़ों से आक्रमण करके मार डाला ॥ श्लोक १२ ॥

He slaughtered some Asuras with a blow from his fore-paw, and others with his mouth, and others very great Asuras, by striking them with his hind foot. 12.

देवी वाहन सिंह ने अनेक असुरों के उदर को अपने नखों से फाड़ डाला और अनेकों के मस्तकों को अपने हाथों के प्रहार द्वारा धड़ से अलग कर दिया । ॥ श्लोक १३ ॥

The lion with his claws tore out the entrails of some, and struck their heads off with a cuff-like blow. 13.

विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे ।
पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुतकेसरः ॥

॥ मन्त्र १८—श्लोक १४ ॥

क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना ।
तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १५ ॥

श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम् ।
बलं च क्षयितं कृत्स्नं देवीकेसरिणा ततः ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १६ ॥

चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः ।
आज्ञापयामास च तौ चण्डमुण्डौ महासुरौ ॥

॥ मन्त्र २१-श्लोक १७ ॥

अनेकों के हाथ और सिर काट दिए और अपनी ग्रीवा के केशों को हिलाते हुए अन्य दैत्यों के उदरों को फाड़कर उनका रक्त पान कर लिया। महाबलिष्ठ एवं अत्यन्त क्रुद्ध देवी वाहन सिंह ने पल भर में राक्षसों की सम्पूर्ण सेना को नष्ट कर दिया ॥ श्लोक १४–१५ ॥

And he severed arms and heads from others, and shaking his mane drank the blood that flowed from the entrails of others. In a moment all that army was brought to destruction by the high-spirited lion, who bore the goddess and who was enraged exceedingly. 14–15.

शुम्भ ने जब यह सुना कि देवी ने धूम्रलोचन को मार दिया और उनके वाहन सिंह ने सम्पूर्ण सेना का विनाश कर दिया, तो वह क्रुद्ध हुआ और उसके ओष्ठ फड़फड़ाने लगे ॥ श्लोक १६–१७ ॥

When he heard that that Asura Dhūmra loçana was slain by the goddess, and all his army besides was destroyed by the goddess' lion, Śumbha, the lord of the Datiyas, fell into a rage and his lip quivered greatly, and he commanded the two mighty Asuras Çaṇḍa and Muṇḍa. 16–17.

हे चण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुलैः परिवारितौ ।
तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक १८ ॥

केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि ।
तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥

॥ मन्त्र २३-श्लोक १९ ॥

तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते ।
शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २० ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
शुम्भनिशुम्भसेनानी धूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥

शुम्भ ने चण्ड और मुण्ड नामक महाराक्षसों को आज्ञा दी कि हे चण्ड ! हे मुण्ड ! तुम दोनों बहुत बड़ी सेना लेकर जाओ और उस देवी को बाल पकड़ कर घसीट कर या बाँध कर शीघ्र यहाँ ले आओ । यदि उसको यहाँ लाने में सन्देह हो तो युद्ध क्षेत्र में समस्त अस्त्र-शस्त्रों और सारी असुर सेना के द्वारा प्रहार करके उसे मार डालो ।

॥ श्लोक १८-१९ ॥

उस दुष्टा अम्बिका तथा सिंह को मार कर और बाँध कर उनको अपने साथ लेकर जल्दी लौट आओ ॥ श्लोक २० ॥

मार्कण्डेय पुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत देवी माहात्म्य में धूम्रलोचन वध नामक षष्ठ अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

"Ho, Caṇḍa ! Ho, Muṇḍa ! take with you a multitude of troops and go there; and going there bring her here speedily, dragging her by her hair or binding her; if ye have a doubt of that, then let her be slain outright in fight by all the Asuras brandishing all their weapons. 18-19.

"When that shrew is slain and her lion striken down, seize her, Ambikā, bind her and bring her quickly !" 20.

The end of the slaying of Śumbha and Niśumbha's general Dhūmra-loçana.

सप्तमोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्डमुण्डपुरोगमाः ।
चतुरङ्गबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥

॥ मन्त्र २-श्लोक १ ॥

सप्तम अध्याय

चण्ड और मुण्ड का बध

देवी काली ने दूसरी असुर सेना का भी संहार कर दिया और सेनापति चण्ड और मुण्ड को मार दिया। चण्डिका ने काली को पुरस्कार स्वरूप चामुण्डा नाम प्रदान किया।

ऋषि ने कहा—शुम्भ की आज्ञा से चण्ड मुण्ड की अगुवाई में असुर लोगों ने चतुरंगिणी सेना सहित आयुधों से सुसज्जित होकर युद्ध के लिए प्रस्थान किया ॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The slaying of Caṇḍa and Muṇḍa.

The goddess Kālī *destroyed the second Asura army and also the generals* Çaṇḍa *and* Muṇḍa—Çaṇḍikā *gave* Kālī *as a reward the name* Çāmuṇḍā.

The ṛishi said :

Then at his command the Daityas, led by Çaṇḍa and Muṇḍa, and arrayed in the four-fold order of an army, marched with weapons uplifted. 1.

ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् ।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्रशृङ्गे महति काञ्चने ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः ।
आकृष्टचापासिधरास्तथान्ये तत्समीपगाः ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन्प्रति ।
कोपेन चास्या वदनं मसीवर्णमभूत्तदा ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ४ ॥

भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद् द्रुतम् ।
काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ५ ॥

असुरों ने पर्वतराज हिमालय के स्वर्णमय शिखर पर, सिंह के ऊपर बैठी हुई तथा मन्द-मन्द मुस्कराती हुई देवी को देखा ॥ श्लोक २ ॥

असुर लोग देवी को पकड़ने का प्रयास करने लगे। किसी ने धनुष खींच लिया और किसी ने तलवार तथा कुछ असुर देवी के समीप जा पहुँचे। ॥ श्लोक ३ ॥

अनन्तर अम्बिका को उन असुर शत्रुओं पर अत्यन्त क्रोध आया और क्रोध से उनका मुखमण्डल काले रंग का हो गया ॥ श्लोक ४ ॥

उनकी भौंहें तन गईं और हाथ में खड्ग तथा पाश लिए हुए ललाट से विकराल मुखवाली काली तुरन्त अवतरित हुईं ॥ श्लोक ५ ॥

Soon they saw the goddess slightly smiling, seated upon the lion, on a huge golden peak of the majestic mountain. 2.

On seeing her some of them made a strenuous effort to capture her, and others approached her holding their bows bent and their swords drawn. 3.

Thereat Ambikā uttered her wrath aloud against those foes, and her countenance then grew dark as ink in her wrath. 4.

Out from the surface of her forehead, which was rugged with frowns, issued suddenly Kālī of the terrible countenance. 5.

विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा ।
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा ॥

॥ मन्त्र ७—श्लोक ६ ॥

अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा ।
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा ॥

॥ मन्त्र ८—श्लोक ७ ॥

सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान् ।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥

॥ मन्त्र ९—श्लोक ८ ॥

पार्ष्णिग्राहाङ्कुशग्राहियोधघण्टासमन्वितान् ।
समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥

॥ मन्त्र १०—श्लोक ९ ॥

वे विचित्र खट्वांग (नर पन्जरी नामक आयुध विशेष) लिए हुए, नर मुण्डों की माला तथा चीते के चर्म का वस्त्र (व्याघ्र चर्म) धारण किये हुए थीं तथा अत्यन्त भयंकर लगने वाली और शुष्क देहमांस वाले अस्थिपंजर को धारण किये थीं। इसलिए उनकी आकृति अत्यन्त भयंकर लग रही थी ॥ श्लोक ६ ॥

Armed with a sword and noose, bearing a many-coloured skull-topped staff, decorated with a garland of skulls, clad in a tiger's skin, very appalling because of her emaciated flesh. 6.

उनकी मुखाकृति विशाल थी और लपलपाती हुई जिह्वा से वे अत्यन्त भयंकर दिखाई दे रही थीं। उनके नेत्र भीतर धंसे हुए और रक्त वर्ण के हो रहे थे ॥ श्लोक ७ ॥

Exceedingly wide of mouth lolling out her tongue terribly, having deep-sunk reddish eyes, and filling the regions of the sky with her roars. 7.

अम्बिका अपने भयंकर नाद से समस्त दिशाओं को गुंजित कर रही थीं तथा विशालकाय असुरों का संहार करती हुई दैत्य सेना पर बड़े वेग से आक्रमण कर दैत्यों को उदरस्थ करने लगीं।

॥ श्लोक ८ ॥

She fell upon the great Asuras impetuously, dealing slaughter among the host, and devoured that army of the gods' foes there. 8.

पृष्ठ भाग के रक्षकों, अग्रिम पंक्ति के अंकुश लिए हुए योद्धाओं तथा घण्टों समेत हाथियों के समूह को एक हाथ से पकड़ कर उन्होंने मुंह में प्रविष्ट कर लिया ॥ श्लोक ९ ॥

Taking up the elephants with one hand she flung them into her mouth, together with their rearmen and drivers and their warrior-riders and bells. 9.

तथैव योधं तुरगै रथं सारथिना सह ।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयत्यतिभैरवम् ॥

॥ मन्त्र ११-श्लोक १० ॥

एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् ।
पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥

॥ मन्त्र १२-श्लोक ११ ॥

तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथासुरैः ।
मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥

॥ मन्त्र १३-श्लोक १२ ॥

बलिनां तद्बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम् ।
ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्याँश्चाताडयत्तथा ॥

॥ मन्त्र १४-श्लोक १३ ॥

देवी ने सारथियों एवं अश्वों सहित रथों तथा उसके सिपाहियों को मुँह में डाल कर भयंकर रूप से चबा लिया ॥ श्लोक १० ॥

किसी असुर के केश खींच लिये, किसी की गर्दन मरोड़ दी तथा किसी को पैर से दबा कर अथवा वक्षस्थल की टक्कर देकर प्राणान्त कर दिया ॥ श्लोक ११ ॥

दैत्यों द्वारा छोड़े गए अस्त्र-शस्त्रों को देवी ने अपने मुख से पकड़ लिया और क्रोध से अपने दांतों से पीस दिया ॥ श्लोक १२ ॥

बलिष्ठ तथा दुरात्मा दैत्यों की सम्पूर्ण सेना का मर्दन कर डाला और भक्षण कर लिया, अन्य कुछ असुरों को मार कर खदेड़ दिया।
॥ श्लोक १३ ॥

Flinging likewise warrior with his horses, and chariot with its driver into her mouth, she ground them most frightfully with her teeth. 10.

She seized one by the hair, and another by the neck; and she kicked another with her foot, and crushed another against her breast. 11.

And she seized with her mouth the weapons and the great arms which those Asuras abandoned, and crunched them up with her teeth in her fury. 12.

She crushed all that host of mighty and high-spirited Asuras; and devoured some and battered orhers. 13.

असिना निहताः केचित् केचित्खट्वाङ्गताडिताः ।
जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक १४ ॥

क्षणेन तद्बलं सर्वमसुराणां निपातिम् ।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम् ॥

॥ मन्त्र १६-श्लोक १५ ॥

शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः ।
छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ॥

॥ मन्त्र १७-श्लोक १६ ॥

तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् ।
बभुर्यथार्कबिम्बानि सुबहूनि घनोदरम् ।

॥ मन्त्र १८-श्लोक १७ ॥

भगवती ने कुछ असुरों को खड्ग से मार दिया और कुछ को खट्वाङ्ग से आहत किया तथा कुछ को नुकीले दांतों से मार डाला।

॥ श्लोक १४ ॥

Some were slain with her sword, some were struck with her skull-topped staff, and other Asuras met their death being wounded with the edge of her teeth. 14.

इस प्रकार क्षण भर में देवी ने दैत्यों की समस्त सेना को युद्ध में मार दिया। इस दृश्य को देखकर चण्ड अत्यन्त भयंकर दिखाई पड़ने वाली काली की ओर दौड़ पड़ा ॥ श्लोक १५ ॥

Seeing all that host of Asuras laid low in a moment, Caṇḍa rushed against her, Kālī, who was exceedingly appalling. 15.

महाराक्षस मुण्ड ने अत्यन्त भयंकर बाणों की वर्षा कर तथा हजारों बार चक्र चलाकर भयानक नेत्र वाली देवी को ढक दिया।

॥ श्लोक १६ ॥

Muṇḍa the great Asura covered her, the terrible-eyed goddess, with very terrible showers af arrows and with discuses hurled in thousands. 16.

देवी के मुख में प्रवेश करते हुए वे असंख्य चक्र ऐसे प्रतीत होते थे मानों एक साथ बहुत से सूर्य-मण्डल बादलों के भीतर जा रहे हों।

॥ श्लोक १७ ॥

Those discuses seemed to be penetrating her countenance in multitudes, like as very many solar orbs might penetrate the body of a thunder-cloud. 17.

ततो जहासातिरुषा भीमं भैरवनादिनी ।
काली करालवक्त्रान्तर्दुर्दर्शदशनोज्ज्वला ॥

॥ मन्त्र १९–श्लोक १८ ॥

उत्थाय च महासिं हंदेवी चण्डमधावत ।
गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ॥

॥ मन्त्र २०—श्लोक १९ ॥

अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
तमप्यपातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ॥

॥ मन्त्र २१—श्लोक २० ॥

इसके बाद भयानक नाद करने वाली काली ने, जिसके विकराल मुख में डरावने दांतों की कांति आभासित हो रही थी, अत्यन्त क्रोधपूर्ण मुद्रा में भयंकर अट्टहास किया ॥ श्लोक १८ ॥

देवी विशाल खड्ग हाथ में लेकर क्रोध सूचक 'हं' शब्द का उच्चारण करती हुई चण्ड की ओर दौड़ीं और उसके केशों को पकड़कर खड्ग से उसका सिर काट दिया ॥ श्लोक १९ ॥

चण्ड को मृत्युदशा में देखकर मुण्ड भी देवी की ओर दौड़ा। देवी ने क्रोधित होकर उसको भी खड्ग से मार कर पृथ्वी पर गिरा दिया ।

॥ श्लोक २० ॥

Thereat Kālī, who was roaring frightfully, laughed terribly with excessive fury, showing the gleam of her unsightly teeth within her dreadful mouth. 18.

And the goddess, mounting upon her great lion, rushed at Caṇḍa, and seizing him by his hair struck off his head with her sword. 19.

And Muṇḍa also rushed at her when he saw Caṇḍa laid low; him also she felled to the ground, stricken with her scymitar in her fury. 20.

ततो जहासातिरुषा भीमं भैरवनादिनी ।
काली करालवक्त्रान्तर्दुर्दर्शदशनोज्ज्वला ॥

॥ मन्त्र १९–श्लोक १८ ॥

उत्थाय च महासिं हंदेवी चण्डमधावत ।
गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ॥

॥ मन्त्र २०—श्लोक १९ ॥

अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
तमप्यपातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ॥

॥ मन्त्र २१—श्लोक २० ॥

इसके बाद भयानक नाद करने वाली काली ने, जिसके विकराल मुख में डरावने दांतों की कांति आभासित हो रही थी, अत्यन्त क्रोधपूर्ण मुद्रा में भयंकर अट्टहास किया ॥ श्लोक १८ ॥

देवी विशाल खड्ग हाथ में लेकर क्रोध सूचक 'हं' शब्द का उच्चारण करती हुई चण्ड की ओर दौड़ीं और उसके केशों को पकड़कर खड्ग से उसका सिर काट दिया ॥ श्लोक १९ ॥

चण्ड को मृत्युदशा में देखकर मुण्ड भी देवी की ओर दौड़ा। देवी ने क्रोधित होकर उसको भी खड्ग से मार कर पृथ्वी पर गिरा दिया।
॥ श्लोक २० ॥

Thereat Kālī, who was roaring frightfully, laughed terribly with excessive fury, showing the gleam of her unsightly teeth within her dreadful mouth. 18.

And the goddess, mounting upon her great lion, rushed at Caṇḍa, and seizing him by his hair struck off his head with her sword. 19.

And Muṇḍa also rushed at her when he saw Caṇḍa laid low; him also she felled to the ground, stricken with her scymitar in her fury. 20.

हतशेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक २१ ॥

शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च ।
प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ॥

॥ मन्त्र २३-श्लोक २२ ॥

मया तवात्रोपहृतौ चण्डमुण्डौ महापशू ।
युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २३ ॥

महाबलशाली चण्ड और मुण्ड को मरा हुआ देखकर मृत्यु से बची हुई बाकी सेना भय से आतुर होकर चारों दिशाओं में भाग गयी ॥ श्लोक २१ ॥

इसके बाद काली चण्ड और मुण्ड का सिर अपने हाथ में लेकर चण्डिका के पास पहुँचीं तथा बड़े जोर से अट्टहास करते हुए कहा ॥ श्लोक २२ ॥

मैंने चण्ड और मुण्ड नामक इन दो महापशुओं की तुमको भेंट दी है, अब तुम स्वयं युद्ध के यज्ञ में शुम्भ और निशुम्भ का वध करोगी ॥ श्लोक २३ ॥

Then the army, so much as escaped unslain, seeing Caṇḍa laid low and most valiant Muṇḍa also, seized with panic fled in all directions. 21.

And Kālī, holding Çaṇḍa's head and Muṇḍa also, approached Çaṇḍikā and said her voice mingled with passionate loud laughter : 22.

"Here I have brought thee Çaṇḍa and Muṇḍa, two great beasts; thou thyelf shalt slay Śumbha and Niśumbha in the battle-saorifice." 23.

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र २५ ॥

तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्डमुण्डौ महासुरौ ।
उवाच कालीं कल्याणी ललितं चण्डिका वचः ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २४ ॥

यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता ।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २५ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
चण्डमुण्डवधोनाम सप्तमोऽध्याय ॥

ऋषि ने कहा—इसके बाद चण्ड और मुण्ड नामक, वहाँ लाये गए महान् राक्षसों को देखकर कल्याणी चण्डिका ने मधुर वाणी में काली से कहा। ॥ श्लोक २४ ॥

क्योंकि तुम स्वयं चण्ड और मुण्ड को लेकर मेरे पास उपस्थित हुई हो, अतः विश्व में चामुण्डा के नाम से तुम्हारी प्रसिद्धि होगी ॥ श्लोक २५ ॥

मार्कण्डेयपुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवी-माहात्म्य में चण्डमुण्ड-वध नामक सप्तम अध्याय सम्पूर्ण हुआ।

The ṛishi said :

Thereon, seeing those two great Asuras Caṇḍa and Muṇḍa brought to her, auspicious Caṇḍikā spoke to Kālī this witty speech : 24.

"Because thou hast seized both Caṇḍa and Muṇḍa and brought them, thou, O goddess, shalt therefore be famed in the world by the name Cāmuṇḍā !" 25.

The end of the slaying of Caṇḍa and Muṇḍa.

अष्टमोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते ।
बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥

॥ मन्त्र २–श्लोक १ ॥

अष्टम अध्याय

रक्तबीज का वध

शुम्भ ने अपनी समस्त सेनाओं को चण्डिका के विरुद्ध भेज दिया। देवी की सहायता के लिये सभी देवताओं की शक्तियों ने देह धारण की। चण्डिका ने शिव को शुम्भ के पास शान्ति की शर्तों के लिए भेजा। किन्तु असुर सेनाओं ने उन पर आक्रमण कर दिया और युद्ध आरम्भ हो गया। चण्डिका का महान दैत्य रक्तबीज के साथ युद्ध हुआ, जिसमें वह मारा गया।

ऋषि ने कहा—चण्ड और मुण्ड नामक असुरों के मार दिये जाने तथा अधिकांश सेना का विनाश हो जाने पर असुरों के स्वामी, प्रतापी शुम्भ का

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The slaying of Rakta-vīja.

Śumbha sent forth all his armies against Caṇḍikā— *To help her the Energies* (Śaktis) *of the gods took bodily shape*— Caṇḍika *despatched* Śiva *to offer terms of peace to* Śumbha, *but the Asura hosts attacked her and the battle began*— Caṇḍikā's *fight with the great Asura Rakta-vīja is described—He was killed.*

The ṛishi said

After both the Daitya Caṇḍa was slain and Muṇḍa was laid low, and many soldiers were destroyed, the lord of the Asuras,

ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान् ।
उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ॥

॥ मन्त्र ३–श्लोक २ ॥

अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः ।
कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः ॥

॥ मन्त्र ४–श्लोक ३ ॥

कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै ।
शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥

॥ मन्त्र ५–श्लोक ४ ॥

कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथासुराः ।
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ॥

॥ मन्त्र ६—श्लोक ५ ॥

हृदय क्रोध से भर उठा तथा उसने असुरों की सारी सेना को युद्ध में उतरने का आदेश दे दिया ।
॥ श्लोक १-२ ॥

आज छियासी असुर सेनापति अपनी अपनी सेनाओं के साथ यहाँ से हथियार लेकर युद्ध के लिए प्रस्थान करें । कम्बु नामक दैत्यवंश के चौरासी सेनापति अपनी-अपनी सेना के साथ युद्धस्थल को प्रस्थान करें ॥ श्लोक ३ ॥

कोटिवीर्यवंश के पचास तथा धौम्रवंश के सौ दैत्य सेनापति मेरी आज्ञानुसार सेना के साथ प्रस्थान करें ॥ श्लोक ४ ॥

कालासुर के वंशज, दौर्हृद के वंशज, मौर्य तथा कालका नाम की दानवी के वंशज, कालकेय नाम के दैत्य भी युद्ध के लिए सज्जित होकर मेरे आदेशानुसार तुरन्त युद्ध के लिए प्रस्थान करें ॥ श्लोक ५ ॥

majestic Sumbha, with mind overcome by wrath, gave command then to array all the Daitya hosts. 1-2.

"Now let the eighty-six Daityas, upraising their weapons, march forth with all their forces; let the eighty-four Kambūs march forth surrounded by their own forces. 3.

"Let the fifty Asura families who excel in valour go forth; let the hundred families of Dhaumras go forth at my command. 4.

"Let the Kālakas, the Daurhṛitas, the Mauryas, and the Kālakeyas, let these Asuras, hastening at my command, march forth ready for battle." 5.

इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः ।
निर्जगाम महासैन्यसहस्रैर्बहुभिर्वृतः ॥

॥ मन्त्र ७—श्लोक ६ ॥

आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम् ।
ज्यास्वनैः पूरयामास धरणीगगनान्तरम् ॥

॥ मन्त्र ८ - श्लोक ७ ॥

ततः सिंहो महानादमतीव कृतवान् नृप ।
घण्टास्वनेन तान्नादानम्बिका चोपबृंहयत् ॥

॥ मन्त्र ९–श्लोक ८ ॥

धनुर्ज्यासिंहघण्टानां नादापूरितदिङ्मुखा ।
निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारिताननाः ॥

॥ मन्त्र १०–श्लोक ९ ॥

इस प्रकार कठोर और उग्र शासक दैत्यराज शुम्भ ने आदेश देकर हजारों सैनिकों की विशाल सेना के साथ युद्ध के लिए प्रस्थान किया ॥ श्लोक ६ ॥

चण्डिका ने उसकी विशाल और भय पैदा करने वाली सेना को आते हुए देखकर अपने धनुष की प्रत्यञ्चा की गर्जना से पृथ्वी से लेकर आकाश के मध्य भाग तक के प्रदेश को गुंजित कर दिया ।
॥ श्लोक ७ ॥

इसके बाद सिंह ने भी अत्यन्त तीव्र वेग से महानाद किया और उस महानाद को अम्बिका ने अपने घण्टे की आवाज से और अधिक बढ़ा दिया ॥ श्लोक ८ ॥

धनुष की डोरी की टंकार तथा सिंह और घण्टे के नाद से सम्पूर्ण दिशाएँ परिपूर्ण हो गईं । काली ने भयंकर ध्वनियों के द्वारा अपने मुख को और अधिक विस्तृत कर असुरों को दबोच लिया ।
॥ श्लोक ९ ॥

After issuing these commands Śumbha, the lord of the Asuras, who ruled with fear, went forth, attended by many thousands of great soldiers. 6.

Caṇḍikā, seeing that most terrible army at hand, filled the space between the earth and the firmament with the twanging of her bow-string. 7.

Thereon her lion roared exceedingly loud, O king; and Ambikā augmented those roars with the clanging of her bell. 8.

Kālī, filling the regions of the sky with the noise from her bow-string, from her lion and from her bell, and expanding her mouth wide with her terrific roars, had the predominance. 9.

तं निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् ।
देवी सिंहस्तथा काली सरोषैः परिवारिताः ॥

॥ मन्त्र ११-श्लोक १० ॥

एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम् ।
भवायामर्रासंहानामतिवीर्यबलान्विताः ॥

॥ मन्त्र १२-श्लोक ११ ॥

ब्रह्मेशगुहविष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः ।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥

॥ मन्त्र १३-श्लोक १२ ॥

यस्य देवस्य यद्रूपं यथाभूषणवाहनम् ।
तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान्योद्धुमाययौ ॥

॥ मन्त्र १४-श्लोक १३ ॥

उस महानाद को सुनकर दैत्य सेनाओं ने चारों दिशाओं से प्रवेश कर देवी चण्डिका (कौशिकी) उनके वाहन सिंह और काली को बड़े रोष के साथ घेर लिया ॥ १० ॥

हे राजन् ! इस बीच दैत्यों के संहार और देवों के अभ्युदय के लिए ब्रह्मा, शंकर, स्वामिकार्तिक, विष्णु और इन्द्र की बलवीर्य सम्पन्न शक्तियाँ उनके शरीरों से प्रकट होकर उन के ही स्वरूप में चण्डिका के पास गईं ॥ ११–१२ ॥

जिस देवता का जो स्वरूप एवं वाहन था उसी रूप में उनकी शक्तियां भी दैत्यों से युद्ध करने आ पहुँचीं ॥ श्लोक १३ ॥

On hearing that roar which filled the four regions of the sky, the Daitya armies enraged surrounded the goddess' lion and Kālī. 10.

At this moment, O king, in order to destroy the gods' foes, and for the well-being of the lion-like Immortals, there issued forth endowed with excessive vigour and strength the Energies from the bodies of Brahmā, Siva, Guha and Vishṇu and of Indra also, and went in the forms of those gods to Caṇḍikā. 11–12.

Whatever was the form of each god, and whatever his ornaments and vehicle, in that very appearance his Energy advanced to fight with the Asuras. 13.

हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः ।
आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक १४ ॥

माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी ।
महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखाविभूषणा ॥

॥ मन्त्र १६-श्लोक १५ ॥

कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी ॥

॥ मन्त्र १७-श्लोक १६ ॥

तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता ।
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गहस्ताभ्युपाययौ ॥

॥ मन्त्र १८-श्लोक १७ ॥

ब्रह्मा की शक्ति हंसयुक्त विमान पर बैठ कर हाथ में रुद्राक्ष माला और कमण्डलु लेकर आईं। वह ब्रह्माणी कहलाईं ॥ श्लोक १४ ॥

In the front of a heavenly car drawn by swans advanced Brahmā's Energy, bearing a rosary of seeds and an earthen water-pot; she is called Brahmāṇī. 14.

बैल पर बैठ कर तथा हाथ में त्रिशूल लेकर, महासर्प का कंकण धारण कर मस्तक पर 'चन्द्रकला' से विभूषित महेश्वर की शक्ति माहेश्वरी वहां आईं ॥ श्लोक १५ ॥

Maheśvara's Energy, seated on a bull grasping a fine trident, and wearing a girdle of large snakes, arrived, adorned with a digit of the moon. 15.

कार्तिकेय की शक्ति अम्बिका सुन्दर मयूर पर आरूढ़ होकर उन्हीं का रूप धारण किए हुए असुरों से युद्ध करने के लिए उपस्थित हुईं ॥ श्लोक १६ ॥

And Kumāra's Energy, Ambikā, with spear in hand and riding on a choice peacock, advanced in Guha's shape to attack the Daityas. 16.

इसी प्रकार गरुड़ पर अवस्थित होकर हाथों में शंख, चक्र, गदा तथा धनुष बाण एवं खड्ग लेकर भगवान विष्णु की शक्ति वैष्णवी वहां आईं ॥ श्लोक १७ ॥

Likewise Vishṇu's Energy, seated upon Garuḍa, advanced with conch, discus, club, bow and scymitar in hand. 17.

यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः ।
शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम् ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १८ ॥

नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः ।
प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहतिः ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १९ ॥

वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता ।
प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥

॥ मन्त्र २१-श्लोक २० ॥

ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः ।
हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याह चण्डिकाम् ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक २१ ॥

यज्ञ वाराह का अद्भुत रूप धारण करने वाली हरि की शक्ति वाराही भी युद्ध क्षेत्र में आईं ।
॥ श्लोक १८ ॥

भगवान नृसिंह की शक्ति नारसिंही उन्हीं के समान शरीर धारण किये हुए वहाँ आईं, उनकी ग्रीवा के केशों के हिलने से आकाश में तारे छा जाते थे ॥ श्लोक १९ ॥

इसी प्रकार इन्द्र के समान रूप धारण कर ऐरावत हाथी पर आसीन होकर हजार नेत्रों वाली ऐन्द्री शक्ति हाथ में वज्र लेकर वहाँ उपस्थित हो गईं ॥ श्लोक २० ॥

इसके बाद चारों ओर से देवशक्तियों से सुसज्जित शंकर ने चण्डिका से कहा कि मेरी प्रसन्नता के लिए शीघ्र ही दैत्यों का वध करो ॥ श्लोक २१ ॥

The Energy of Hari, who assumes the peerless form of a sacrificial boar, she also advanced assuming a hog-like form. 18.

Nṛi-simha's energy assuming a body like Nṛi-simha's arrived there, adorned with a cluster of constellations hurled down by the tossing of his mane. 19.

Likewise Indra's Energy, with thunder-bolt in hand, seated upon the lord of elephants and having a thousand eyes, arrived, as is Śakra, such indeed was she. 20.

Then those Energies of the gods surrounded Siva. He said to Caṇḍikā, "Let the Asuras be slain forthwith through my good-will." 21.

ततो देवीशरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा ।
चण्डिकाशक्तिरत्युग्रा शिवाशतनिनादिनी ॥

॥ मन्त्र २३—श्लोक २२ ॥

सा चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता ।
दूतत्वं गच्छ भगवन्पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २३ ॥

ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्वितौ ।
ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक २४ ॥

त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः ।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २५ ॥

अनन्तर देवी के शरीर से अत्यन्त उग्र स्वरूपा चण्डिका शक्ति का आविर्भाव हुआ जो सैकड़ों शृगालियों (सियारनों) की तरह शब्द करने वाली थीं ॥ श्लोक २२ ॥

अपराजिता जगदम्बा ने धूम्रवर्ण के समान जटा-धारण किये हुये शंकर से कहा कि हे भगवन् ! आप शुम्भ-निशुम्भ के पास मेरे दूत बनकर जावें ।

॥ श्लोक २३ ॥

अत्यन्त अभिमानी शुम्भ और निशुम्भ दोनों दानवों तथा उनके साथी अन्य दैत्यों को, जो युद्ध के लिए यहाँ आये हों, उनको भी मेरा यह सन्देश पहुँचा दें कि हे दानवो ! यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो पाताल लोक को चले जाओ। इन्द्र को तीनों लोकों का राज्य प्राप्त हो जाय तथा देवगण यज्ञ के हविष्य (यज्ञाहुति के द्रव्य) का उपभोग करें ।

॥ श्लोक २४–२५ ॥

Thereupon from the goddess' body there came forth Caṇḍikā's Energy, most terrific, exceedingly fierce, howling like a hundred jackals. 22.

And she the unconquered said to Śiva who was smoke-coloured and had matted locks, "Be thou, my lord, a messenger to the presence of Śumbha and Niśumbha. 23.

Say unto the two overweening Dānavas, Śumbha and Niśumbha, and to whatever other Dānavas are assembled there to do battle. "Let Indra obtain the three worlds, let the gods be the enjoyers of the oblations; go ye to Pātāla if ye wish to live. 24–25.

बलावलेपादथ चेद्भवन्तो युद्धकाङ्क्षिणः ।
तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २६ ॥

यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् ।
शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक २७ ॥

तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महासुराः ।
अमर्षापूरिता जग्मुर्यतः कात्यायनी स्थिता ॥

॥ मन्त्र २९-श्लोक २८ ॥

ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः ।
ववर्षुरुद्धतामर्षास्तान्देवीममरारयः ॥

॥ मन्त्र ३०-श्लोक २९ ॥

अपनी शक्ति के अभिमान में यदि तुम सब लोग लड़ना ही चाहते हो तो युद्ध के लिए आ जाओ मेरी शिवाएँ (सियार) तुम्हारे मांस से तृप्त हों।
॥ श्लोक २६ ॥

"Yet if through pride in your strength ye are longing for battle, come ye on then! let my jackals be glutted with your flesh." 26.

भगवती जगदम्बा ने स्वयं शिव को दूत का काम सोंपा। अतः वे शिवदूती के नाम से प्रसिद्ध हुईं ॥ श्लोक २७ ॥

Because the goddess appointed Śiva himself to be ambassador, she has hence attained fame as Śiva-dūtī in this world. 27.

शिव जी के द्वारा कहे गए वचन को सुनकर महान् असुर गण क्रोध एवं प्रतिशोध की भावना से कात्यायनी के पास गए ॥ श्लोक २८ ॥

Those great Asuras however, on hearing the goddess' speech fully announced, were filled with indignation and went where Kātyāyani stood. 28.

अत्यन्त उग्र अमर्ष रखने वाले दैत्यगण देवी के ऊपर बाण, शक्ति, सूक्ष्म खड्ग आदि अस्त्रों की वर्षा करने लगे ॥ श्लोक २९ ॥

Then, at the very first, the arrogant and indignant foes of the Immortals in front poured on the goddess showers of arrows, javelins and spears. 29.

सा च तान्प्रहितान्बाणाञ्छूलशक्तिपरश्वधान् ।
चिच्छेद लीलयाध्मातधनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ॥

॥ मन्त्र ३१-श्लोक ३० ॥

तस्याग्रतस्तथा काली शूलपातविदारितान् ।
खट्वाङ्गपोथितांश्चारीन्कुर्वती व्यचरत्तदा ॥

॥ मन्त्र ३२-श्लोक ३१ ॥

कमण्डलुजलाक्षेपहतवीर्यान्हतौजसः ।
ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून्येन येन स्म धावति ॥

॥ मन्त्र ३३-श्लोक ३२ ॥

माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी ।
दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्यातिकोपना ॥

॥ मन्त्र ३४-श्लोक ३३ ॥

देवी ने दैत्यों द्वारा प्रयुक्त शूल शक्ति एवं फरसे के प्रहार को अपने धनुष के शब्द तथा उसके द्वारा प्रयुक्त किये गये बड़े बड़े बाणों से दानवों के अस्त्र-शस्त्रों को काट दिया ॥ श्लोक ३० ॥

कौशिकी दैत्यों की सेना के सामने आकर अपने शूल के प्रहार से उनके टुकड़े-टुकड़े करने लगीं तथा खट्वाङ्ग का प्रहार करती हुई इधर-उधर युद्ध क्षेत्र में विचरण करने लगीं ॥ श्लोक ३१ ॥

ब्रह्माणी जिस ओर जातीं वहाँ अपने कमण्डलु के जल को छिड़क कर दानवों के तेज और बल को नष्ट कर देती थीं ॥ श्लोक ३२ ॥

महेश्वर की शक्ति माहेश्वरी ने त्रिशूल से एवं विष्णु भगवान की शक्ति वैष्णवी ने सुदर्शन चक्र से राक्षसों का संहार किया। अत्यन्त क्रोध से परिपूर्ण कार्तिकेय की शक्ति कौमारी ने अपनी शक्ति से राक्षसों का संहार किया ॥ श्लोक ३३ ॥

And gracefully she clove those arrows, darts, discuses and axes, which were hurled, with large arrows shot from her resounding bow. 30.

And in front of her stalked Kālī then, tearing the foes asunder with the onset of her darts and crushing them with her skulltopped staff. 31.

And Brahmāṇī caused the foes to lose their courage by casting water on them from her earthen pot, and weakened their vigour, by whatever way she ran. 32.

Maheśwara's Energy slew Daityas with her trident, and Vishṇu's Energy with her discus, and Kumāra's Energy, very wrathful, slew them with her javelin. 33.

ऐन्द्री कुलिशपातेन शतशो दैत्यदानवाः ।
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ॥

॥ मन्त्र ३५-श्लोक ३४ ॥

तुण्डप्रहारविध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः ।
वराहमूर्त्या निपतँश्चक्रेण च विदारिताः ॥

॥ मन्त्र ३६-श्लोक ३५ ॥

नखैर्विदारिताँश्चान्यान्भक्षयन्ती महासुरान् ।
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगम्बरा ॥

॥ मन्त्र ३७-श्लोक ३६ ॥

चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदूषिताः ।
पेतुः पृथिव्यां पतिताँस्ताँश्चखादाथ सा तदा ॥

॥ मन्त्र ३८-श्लोक ३७ ॥

ऐन्द्री शक्ति के वज्रप्रहार से नष्ट हजारों दैत्य तथा दानव खून की धारा प्रवाहित करते हुए धराशायी हो गए ॥ श्लोक ३४ ॥

वाराही शक्ति ने अनेकों राक्षसों को अपने मुख के प्रहार द्वारा नष्ट कर दिया तथा दाढ़ के अग्रभाग से बहुत से दैत्यों के वक्षस्थल को छेद डाला तथा सुदर्शन चक्र के प्रहार से अन्यों के टुकड़े टुकड़े कर दिये ॥ श्लोक ३५ ॥

नारसिंही ने अनेक महासुरों का अपने नखों से टुकड़े-टुकड़े करके उनका भक्षण कर लिया तथा सिंहनाद से दिशाओं और आकाश को व्याप्त करती हुई युद्ध भूमि में विचरण करने लगीं ॥ श्लोक ३६ ॥

शिवदूती के प्रचण्ड अट्टहास से अनेकों दैत्य अत्यन्त भयभीत होकर भूमि पर गिर पड़े और शिवदूती ने उसी समय उन दैत्यों को खा लिया।
॥ श्लोक ३७ ॥

Torn to pieces by the downrush of the thunder-bolt hurled by Indra's Energy, Daityas and Dānavas fell on the earth in hundreds, pouring out streams of blood. 34.

Shattered by the hog-embodied Energy with blows from her snout, wounded in their breasts by the points of her tushes, and torn by her discus, demons fell down. 35.

And Nṛisiṁha's Energy roamed about in the battle, devouring other great Asuras who were torn by her claws, as she filled the intermediate region of the sky with her roaring. 36.

Asuras, demoralized by Śiva-dūtī with her violent loud laughs, fell down on the earth; she then devoured those fallen ones. 37.

इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् ।
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ॥

॥ मन्त्र ३९–श्लोक ३८ ॥

पलायनपरान् दृष्ट्वा दैत्यान्मातृगणार्दितान् ।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यो रक्तबीजो महासुरः ॥

॥ मन्त्र ४०–श्लोक ३९ ॥

रक्तबिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः ।
समुत्पतति मेदिन्यां तत्प्रमाणस्तदासुरः ॥

॥ मन्त्र ४१–श्लोक ४० ॥

युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः ।
ततश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत् ॥

॥ मन्त्र ४२–श्लोक ४१ ॥

इस तरह क्रोध में आविष्ट मातृसमूह को विविध प्रकार से महादैत्यों का संहार करते हुए देखकर असुरों के सैनिकगण अदृश्य हो गए (भाग गए) ॥ श्लोक ३८ ॥

Seeing the enraged band of Mothers crushing the great Asuras thus by various means, the troops of the gods' foes perished. 38.

मातृसमूहों द्वारा संत्रस्त असुरों को भागते हुए देखकर रक्तबीज नामक महादैत्य क्रुद्ध होकर लड़ने के लिए आया ॥ श्लोक ३९ ॥

Rakta-vīja, a great Asura, seeing the Daityas, who were hard-pressed by the band of Mothers, intent on fleeing, strode forward to fight in wrath. 39.

रक्तबीज के शरीर से एक भी रक्त की बूंद जब पृथ्वी पर गिरती तब उस जैसा ही दूसरा दैत्य तत्काल ही उत्पन्न हो जाता ॥ श्लोक ४० ॥

When from his body there falls to the ground a drop of blood, at that moment starts up from the earth an Asura of his stature. 40.

रक्तबीज नामक वह महासुर हाथ में गदा लेकर इन्द्र शक्ति से जब युद्ध करने लगा, तब ऐन्द्री ने उसे अपने वज्र के प्रहार से मार गिराया ।
॥ श्लोक ४१ ॥

He, a great Asura, with club in hand fought with Indra's Energy, and Indra's Energy then struck Rakta-vīja with her thunder-bolt. 41.

कुलिशेनाहतस्याशु तस्य सुस्राव शोणितम् ।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः ॥

॥ मन्त्र ४३-श्लोक ४२ ॥

यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः ।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः ॥

॥ मन्त्र ४४-श्लोक ४३ ॥

ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसंभवाः ।
समं मातृभिरत्युग्रशस्त्रपातातिभीषणम् ॥

॥ मन्त्र ४५-श्लोक ४४ ॥

पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा ।
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः ॥

॥ मन्त्र ४६-श्लोक ४५ ॥

वज्र से आहत होते ही रक्तबीज के शरीर से भयंकर रक्त का प्रवाह हुआ और उस रक्त से उसी के समान अनेक बलशाली योद्धा पैदा हो गए ॥ श्लोक ४२ ॥

रक्तबीज के शरीर से रक्त की जितनी बूंदें गिरीं उतने ही योद्धा रक्तबीज की ही भाँति बल, वीर्य तथा पराक्रम से सम्पन्न होकर उत्पन्न हो गए ॥ श्लोक ४३ ॥

रक्त से उत्पन्न हुए वे असुर भी अत्यन्त भयंकर अस्त्र-शस्त्रों से प्रहार करते हुए मातृसमूह के साथ युद्ध करने लगे ॥ श्लोक ४४ ॥

अनन्तर जब वज्र के प्रहार से रक्तबीज का सिर क्षत-विक्षत हुआ तब भी अत्यधिक रक्त बहा और उससे हजारों पुरुष दैत्य उत्पन्न हो गए।
॥ श्लोक ४५ ॥

Blood flowed quickly from him when wounded by the thunder-bolt. Thereupon stood up together fresh combatants, like him in body, like him in valour. 42.

For as many blood-drops fell from his body, so many men came into being, like him in courage, strength and valour. 43.

And those men also who sprang from his blood fought there with the Mothers in a combat, dreadful because of the sweep of their very sharp weapons. 44.

And again when his head was wounded by the fall of her thunder-bolt, his blood poured forth; there from were born men by thousands. 45.

वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह ।
गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥

॥ मन्त्र ४७-श्लोक ४६ ॥

वैष्णवी चक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसंभवैः ।
सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महासुरैः ॥

॥ मन्त्र ४८-श्लोक ४७ ॥

शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना ।
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम् ॥

॥ मन्त्र ४९-श्लोक ४८ ॥

वैष्णवी ने युद्ध भूमि में रक्तबीज पर सुदर्शन चक्र से प्रहार किया और ऐन्द्री ने उस दैत्य सेना-नायक पर गदा से प्रहार किया ॥ श्लोक ४६ ॥

And Vishṇu's Energy struck at this foe with her discus in the battle. Indra's Energy beat that lord of the Asuras with her club. 46.

वैष्णवी के चक्र से आहत हुए उसके शरीर से जो रक्तस्राव हुआ उससे उसी के समान आकार के हजारों की संख्या में महादैत्य प्रकट हो गए और समस्त विश्व की परिधि में वे फैल गए।

॥ श्लोक ४७ ॥

The world was filled by the thousands of great Asurs, who were his equals, and who sprang from the blood that flowed from him when cloven by the discus of Vishṇu's Energy. 47.

कौमारी (कार्तिकेय की शक्ति) ने शक्ति से, वाराही ने तलवार से और माहेश्वरी ने त्रिशूल से दैत्यसेना के नायक रक्तबीज पर प्रहार किया।

॥ श्लोक ४८ ॥

Kumār's Energy struck the great Asura Rakta-vija with her spear, and Varāha's Energy also struck him with her sword, and Maheśvara's Energy with her trident. 48.

स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत्पृथक् ।
मातृः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥

॥ मन्त्र ५०–श्लोक ४९ ॥

तस्याहतस्य बहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि ।
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्शतशोऽसुराः ॥

॥ मन्त्र ५१–श्लोक ५० ॥

तैश्चासुरासृक्संभूतैरसुरैः सकलं जगत् ।
व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ॥

॥ मन्त्र ५२–श्लोक ५१ ॥

उस महादैत्य ने क्रुद्ध होकर गदा से समस्त मातृशक्तियों पर अलग-अलग प्रकार से आघात किया ॥ श्लोक ४९ ॥

And the Daitya Rakta-vīja, that great Asura, filled full of wrath, struck every one of the Mothers in turn with his club. 49.

शक्ति और शूल आदि के द्वारा विविध प्रकार से घायल होने पर उसके शरीर से जो रक्त की धारा भूमि पर गिरी उससे भी सैकड़ों दैत्य उत्पन्न हो गए ॥ श्लोक ५० ॥

By the stream of blood, which fell on the earth from him when he received many wounds from the spears, darts and other weapons, Asuras came verily into being in hundreds. 50.

उस महाराक्षस के रुधिर से उत्पन्न असुरों से सारा संसार व्याप्त हो गया इसके कारण देवगण अत्यन्त भयभीत हो उठे ॥ श्लोक ५१ ॥

And those Asuras who sprang from that Asura's blood pervaded the whole world; thereat the gods fell into the utmost terror. 51.

तान्विषण्णान्सुरान्दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्त्वरा ।
उवाच कालीं चामुण्डे विस्तरं वदनं कुरु ॥

॥ मन्त्र ५३-श्लोक ५२ ॥

मच्छस्त्रपातसंभूतान् रक्तबिन्दून्महासुरान् ।
रक्तबिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिता ॥

॥ मन्त्र ५४-श्लोक ५३ ॥

भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान्महासुरान् ।
एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति ॥

॥ मन्त्र ५५-श्लोक ५४ ॥

भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे ।
इत्युक्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम् ॥

॥ मन्त्र ५६-श्लोक ५५ ॥

देवताओं को विषादग्रस्त देखकर चण्डिका ने जल्दी से काली को कहा चामुण्डे ! तुम अपना मुख अधिक विस्तृत करो ॥ श्लोक ५२ ॥

मेरे शस्त्रों के प्रहार से टपकने वाले रक्त की बूंदों तथा उससे जन्मे असुरों को अपने वेगवान मुख से भक्षण कर लो ॥ श्लोक ५३ ॥

इस प्रकार रक्तबिन्दुओं से उत्पन्न दैत्यों का भक्षण करती हुई तुम युद्धभूमि पर विचरण करती रहो, ऐसा करने पर रक्तबीज नामक वह राक्षस रक्त के समाप्त हो जाने पर स्वतः ही समाप्त हो जायेगा ॥ श्लोक ५४ ॥

तुम्हारे द्वारा इन उग्र राक्षसों का भक्षण कर लेने पर दूसरे राक्षस फिर पैदा नहीं होंगे, यह कह कर चण्डिका ने त्रिशूल से रक्तबीज को मारा ।
॥ श्लोक ५५ ॥

Seeing the gods dejected, Caṇḍikā spoke with haste; she said to Kālī : "O Cāmuṇḍā ! stretch out thy mouth wide. 52.

With this mouth dot hou quickly take in the great Asuras, which are the drops of blood, that have come into being out of Rakta-vīja at the descent of my weapon on him. 53.

"Roam about in the battle, devouring the great Asuras who sprang from him; so shall this Daitya with his blood ebbing away meet destruction. 54.

"These fierce demons are being devoured by thee and at the same time no others will be produced." Having enjoined her thus, the goddess next smote him with her dart. 55.

मुखेन काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम् ।
ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् ॥

॥ मन्त्र ५७-श्लोक ५६ ॥

न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि ।
तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् ॥

॥ मन्त्र ५८-श्लोक ५७ ॥

मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः ।
ताँश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् ॥

॥ मन्त्र ५९-श्लोक ५८ ॥

देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ।
जघान रक्तबीजं तं चामुण्डापीतशोणितम् ॥

॥ मन्त्र ६०-श्लोक ५९ ॥

रक्तबीज के रुधिर को काली ने अपने मुख में ले लिया तब रक्तबीज ने अपनी गदा से चण्डिका पर प्रहार किया ॥ श्लोक ५६ ॥

Kālī swallowed Rakta-vīja's blood with her mouth. Then he struck Caṇḍikā with his club there. 56.

किन्तु इस प्रहार से देवी को तनिक भी पीड़ा नहीं हुई। रक्तबीज के आहत शरीर से अति मात्रा में रक्त प्रवाहित हुआ ॥ श्लोक ५७ ॥

And the blow of his club caused her no pain, even the slightest, but from his stricken body blood flowed copiously. 57.

किन्तु ज्यों ही वह रक्त बहा त्यों ही भगवती चामुण्डा ने अपने मुंह में उसे ले लिया। उनके मुख में रक्त के बिन्दुओं के पड़ने पर जो असुर उत्पन्न हो गए उनको उन्होंने खा लिया तथा रक्तबीज के सारे रक्त को भी पी लिया। इसके बाद देवी ने रक्तबीज को, जिसका रक्त भगवती चामुण्डा ने पी लिया था वज्र, बाण,खड्ग तथा ऋष्टि आदि से मार दिया ॥ श्लोक ५८-५९ ॥

And from whatever direction it came, Cāmuṇḍā takes it then with her mouth. The great Asuras, who sprang up from the flow of blood in her mouth, Cāmuṇḍā both devoured them and quaffed his blood. The goddess smote Rakta-vīja with her dart, her thuner-bolt, arrows, swords and spears, when Cāmuṇḍā drank up his blood. 58–59.

स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसंघसमाहतः ।
नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः ॥

॥ मन्त्र ६१–श्लोक ६० ॥

ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ।
तेषां मातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः ॥

॥ मन्त्र ६२–श्लोक ६१ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
रक्तबीजवधो नाम अष्टमोऽध्यायः ॥

हे नृप ! शस्त्र समूहों के द्वारा घायल रक्त-रहित वह महादैत्य रक्तबीज भूमि पर गिर गया। इस घटना से देवताओं को अत्यन्त हर्ष हुआ और सम्पूर्ण मातृसमूह उन दैत्यों का रुधिरपान करलेने के हर्ष के मद में उन्मत्त होकर नृत्य करने में प्रवृत्त हो गया ॥ श्लोक ६०-६१ ॥

Stricken with that multitude of weapons, he fell on the earth's surface, and the great Asura Rakta-vīja became blood-less, O king. Thereat the thirty gods gained joy unparalleled, O king. The band of Mothers which sprang from them broke into a dance, being intoxicated with blood. 60-61.

मार्कण्डेयपुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में 'रक्तबीज वध' नामक अष्टम अध्याय सम्पूर्ण हुआ।

The end of the slaying of Rakta-vīja

नवमोऽध्यायः

राजोवाच

॥ मन्त्र १ ॥

विचित्रमिदमाख्यातं भगवन्भवता मम ।
देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजबधाश्रितम् ॥

॥ मन्त्र २-श्लोक १ ॥

नवम अध्याय

निशुम्भ वध

देवी चण्डिका पर निशुम्भ ने आक्रमण किया और वह द्वन्द में पराजित हुआ। शुम्भ उसकी सहायता के लिए आया, किन्तु देवी ने उसका प्रतिरोध किया और निशुम्भ को मार दिया। समस्त असुर भी नष्ट हो गये।

राजा ने कहा—हे भगवन्! आपने शुम्भ के सेनापति रक्तबीज नामक दैत्य के वध से सम्बन्धित देवी के चरित्र का यह आश्चर्यजनक माहात्म्य मुझे सुनाया॥ श्लोक १॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The slaying of Niśumbha.

Niśumbh attacked the goddess Caṇḍikā *and was worsted in single combat.—* Śumbha *came to his help, but the goddess foiled him, and slew Niśumbha—Numbers of the Asuras were destroyed.*

The king said :

Wonderful is this that thou, Sir, hast related to me, the majesty of the goddess' exploits in connexion with the slaying of Rakta-vīja. 1.

भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते ।
चकार शुम्भो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः ॥

॥ मत्र ३-श्लोक २ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ४ ॥

चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते ।
शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ३ ॥

हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् ।
अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुरसेनया ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ४ ॥

अब मैं रक्तबीज के वध के पश्चात् अत्यन्त क्रुद्ध शुम्भ और निशुम्भ ने इसकी प्रतिक्रियास्वरूप जो युद्ध किया वह सुनने का इच्छुक हूं ॥ श्लोक २ ॥

ऋषि ने कहा—हे राजन् ! रक्तबीज तथा अन्य अनेकों असुरों के युद्ध में मार दिये जाने पर शुम्भ और निशुम्भ का क्रोध असीमित हो गया।
॥ श्लोक ३ ॥

अपनी विशाल सेना के इस विध्वंस को देखकर निशुम्भ क्रोध से बौखलाकर दैत्यों की मुख्यसेना के साथ देवी के सम्मुख दौड़ा ॥ श्लोक ४ ॥

And I wish to hear further what deed did Śumbha do after Rakta-vīja was killed, and what the very irascible Niśumbha did. 2.

The ṛishi said :

After Rakta-vīja was slain and other demons were killed in the fight, the Asura Śumbha gave way to unbounded wrath, and Niśumbha also. 3.

Pouring out his indignation at beholding his great army being slaughtered, Niśumbha then rushed forward with the flower of the Asura army. 4.

तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः ।
संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥
॥ मन्त्र ७-श्लोक ५ ॥

आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः ।
निहन्तुं चण्डिकां कोपात्कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥
॥ मन्त्र ८-श्लोक ६ ॥

ततो युद्धमतीवासीद्देव्या शुम्भनिशुम्भयोः ।
शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ॥
॥ मन्त्र ९-श्लोक ७ ॥

चिच्छेदास्ताञ्छरांस्तांभ्यां चण्डिकाशु शरोत्करैः ।
ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरी ॥
॥ मन्त्र १०-श्लोक ८ ॥

उसके आगे पीछे तथा दायें बायें भाग में कई महादैत्य क्रोध से अपने होंठ क्रोधपूर्वक चबाते हुए देवी को मारने के लिए उनके समीप आगए। ॥ श्लोक ५ ॥

महाबली शुम्भ भी मातृ समूहों के साथ युद्ध करके अपनी सेना के साथ कुपित होकर चण्डिका को मारने के लिए वहां आ पहुँचा ॥ श्लोक ६ ॥

इसके पश्चात् दोनों महादैत्यों का देवी के साथ भयंकर युद्ध प्रारम्भ हो गया। शुम्भ निशुम्भ नामक दोनों महादैत्य बरसते बादलों की तरह बाणों की वर्षा करने लगे ॥ श्लोक ७ ॥

चण्डिका ने अपने बाण समुदाय से उन असुरों के बाणों को शीघ्र ही काट दिया और अपने शस्त्रों के वेगपूर्वक प्रहार से उन असुर स्वामियों के अंगों को भी आहत कर दिया ॥ श्लोक ८ ॥

In front of him and behind and on both sides great Asuras, biting their lips and enraged, advanced to slay the goddess. 5.

Śumbha also went forward, mighty in valour, surrounded with his own troops, to slay Caṇḍikā in his rage, after engaging in battle with the Mothers. 6.

Then occurred a desperate combat between the goddess and Śumbha and Niśumbha, who both, like two thunder-clouds, rained a most tempestuous shower of arrows on her. 7.

Caṇḍikā with multitudes of arrows quickly split the arrows shot by them, and smote the two Asura lords on their limbs with her numerous weapons. 8.

तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः ।
संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥

॥ मन्त्र ७–श्लोक ५ ॥

आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः ।
निहन्तुं चण्डिकां कोपात्कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥

॥ मन्त्र ८–श्लोक ६ ॥

ततो युद्धमतीवासीद्देव्या शुम्भनिशुम्भयोः ।
शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ॥

॥ मन्त्र ९–श्लोक ७ ॥

चिच्छेदास्ताञ्छरांस्तांभ्यां चण्डिकाशु शरोत्करैः ।
ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरी ॥

॥ मन्त्र १०–श्लोक ८ ॥

उसके आगे पीछे तथा दायें बायें भाग में कई महादैत्य क्रोध से अपने होंठ क्रोधपूर्वक चबाते हुए देवी को मारने के लिए उनके समीप आगए। ॥ श्लोक ५ ॥

महाबली शुम्भ भी मातृ समूहों के साथ युद्ध करके अपनी सेना के साथ कुपित होकर चण्डिका को मारने के लिए वहां आ पहुँचा ॥ श्लोक ६ ॥

इसके पश्चात् दोनों महादैत्यों का देवी के साथ भयंकर युद्ध प्रारम्भ हो गया। शुम्भ निशुम्भ नामक दोनों महादैत्य बरसते बादलों की तरह बाणों की वर्षा करने लगे ॥ श्लोक ७ ॥

चण्डिका ने अपने बाण समुदाय से उन असुरों के बाणों को शीघ्र ही काट दिया और अपने शस्त्रों के वेगपूर्वक प्रहार से उन असुर स्वामियों के अंगों को भी आहत कर दिया ॥ श्लोक ८ ॥

In front of him and behind and on both sides great Asuras, biting their lips and enraged, advanced to slay the goddess. 5.

Śumbha also went forward, mighty in valour, surrounded with his own troops, to slay Caṇḍikā in his rage, after engaging in battle with the Mothers. 6.

Then occurred a desperate combat between the goddess and Śumbha and Niśumbha, who both, like two thunder-clouds, rained a most tempestuous shower of arrows on her. 7.

Caṇḍikā with multitudes of arrows quickly split the arrows shot by them, and smote the two Asura lords on their limbs with her numerous weapons. 8.

निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् ।
अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्यावाहनमुत्तमम् ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक ९ ॥

ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम् ॥

॥ मन्त्र १२–श्लोक १० ॥

छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः ।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम् ॥

॥ मन्त्र १३–श्लोक ११ ॥

कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः ।
आयातं मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ॥

॥ मन्त्र १४–श्लोक १२ ॥

निशुम्भ ने पैने खड्ग और चमचमाती हुई ढाल को हाथ में लेकर देवी के उत्कृष्ट वाहन सिंह के सिर पर प्रहार किया ॥ श्लोक ९ ॥

देवी ने वाहन के ऊपर आघात करने पर क्षुरप्र नामक बाण से निशुम्भ के उत्कृष्ट खड्ग को तत्काल ही काट दिया तथा अष्टचन्द्र से जड़ी हुई उसकी ढाल के भी टुकड़े-टुकड़े कर डाले ॥ श्लोक १० ॥

ढाल तथा खड्ग के काट देने पर उस दैत्य ने शक्ति का प्रयोग किया किन्तु देवी ने अपने समक्ष आते ही अपने चक्र से उसकी शक्ति के दो खण्ड कर डाले ॥ श्लोक ११ ॥

तत्पश्चात् निशुम्भ क्रोध से प्रज्वलित हो उठा और उसने देवी को मारने के लिए हाथ में शूल ले लिया। किन्तु देवी ने पास आने पर अपने मुक्के के प्रहार से उसे भी चकनाचूर कर दिया।

॥ श्लोक १२ ॥

Niśumbha grasping a sharp scymitar and glittering shield struck the lion, the noble beast that bore the goddess, on the head. 9.

When her animal was struck, the goddess quickly clove Niśumbha's superb sword with a horse-shoe-shaped arrow, and also his shield on which eight moons were portrayed, 10.

When his shield was cloven and his sword too, the Asura hurled his spear; and that his missile also, as it came towards her, she split in two with her discus. 11.

Then Niśumbha, the Dānava, puffed up with wrath, seized a dart; and that also, when it came, the goddess shattered with a blow of her fist. 12.

आविध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति ।
सापि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक १३ ॥

ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुंगवम् ।
आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भूतले ॥

॥ मन्त्र १६-श्लोक १४ ॥

तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुम्भे भीमविक्रमे ।
भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥

॥ मन्त्र १७-श्लोक १५ ॥

स रथस्थस्तथात्युच्चैर्गृहीतपरमायुधैः ।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः ॥

॥ मन्त्र १८-श्लोक १६ ॥

अब निशुम्भ ने गदा घुमाकर भगवती के ऊपर प्रहार किया, किन्तु वह भी उनके त्रिशूल के भेदन से कटकर भस्म हो गई ॥ श्लोक १३ ॥

अनन्तर देवी ने दैत्याधिपति निशुम्भ को हाथ में फरसा लेकर अपनी ओर आते हुए देखा तो तत्काल उन्होंने अपने प्रबल बाणों से आहत कर उस दैत्य को पृथ्वी पर गिरा दिया ॥ श्लोक १४ ॥

अपने भ्राता महान् पराक्रमी निशुम्भ के मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिरने पर शुम्भ अत्यधिक क्रुद्ध हो उठा और जगदम्बिका को मारने के लिए आगे आया ॥ श्लोक १५ ॥

वह रथ पर बैठा हुआ था तथा अपने सभी श्रेष्ठतम आयुधों को हाथ में लेकर अपने अतुलनीय बड़े-बड़े आठ हाथों से सारे नभमण्डल को आच्छादित करने से वह अत्यधिक शोभित हुआ ॥ श्लोक १६ ॥

And then aiming his club he flung it against Caṇḍikā, yet that was shivered by the goddess' trident and became ashes. 13.

As that lordly Daitya then advanced with battle-axe in hand, the goddess struck him with a multitude of arrows and laid him low on the ground. 14.

When his brother Niśumbha, who was terrible in prowess, fell to the ground, Śumbha in utmost fury strode forward to slay Ambikā. 15.

And he, standing in his chariot, appeared to fill the entire sky with his eight arms, which were lifted far on high grasping his superb weapons. 16.

तमायान्तं समालोक्य देवी शंखमवादयत् ।
ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव दुःसहम् ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १७ ॥

पूरयामास ककुभो निजघण्टास्वनेन च ।
समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोबधविधायिना ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १८ ॥

ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभमहामदैः ।
पूरयामास गगनं गां तथोपदिशो दश ॥

॥ मन्त्र २१-श्लोक १९ ॥

ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत् ।
कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक २० ॥

देवी ने उसको अपनी ओर आते हुए देखकर शंखनाद किया और धनुष की प्रत्यञ्चा से असहनीय शब्द किया ॥ श्लोक १७ ॥

देवी का घण्टानाद सम्पूर्ण असुर सेना के विनाशकारी तेज को नष्ट कर चारों दिशाओं में फैल गया ॥ श्लोक १८ ॥

देवीवाहन सिंह ने भी अपने महानाद से मस्त हाथियों को आन्दोलित कर दिया। वह सिंहनाद सम्पूर्ण आकाशमण्डल, पृथ्वी और दसों दिशाओं में व्याप्त हो गया ॥ श्लोक १९ ॥

तदन्तर काली ने आकाश को छूते हुए भूमि को आहत किया। उनके हाथों के आघात से भयानक ध्वनि निकली जिसके कारण इसके पूर्व की हुई सभी प्रतिध्वनियां इसमें समा गईं ॥ श्लोक २० ॥

Beholding him approaching, the goddess sounded her conch, and made her bow also give forth from its string a note which was exceedingly hard to endure. 17.

And she filled all regions with the clanging of her bell, which caused the vigour of all the Daitya hosts to die away. 18.

Then her lion filled the heaven, the earth and the ten regions of the sky with loud roars, which checked the copious flow of the exudation from the demons' rutting elephants. 19.

Kālī springing upward then struck the heaven and the earth with both her hands; the boom thereof drowned those previous sounds. 20.

अट्टट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह ।
तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपं परं ययौ ॥

॥ मन्त्र २३-श्लोक २१ ॥

दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा ।
तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाशसंस्थितैः ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २२ ॥

शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा ।
आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक २३ ॥

सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम् ।
निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनीपते ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २४ ॥

इसके बाद बड़े वेग से शिवदूती ने असुरों का अमंगल और मृत्युसूचक अट्टहास किया। इन शब्दों से सम्पूर्ण असुर वर्ग त्रस्त हो उठा और शुम्भ इससे अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा ॥ श्लोक २१ ॥

उस समय देवी ने शुम्भ को सम्बोधित करते हुए कहा, अरे दुष्टात्मन् ! ठहर, ठहर। उस समय आकाश मण्डल में स्थित देवताओं ने जयजयकार किया ॥ श्लोक २२ ॥

शुम्भ ने वहां आकर आग की लपटों के समान अतिभयंकर शक्ति का प्रयोग किया। प्रज्ज्वलित अग्नि के पहाड़ के समान आती हुई शक्ति को देवी ने विशालकाय दंडाकार उल्का से दूर फेंक दिया।
॥ श्लोक २३ ॥

शुम्भ की सिंहगर्जना तीनों लोकों में व्याप्त हो गयी। हे नृप ! उसकी प्रतिध्वनि से इतनी भीषण आवाज उठी कि उसके सैनिकों द्वारा 'देवी को मारो, मारो' के शब्द भी उसमें दब गए ॥ श्लोक २४ ॥

Śiva-dūtī uttered a loud inauspicious laugh. At those sounds the Asuras trembled; Śumbha gave way to utmost rage. 21.

When Ambikā cried out "Stand, O evil-souled ! stand!" the gods who had taken their stations in the air then called to her, "Be thou victorious !" 22.

The spear flaming most terribly, which Śumbha approaching hurled, that, gleaming like a mass of fire as it came along, was driven aside by a great fire-brand. 23.

The vault between the three worlds reverberated with Śumbha's lion-like roaring, but the dreadful sound of the slaughter among his soldiers surpassed that, O king. 24.

शुम्भमुक्ताञ्शरान्देवी शुम्भस्तत्प्रहिताञ्शरान् ।
चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २५ ॥

ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघान तम् ।
स तदाभिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक २६ ॥

ततो निशुम्भः संप्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः ।
आजघान शरैर्देवीं कालीं केशरिणं तथा ॥

॥ मन्त्र २९-श्लोक २७ ॥

पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः ।
चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥

॥ मन्त्र ३०-श्लोक २८ ॥

शुम्भ द्वारा प्रयुक्त बाणों के देवी ने तथा देवी द्वारा प्रयुक्त बाणों के शुम्भ ने अपनी उत्कट बाण-वर्षा से सैंकड़ों हजारों टुकड़े कर डाले।

॥ श्लोक २५ ॥

The goddess split the arrows shot by Śumbha, and Śumbha the arrows that she discharged, each with her and his sharp arrows in hundreds and thousands. 25.

तब चण्डिका ने क्रुद्ध होकर शुम्भ को अपने त्रिशूल से आहत कर दिया। त्रिशूल से आहत शुम्भ मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा।

॥ श्लोक २६ ॥

Caṇḍikā enraged thereat smote him with a dart. Wounded therewith he fell in a faint to the ground. 26.

शुम्भ के गिर जाने पर जब निशुम्भ की चेतना लौटी तो फिर उसने धनुष हाथ में लेकर बाणों से देवी काली तथा सिंह पर प्रहार किया।

॥ श्लोक २७ ॥

Thereupon Niśumbha, regaining consciousness, seized his bow again and struck the goddess, and Kālī and the lion with arrows. 27.

उस दैत्याधिपति निशुम्भ ने पुनः दस हजार हाथों सहित प्रकट होकर चक्रों के प्रहार से चण्डिका को ढक लिया ॥ श्लोक २८ ॥

And the Dānava lord, that son of Diti, putting forth a myriad arms, again covered Caṇḍikā with a myriad discuses. 28.

ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशनी ।
चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्च तान् ।।

॥ मन्त्र ३१-श्लोक २९ ॥

ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम् ।
अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः ।।

॥ मन्त्र ३२-श्लोक ३० ॥

तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका ।
खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ।।

॥ मन्त्र ३३-श्लोक ३१ ॥

तब दुर्गम पीड़ाओं का विनाश करने वाली भगवती दुर्गा ने क्रुद्ध होकर अपने बाणों से उसके चक्र तथा बाणों को छिन्न भिन्न कर डाला।

॥ श्लोक २९ ॥

The goddess then enraged, she, Durgā who destroys the afflictions of adversity, split those discuses and those arrows with her own arrows. 29.

निशुम्भ ने जब यह देखा तब दैत्यसेना के साथ वह अपने हाथ में गदा लेकर चण्डिका को मार डालने के लिए अत्यन्त वेग से दौड़ा।

॥ श्लोक ३० ॥

Then Niśumbha seizing his club rushed impetuously at Caṇḍikā to slay her outright, with the Daitya host surrounding him. 30.

चण्डिका ने उसके आने के साथ ही अपने तीक्ष्णधार वाले खड्ग से उसकी गदा तत्काल ही काट दी। तब गदा के काट दिये जाने पर निशुम्भ ने अपने हाथ में शूल ले लिया ॥ श्लोक ३१ ॥

As he was just falling upon her, Caṇḍikā swiftly clove his club with her sharp-edged scymitar. 31.

शूलहस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम् ।
हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ।।

॥ मन्त्र ३४-श्लोक ३२ ॥

भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः ।
महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ।।

॥ मन्त्र ३५-श्लोक ३३ ॥

तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः ।
शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि ।।

॥ मन्त्र ३६-श्लोक ३४ ॥

देवउत्पीड़क निशुम्भ को हाथ में शूल लिए आता देखकर चण्डिका ने वेग से अपने शूल का प्रयोग किया तथा उसके हृदय को वेध दिया।

॥ श्लोक ३२ ॥

And he took hold of a dart. Caṇḍikā with a dart hurled swiftly pierced Niśumbha the afflicter of the Immortals, in the heart, as he approached with dart in hand. 32.

शूल द्वारा बींधे जाने पर निशुम्भ के हृदय से एक अन्य महाबलशाली और पराक्रमी पुरुष 'ठहर, ठहर' कहता हुआ प्रकट हुआ ॥ श्लोक ३३ ॥

When he was pierced by the dart, out of his heart issued another man of great strength and great valour, exclaiming "Stand !" 33.

उस पुरुष के शब्द सुनकर देवी बड़े जोर से हँसीं। उन्होंने खड्ग से उसका सिर काट दिया तथा वह भूमि पर गिर पड़ा ॥ श्लोक ३४ ॥

When he stepped forth, the goddess laughing aloud then struck off his head with her scymitar; thereupon he fell to the ground. 34.

खण्डखण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः ।
वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ॥

॥ मन्त्र ४०–श्लोक ३८ ॥

केचिद्विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् ।
भक्षिताश्चापरे कालीशिवदूतीमृगाधिपैः ॥

॥ मन्त्र ४१—श्लोक ३९ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः ॥

वैष्णवी शक्ति ने अपने चक्र से असंख्य दैत्यों के टुकड़े कर डाले तथा ऐन्द्री के हाथ से प्रयुक्त वज्र के द्वारा अनेकों असुर प्राणमुक्त हो गए ॥ श्लोक ३८ ॥

इस प्रकार इस भीषण युद्ध से कुछ दैत्य नष्ट हो गए, कुछ मारे गए तथा शेष को काली, शिवदूती और सिंह तीनों ने खा लिया ॥ श्लोक ३९ ॥

श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में 'निशुम्भ वध' नामक नवम अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

Some Danavas were cut to pieces by the discus, hurled by Vishṇu's Energy; and again by the thunder-bolt discharged from the fingers of Indra's Energy. 38.

Some Asuras perished outright, some perished by reason of the great battle, and others were devoured by Kālī, Śiva-dūtī and the lion. 39.

The end of the slaying of Niśumbha.

दशमोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसंमितम् ।
हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥

॥ मन्त्र २-श्लोक १ ॥

दशम अध्याय

शुम्भ वध

अम्बिका ने सभी अन्य देवियों को आत्मसात् कर लिया और शुम्भ से द्वन्द्व युद्ध करके उसे मार दिया। विश्वभर में तब हर्ष ध्वनि गूँज उठी।

ऋषि ने कहा—हे राजन् ! अपने प्राणों से भी प्रिय अनुज (छोटे भाई) निशुम्भ को मारा गया जानकर तथा सम्पूर्ण असुर सेना के विनाश का ज्ञान होने पर क्रुद्ध होकर शुम्भ बोला ॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The slaying of Śumbha.

Ambikā *absorbed all the other goddesses, and fighting with* Śumbha *in single combat killed him.–The universe was then filled with joy.*

The ṛishi said :

Seeing his brother Niśumbha slain, who was dear to him as his life, and his army being slaughtered, Śumbha in wrath spoke thus : 1.

बलावलेपदुष्टे त्वं मा दुर्गे गर्वमावह ।
अन्यासां बलमाश्रित्य युध्यसे यातिमानिनी ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र ४ ॥

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ।
पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ३ ॥

ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखा लयम् ।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ४ ॥

हे दुर्गे ! बल के अहंकार में चूर्ण होकर तू गर्व मत कर क्योंकि दूसरी स्त्रियों के बल के सहारे तू युद्ध करती है, और फिर भी स्वयं को अतिमानिनी समझती है ॥ श्लोक २ ॥

"O Durgā, who art tainted with the arrogance of strength, bring not thy pride here, thou who, trusting in the strength of the other goddesses, dost fight in exceeding haughtiness !" 2.

देवी ने कहा—अरे दुष्ट ! इस संसार में मैं अकेली ही हूं, मेरे अलावा दूसरा यहां कौन है ? ये सब मेरी ही विभूतियां हैं और इनको मेरे ही भीतर प्रवेश करती हुई तू देख ले ॥ श्लोक ३ ॥

The goddess said :

Alone verily am I in the world here; what other goddess is there besides me ? See, vile one ! that these goddesses, who have their divine power from me, are entering into me indeed. 3.

तत्पश्चात् ब्रह्माणी आदि सभी देवियां अम्बिका के ही शरीर में अन्तःप्रविष्ट हो गईं और अम्बिका स्वयं अकेली ही रह गईं ॥ श्लोक ४ ॥

Then all those goddesses, Brahmāṇī and the others, became absorbed into the goddess' breasts; Ambikā then remained alone indeed. 4.

देव्युवाच

॥ मन्त्र ७ ॥

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता ।
तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ॥

॥ मन्त्र ८-श्लोक ५ ॥

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ९ ॥

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः ।
पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम् ॥

॥ मन्त्र १०-श्लोक ६ ॥

देवी ने कहा—अपनी ऐश्वर्य शक्ति से मैं विभिन्न रूपों में यहां प्रकट हो रही थी, अपने उन समस्त रूपों को मैंने अपने भीतर ही समेट लिया है और अब अकेली ही मैं युद्ध भूमि में खड़ी हूं, तू स्थिर हो जा ॥ श्लोक ५ ॥

ऋषि कहते हैं—इसके बाद देवी और शुम्भ के बीच समस्त देवगणों और दैत्यों के देखते देखते ही भयानक युद्ध आरम्भ हो गया ॥ श्लोक ६ ॥

The goddess said :

Whereas I existed with my divine power in many forms here—that has been drawn in by me, truly alone I stand now. Be thou steadfast in combat ! 5.

The ṛishi said :

Thereupon commenced a battle between them both, the goddess and Śumbha, while all the gods and the Asuras looked on—a battle without quarter. 6.

शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः ।
तयोर्युद्धमभूद्भूयः सर्वलोकभयंकरम् ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक ७ ॥

दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका ।
बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः ॥

॥ मन्त्र १२–श्लोक ८ ॥

मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।
बभञ्ज लीलयैवोग्रहूंकारोच्चारणादिभिः ॥

॥ मन्त्र १३—श्लोक ९ ॥

ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः ।
सापि तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः ॥

॥ मन्त्र १४–श्लोक १० ॥

बाणों की वर्षा तथा उग्र शस्त्रों और ब्रह्मास्त्र आदि दारुण अस्त्रों के प्रहार से इन दोनों का अत्यन्त भयंकर युद्ध हुआ। अम्बिका ने उस समय सैकड़ों की संख्या में जिन अस्त्रों का प्रयोग किया उनको दैत्यराज शुम्भ ने अपने प्रतिरोधक अस्त्रों से काट दिया ॥ श्लोक ७–८ ॥

शुम्भ ने युद्ध में जिन दिव्यास्त्रों का प्रयोग किया उनको परमेश्वरी ने बिना किसी प्रयास के हुंकार आदि भयंकर शब्दों के उच्चारण मात्र से ही नष्ट कर दिया ॥ श्लोक ९ ॥

इसके बाद उस दैत्य ने सैकड़ों बाणों से देवी को चारों ओर से ढक दिया। इससे क्रुद्ध होकर देवी ने भी बाणों से उसके धनुष के टुकड़े-टुकड़े कर डाले ॥ श्लोक १० ॥

With showers of arrows, with sharp weapons and also with pitiless missiles both engaged anew in a combat which set all the world in fear. And the lord of the Daityas broke the heavenly missiles, which Ambikā discharged in hundreds, with weapons that parried them. 7–8.

And the supreme goddess in merest play broke the heavenly missiles that he discharged, with fierce shouts, ejaculations and other sounds. 9.

Then the Asura covered the goddess with hundreds of arrows, and the goddess enraged thereat split his bow also with her arrows. 10.

छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे ।
चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् ॥

॥ मन्त्र १५—श्लोक ११ ॥

ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रं च भानुमत् ।
अभ्यधावत्तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः ॥

॥ मन्त्र १६–श्लोक १२ ॥

तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका ।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम् ॥

॥ मन्त्र १७–श्लोक १३ ॥

हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः ।
जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यतः ॥

॥ मन्त्र १८–श्लोक १४ ॥

धनुष के टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाने पर दैत्यों के राजा शुम्भ ने फिर शक्ति हाथ में ली परन्तु देवी ने चक्र से उसके हाथ में स्थित उस शक्ति को भी काट दिया ॥ श्लोक ११ ॥

इसके बाद दैत्यराज शुम्भ चन्द्रमा की सौ कृत्रिम आकृतियों से युक्त चमकती हुई ढाल और तलवार लेकर देवी पर आक्रमण करने के लिए दौड़ा ॥ श्लोक १२ ॥

चण्डिका ने उसके आते ही अपने धनुष से छोड़े हुए तीखे बाणों से सूर्यकिरणों के समान चमकने वाले उस खड्ग और ढाल को तत्काल काट डाला ।
॥ श्लोक १३ ॥

जब उस असुर के घोड़े और धनुष को काट दिया गया और वह रथ और सारथि से विहीन हो गया तब उसने अम्बिका को मारने के लिए भयानक मुग्दर हाथ में उठाया ॥ श्लोक १४ ॥

And when his bow was split the lord of the Daityas took up his spear. The goddess split it, as he held it in his hand, with a discus. 11.

Next the supreme monarch of the Daityas, seizing his scymitar and sun-like shield, on which a hundred moons were portrayed, rushed at the goddess at the moment. 12.

Just has he was falling upon her, Caṇḍikā hastily split his scymitar with sharp arrows shot from her bow, and his shield also which was spotless as the sun's rays. 13.

With his steeds wounded, with his bow split, without a charioteer, the Daitya then grasped his terrible mace, being ready to slay Ambikā, 14.

चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः ।
तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १५ ॥

स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुंगवः ।
देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १६ ॥

तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले ।
स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥

॥ मन्त्र २१-श्लोक १७ ॥

उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः ।
तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक १८ ॥

मुग्दर आता देखकर देवी ने जब अपने पैने बाणों से उसके मुग्दर को भी काट डाला तब शुम्भ तुरन्त मुक्का तानकर देवी पर आक्रमण करने को दौड़ा ॥ श्लोक १५ ॥

उसने देवी के हृदय पर मुक्के से प्रहार किया और देवी ने भी उसके हृदय पर थप्पड़ से प्रहार किया ॥ श्लोक १६ ॥

थप्पड़ के प्रहार से वह दैत्य पृथ्वी पर गिर पड़ा, परन्तु तुरन्त ही फिर उठ खड़ा हुआ ।
॥ श्लोक १७ ॥

तत्पश्चात् वह ऊपर उछला और देवी को पकड़कर आकाश में ऊंचाई पर स्थित हो गया । आकाश में भी चण्डिका ने बिना किसी का आश्रय लिए ही शुम्भ से युद्ध किया । इस प्रकार असुर और चण्डिका आकाश में स्थित होकर युद्ध करने लगे ।
॥ श्लोक १८ ॥

As he was falling upon her, she clove his mace with sharp arrows; nevertheless raising his fist he rushed swiftly at her. 15.

The lordly Daitya brought his fist down on the goddess' heart, and the goddess also smote him on his breast with her palm. 16.

Wounded by the blow of her palm the Daitya king fell suddenly on the earth; and again indeed he rose up. 17.

And springing upward he seized the goddess and mounted on high into the sky. There also Caṇḍikā, being without any support, fought with him. 18.

नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् ।
चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ॥

॥ मन्त्र २३-श्लोक १९ ॥

ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह ।
उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणीतले । ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २० ॥

स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः ।
अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक २१ ॥

तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम् ।
जगत्यां पातयामास भित्वा शूलेन वक्षसि ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २२ ॥

आकाश में उन दोनों के बाहु युद्ध ने सर्व प्रथम सिद्ध एवं मुनियों को आश्चर्य में डाल दिया।

॥ श्लोक १९ ॥

The Daitya and Caṇḍikā then fought at first with each other in the sky in a close cambat, which wrought dismay among the Siddhas and munis. 19.

अम्बिका ने शुम्भ के साथ बहुत अधिक समय तक युद्ध किया और उसे उठाकर चारों ओर घुमाया तथा धरामण्डल पर पटक दिया ॥ श्लोक २० ॥

After carrying on the close cambat for a very long time with him, Ambikā lifted him up then and whirled him around and flung him on the earth. 20.

पृथ्वी पर पटक देने के बाद भी वह दुष्टात्मा दुबारा देवी को मार डालने के लिए बड़े वेग से उनकी तरफ झपटा ॥ श्लोक २१ ॥

When flung thus he touched the earth, he raised his fist hastily and rushed, evil of soul as he was, with the wish to kill Caṇḍikā. 21.

असुरों के अधिपति शुम्भ को अपनी ओर आता हुआ देख कर देवी ने त्रिशूल से उसके वक्षःस्थल को छेद कर उसे पृथ्वी पर पटक दिया ॥ श्लोक २२ ॥

Seeing him, the lord of all the Daitya folk, approaching, the goddess then pierced him in the breast with a dart and felled him down on the earth. 22.

स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः ।
चालयन् सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम् ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २३ ॥

ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन्दुरात्मनि ।
जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक २४ ॥

उत्पातमेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः ।
सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ॥

॥ मन्त्र २९-श्लोक २५ ॥

ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः ।
बभूवुर्निहते तस्मिन्गन्धर्वा ललितं जगुः ॥

॥ मन्त्र ३०-श्लोक २६ ॥

देवी के त्रिशूल की तेज धार से वह असुर प्राणहीन होकर समुद्रों, द्वीपों और पहाड़ों सहित सम्पूर्ण पृथ्वी मण्डल को कम्पित करता हुआ भूमि पर गिर पड़ा ॥ श्लोक २३ ॥

उस दुष्टात्मा के मारे जाने के बाद सारा संसार प्रसन्न हो उठा तथा अपने को पूर्ण रूप से स्वस्थ अनुभव करने लगा। तथा आकाश भी स्वच्छ और निर्मल हो गया ॥ श्लोक २४ ॥

युद्ध के पूर्व आकाश में जो उत्पातकारी मेघों और नक्षत्रों (उल्कापात) की सी ज्वाला निकल रही थी, वह सब शान्त हो गई और नदियां भी अपने स्वाभाविक मार्ग से बहने लगीं ॥ श्लोक २५ ॥

शुम्भ की मृत्यु होने पर समस्त देवगण हर्ष विभोर हो उठे और गन्धर्वों ने ललित संगीत गाया ॥ श्लोक २६ ॥

Shattered by the point of the goddess' dart he fell lifeless on the ground, shaking the whole earth and its seas, islands and mountains. 23.

When that evil-souled demon was slain, the universe became placid, the earth regained perfect well-being, and the sky grew pure. 24.

Portent-clouds, which were full of flame before, became tranquil, and the rivers kept within their channels, when he was stricken down there. 25.

All the bands of gods then grew exceedingly joyful in mind, when he was slain; the Gandharvas sang out sweetly. 26.

अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्दिवाकरः ॥

॥ मन्त्र ३१—श्लोक २७ ॥

जज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः शान्तदिग्जनितस्वनाः ।

॥ मन्त्र ३२–श्लोक २८ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः ॥

अन्य गन्धर्वों ने विभिन्न प्रकार के वाद्य बजाये और अप्सराओं के समूहों ने नृत्य किया, पवित्र पवन बहने लगा और सूर्य मण्डल अत्यन्त प्रभापूर्ण हो गया ॥ श्लोक २७ ॥

अग्निहोत्र के गृहों में पुनः शान्तिपूर्वक आहवनीय, गार्हपत्य और दक्षिणाग्नि प्रदीप्त हो गई और समस्त दिशाओं के डरावने शब्द शान्त हो गए ॥ श्लोक २८ ॥

श्रीमार्कण्डेय-पुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत देवी-माहात्म्य में 'शुम्भ वध' नामक दशम अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

And others of them sounded their instruments, and the bevies of Apsarases danced; and favourable breezes blew, very brilliant grew the sun. 27.

And the tranquil sacred fires blazed freely, and tranquil became the strange sounds that had occurred in the regions of the sky. 28.

The end of the slaying of Śumbha.

एकादशोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे
सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् ।
कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभा-
द्विकाशिवक्त्रास्तु विकाशिताशाः ॥

॥ मन्त्र २–श्लोक १ ॥

एकादश अध्याय

देवी स्तुति

देवताओं ने देवी की स्तुति में स्तोत्र-पाठ किया। देवी ने उन्हें वरदान दिया कि जब कभी राक्षसों के उत्पात बढ़ेंगे, वे अवतार लेकर विश्व को भयमुक्त करेंगी।

ऋषि ने कहा—देवी द्वारा युद्ध क्षेत्र में दैत्यराज शुम्भ का वध कर देने के पश्चात् अग्नि को अपने आगे करके इन्द्र आदि देवताओं ने भगवती कात्यायनी की स्तुति की। देवताओं की अभीष्ट सिद्धि होजाने से उनके मुखकमल विकसित हो उठे तथा दिशाएं भी उनके प्रकाश से प्रकाशित हो गईं।

॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

The Eulogy of the Goddess.

The gods offered a hymn of praise to the goddess.—She granted them the boon that she will always become incarnate and deliver the world whenever it is oppressed by demons.

The ṛishi said :

When the great lord of the Asuras was slain there by the goddess, Indra and the other gods led by Agni offered praise to her, Kātyāyanī, because they had gained their desire; and their faces shone forth, and their hopes became manifest. 1.

देवि प्रपन्नार्त्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

आधारभूता जगतस्त्वमेका
महीस्वरूपेण यतः स्थितासि ।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैत-
दाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

देवताओं ने स्तुति करते हुए कहा—शरणागत के सन्ताप को दूर करने वाली हे देवि ! हम देवगणों पर आप प्रसन्न हों। हे मां ! आप सम्पूर्ण विश्व की माता हैं, आप प्रसन्न हों। हे विश्व की ईश्वरी आप प्रसन्न हों। विश्व की रक्षा करें। आप ही इस चराचर संसार की मालकिन हैं।

॥ श्लोक २ ॥

इस समूचे संसार की आप ही एक मात्र आधार हैं। अतएव पृथ्वी के रूप में आप ही अवस्थित हैं। हे अलंघ्यबलशालिनि ! आप ही जल में स्थित होकर सारे संसार को तृप्ति प्रदान करती हो।

॥ श्लोक ३ ॥

"O goddess, who removest the sufferings of thy suppliants, be gracious !
Be gracious, O mother of the whole world !
Be gracious, O queen of the universe ! safeguard the universe !
Thou, O goddess, art queen of all that is moveable and immoveable ! 2.

Thou alone hast become the support of the world,
Because thou dost subsist in the form of the earth !
By thee, who existest in the form of water, all
This universe is filled, O thou inviolable in thy valour ! ! 3.

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया ।
संमोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥

॥ मन्त्र ५—श्लोक ४ ॥

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरापरोक्तिः ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ५ ॥

हे देवि ! आप अनन्त वीर्यशालिनी वैष्णवी शक्ति हो तथा इस विश्व की कारण और परामाया हो। इस सम्पूर्ण जगत् को आपने सम्मोहित कर रखा है तथा प्रसन्न होने पर आप ही प्राणियों की मुक्ति का कारण हो ॥ श्लोक ४ ॥

हे देवि ! अष्टादश (अट्ठारह) विद्याएं आपके ही अलग-अलग अंश हैं। संसार की समस्त स्त्रियां भी आप ही की प्रतिबिम्ब हैं। हे अम्ब ! एक-मात्र आप ही इस विश्व में सर्वत्र व्याप्त हैं। अतः स्तुति करने योग्य वस्तुओं से परे हैं। परावाक् होने से आपकी स्तुति कैसे की जा सकती है क्योंकि सर्वत्र आपकी ही सत्ता विद्यमान है।

॥ श्लोक ५ ॥

Thou art Vishṇu's energy, boundless in thy valour;
Thou art the germ of the universe, thou art Illusion sublime !
All this world has been bewitched, O goddess;
Thou indeed when attained art the cause of final emancipation from existence on the earth ! 4.

All sciences are portions of thee, O goddess;
So are all females without exception in the worlds !
By thee alone, as mother, this world has been filled !
What praise can there be for thee ? Thou art beyond praise, the sublimest expression ! 5.

सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी ।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ।।

।। मन्त्र ७-श्लोक ६ ।।

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते ।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।

।। मन्त्र ८-श्लोक ७ ।।

कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि ।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते ।।

।। मन्त्र ९-श्लोक ८ ।।

आप ही सर्वभूतों में अवस्थित हैं तथा स्वर्ग और मोक्ष देने वाली हैं। अतः आपकी स्तुति स्वयं ही सम्पन्न हो गई, आपकी इस स्तुति से बढ़कर और कोई स्तुति सम्भव नहीं हो सकती ॥ श्लोक ६ ॥

When as being the goddess, who constitutes every created thing,
And who bestows Svarga and final emancipation from existence,
Thou art praised–for thy praise again
What sublime words can be sufficient ?
6.

मानव मात्र के हृदय में आप बुद्धिरूप में अवस्थित रहने वाली और स्वर्ग तथा मोक्ष देने वाली हैं। हे नारायणि ! आपको नमस्कार है।
॥ श्लोक ७ ॥

O thou, who abidest under the form of Intelligence
In the heart of every living creature;
O goddess, who bestowest Svarga and final emancipation from existence,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 7.

तीस निमेष वाली कला, अट्ठारह निमेष वाली काष्ठा, क्षण, मुहूर्त्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर आदि विभिन्न रूपों में उत्तरोत्तर परिवर्तित रूप प्रदान करने वाली तथा बाल्य, यौवन, वार्धक्य रूप अवस्थाओं में परिणत होने वाली और जगत् का विराम करने में सक्षम आप रुद्र रूपा हो। हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक ८ ॥

Thou in the form of minutes, moments and other portions of time,
Dost bring results to pass;
O thou who art mighty in the death of the universe,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 8.

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १०–श्लोक ९ ॥

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक १० ॥

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्त्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १२–श्लोक ११ ॥

हे नारायणि ! आप सब प्रकार से कल्याण करने वाली हो तथा स्वयं मंगलस्वरूपिणी हो। आप मुक्तिदायिनी शिवा हो, तथा समस्त धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को साधिका हो। आप शरणागत वत्सला एवं तीन नेत्रों वाली गौरी हो, आपको नमस्कार है ॥ श्लोक ९ ॥

आप सृष्टि, स्थिति तथा संहार की शक्ति हो। आप सदा सर्वदा अधिष्ठित रहने वाली हो। गुणों को आश्रय देने वाली तथा स्वयं गुणमयी हो। हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक १० ॥

आप न केवल शरण में आए हुए दीनजनों, रोगपीड़ितों की ही सब तरह से रक्षा करने में तत्पर रहती हो, बल्कि सम्पूर्ण विश्व की पीड़ाओं को नष्ट करने वाली हो। हे देवि नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक ११ ॥

O thou who art beneficent with every happiness,
O lady auspicious, who accomplishest every petition,
O giver of refuge, O Tryambakā, O brilliant one,
O Nārāyaṇi, reverence be to thee ! 9.

O eternal goddess, who constitutest the the energy
Of creation, permanence and destruction,
O thou abode of good qualities, who consistest of good qualities,
O Nārāyaṇi, reverence be to thee ! 10.

Not only art thou ever prepared to protect
In every way the humble and the ailing folk who seek refuge in thee,
But thou art also the destroyer of all sufferings of this world.
O goddess Nārāyaṇī ! reverence be to *thee. 11.*

हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि ।
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १३-श्लोक १२ ॥

त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि ।
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १४-श्लोक १३ ॥

मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे ।
कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक १४ ॥

ब्रह्माणी का रूप धारण कर आप हंसों से संयुक्त विमान पर बैठने वाली हो, तथा शत्रुओं के विनाश के लिए कुश द्वारा जल छिड़कती हो। हे लक्ष्मीस्वरूपा नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक १२ ॥

आप त्रिशूल, चन्द्रमा और सर्प धारण करने वाली तथा वृहदाकार वृषभ के वाहन वाली माहेश्वरी स्वरूपा हो। हे नारायणि ! आपको नमस्कार है।
॥ श्लोक १३ ॥

मयूरों और मुर्गों से परिवेष्टित तथा महाशक्ति [आयुध विशेष] धारण करने वाली हे निष्पापे ! आप कौमारी [स्वामिकार्तिकी] शक्ति के रूप में अवस्थित हो, हे नारायणि ! आपको नमस्कार है।
॥ श्लोक १४ ॥

O thou who ridest in a heavenly car yoked with swans,
Who assumest the form of Brahmāṇī,
O goddess who sprinklest kuśa-grass-steeped water,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 12.

O thou who holdest a trident, the moon and a serpent,
Who art borne on a huge bull,
With the natural character of Māheśvarī,
O Nārāyaṇi, reverence be to thee ! 13.

O thou who art attended by the peacock and cock,
Who bearest a great spear, O sinless one;
O thou who takest thy station in Kaumārī's form,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 14.

शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे ।
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १६–श्लोक १५ ॥

गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुंधरे ।
वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १७–श्लोक १६ ॥

नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान्कृतोद्यमे ।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १८–श्लोक १७ ॥

शंख, चक्र, गदा तथा धनुष, बाण और खड्ग के रूप में श्रेष्ठ आयुधों को धारण करने वाली वैष्णवी शक्ति के रूप में अवस्थित हे नारायणि ! आपको नमस्कार है। आप प्रसन्न हों ॥ श्लोक १५ ॥

उग्र सुदर्शन चक्र लिए हुए तथा दाढ़ पर पृथ्वी को उठाए हुए वराहरूप धारण करने वाली, हे कल्याणदायिनि नारायणि ! आपको नमस्कार है।
॥ श्लोक १६ ॥

भयंकर नृसिंह का स्वरूप धारण कर, असुरों को मारने के लिए प्रयत्न करने वाली तथा तीनों लोकों की रक्षा में तत्पर हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक १७ ॥

O thou who holdest as thy finest weapons
A conch, discus, club, and the bow Śārṅga,
Be gracious, O thou who hast Vaishṇavī's form;
O Nārāyaṇi, reverence be to thee ! 15.

O thou who graspest a huge formidable discus,
Who hast uplifted the earth with thy tushes,
O auspicious one, who hast a hog-like form,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 16.

O thou who in the fierce man-lion form
Didst put forth thy efforts to slay the Daityas,
O thou who art connected with the deliverance of the three worlds,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 17.

किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्वले ।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १८ ॥

शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले ।
घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १९ ॥

दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे ।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र २१-श्लोक २० ॥

सिर पर मुकुट धारण करने वाली तथा हाथ में वज्र लिए हुए हजारों नेत्रों से सुशोभित, वृत्रासुर का प्राणहरण करनेवाली आप इन्द्रशक्तिस्वरूपिणी हो। हे नारायणि ! आपको नमस्कार हो।

॥ श्लोक १८ ॥

शिवदूती के रूप में दानवों की विशाल सेना का विनाश करने वाली तथा भयानकरूप धारण कर महाशब्द करने वाली हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक १९ ॥

दंष्ट्रायुक्त विकराल मुखवाली, मुण्डमाला से अलंकृत तथा मुण्ड नामक राक्षस का मर्दन करने वाली चामुण्डास्वरूपिणी, हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक २० ॥

O thou who hast a diadem and a great thunderbolt,
Who art dazzling with a thousand eyes,
And who tookest away Vṛitra's life-breath,
O Aindrī,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 18.

O thou who with the nature of Siva-dūtī
Slewest the mighty hosts of the Daityas,
O thou of terrible form, of loud shrieks,
O Nārāyaṇi, reverence be to thee ! 19.

O thou who hast a face formidable with tushes,
Who art decorated with a garland of heads,
O Çamuṇḍā, who grindest shaven heads,
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 20.

लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे ।
महारात्रि महाविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक २१ ॥

मेधे सरस्वति वरे भूति वाभ्रवि तामसि ।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र २३—श्लोक २२ ॥

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २३ ॥

लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टिस्वधा, ध्रुवा, महारात्रि एवं महाअविद्या के रूप में अवस्थित हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक २१ ॥

O Lakshmī, Modesty, Wide-Knowledge !
O Faith, Nourishment, Svadhā, Immoveable !
O Great-Night, Great-Illusion !
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 21.

मेधा, सरस्वती, वरा, भूति (श्रेष्ठ) सत्त्वगुणस्वरूपा, वाभ्रवी (रजोगुणस्वरूपा) तामसी (तमोगुणप्रधाना) महाकाली, नियता (नियतिस्वरूपिणी अथवा भाग्यरूपिणी) ईशा (ऐश्वर्यवाली) इन पूर्वोक्त रूपों में अवस्थित हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक २२ ॥

O Mental-Vigour, Sarasvatī, Choice one !
O Welfare, Wife of Babhru, Dark One !
O Self-controlled Queen, be thou gracious !
O Nārāyaṇī, reverence be to thee ! 22.

सर्वस्वरूपा (संसार के समस्त पदार्थों के रूप में प्रकाशित) सर्वेश्वरी (सबकी ईश्वरी) और समस्त शक्तिमण्डल से संयुक्त दिव्यरूपा, हे दुर्गे देवि ! समस्त भयों से हमारी रक्षा करो। हे देवि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक २३ ॥

O thou who hast the nature of all, Queen of all !
O thou who possessest the might of all !
From terrors save us, O goddess !
O goddess Durgā, reverence be to thee ! 23.

एतत् ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् ।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक २४ ॥

ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २५ ॥

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २६ ॥

असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक २७ ॥

तीन नेत्रों से विभूषित आपका यह सुन्दर मुख, समस्त भीतियों (भयों) से हमारी रक्षा करे। हे कात्यायनि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक २४ ॥

ज्वालाओं से विकराल, अत्यंत भयानक, और सारे दैत्यों का विनाश करने वाली, हे भद्रकालि ! आपका त्रिशूल समस्त भयों से हमारी रक्षा करे, आपको नमस्कार है ॥ श्लोक २५ ॥

हे देवि, आपके घण्टे का शब्द जो समस्त विश्व में व्याप्त होकर असुरों के तेज का नाश करता है वह माता-पिता द्वारा पुत्रों की भांति पाप कर्मों से हमारी रक्षा करे ॥ श्लोक २६ ॥

हे चण्डिके ! दैत्यों के रक्त तथा गाढ़ी चर्बी से सने आपके हाथ में स्थित खड्ग हमारे लिए शुभदायक हो। हे देवि ! आपको नमस्कार है ॥ श्लोक २७ ॥

Kindly is this thy countenance,
Which is adorned with three eyes;
May it guard us from all created things !
O Kātyāyanī, reverence be to thee ! 24.

Formidable with flames, exceedingly sharp,
Destroying the Asuras without quarter,
May the trident guard us from fear !
O Bhadra-Kālī, reverence be to thee ! 25.

Thy bell, that fills the world with its ringing
And destroys the glories of the Daityas,
May the bell guard us, O goddess,
Even us like children from sins ! 26.

Besmirched with the blood and fat of the Asuras
As with mire, gleaming with rays,
May thy scymitar be for our welfare !
O Çaṇḍikā, to thee we bow ! 27.

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान–
मुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् ।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्त्तिहन्त्री ॥

॥ मन्त्र १०–श्लोक ६ ॥

मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्ग ।
श्रीः कैटिभारिहृदयैककृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥

॥ मन्त्र ११–श्लोक १० ॥

आप शब्दब्रह्म स्वरूपिणी हैं, तथा सुविमल ऋक् और यजुष् की निधान हैं और साम (ध्वनि विशेष) उद्गीथ के रमणीय पद पाठ से संयुक्त सामवेद की भी आप ही आश्रय हैं। देवी त्रयी और वीर्यातिशालिनी (षड् ऐश्वर्य सम्पन्न) भगवती तथा संसार चक्र की प्रवर्तिका के रूप में आप ही प्रवृत्ति मार्ग (संसारोत्पत्ति) की नियामिका हैं और कृषि, वाणिज्य, पशु पालन आदि की भी प्रेरक हैं तथा तीनों भुवनों की सभी प्रकार की पीड़ाओं को नष्ट करने वाली हैं ॥ श्लोक ९ ॥

Sound is thy soul ! thou art the repository
of the most spotless ṛic and yajus hymns,
And of the sāmans, which have the
charming-worded texts of the Ud-githa !
Thou as goddess art the triple Veda, the
adorable, and for the existence and production
Of all the worlds art active; thou art the
supreme destroyer of their pains. 9.

आप मेधा स्वरूपिणी हैं तथा समस्त शास्त्रों के तत्त्वों की अधिष्ठात्री हैं। अनासक्त रूप से संसार रूपी दुर्गम समुद्र से पार करने वाली दुर्गा देवी के रूप में आप प्रतिष्ठित हैं। कैटभ दैत्य के एकमात्र शत्रु भगवान विष्णु के वक्षस्थल पर निवास करने वाली लक्ष्मी के रूप में आप ही विराजमान हैं तथा शंकर द्वारा समादृत भगवती गौरी भी आप ही हैं। ॥ श्लोक १० ॥

Thou art Mental Vigour, O goddess !
thou hast comprehended the essence of all the
Scriptures !
Thou art Durgā; the boat to cross the
difficult ocean of existence; devoid of attach-
ments !
Thou art Srī, who has planted her dominion
alone in the heart of Kaiṭabha's foe :
Thou indeed art Gaurī, who has fixed her
dweling in the moon-crested god ! 10.

विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या ॥
ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे
विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥

॥ मन्त्र ३१-श्लोक ३० ॥

रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्रारयो दस्युबलानि यत्र ॥
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥

॥ मन्त्र ३२-श्लोक ३१ ॥

समस्त विद्याओं में तथा ज्ञानदीप को प्रज्ज्वलित करने वाले शास्त्रों और वेदों में आपके सिवाय और किसके स्वरूप का वर्णन किया गया है ? आपके सिवा दूसरी ऐसी कोई शक्ति नहीं जो संसार के अज्ञान-रूपी गर्त (गड्ढा) के घोर अन्धकार को दूर कर सके ॥ श्लोक ३० ॥

In the sciences, in the scriptures, which need the lamp of discrimination,
And in the ancient sayings, who but thou
Within the pit of selfishness, wherein is exceeding great darkness,
Causes this universe to whirl about most grievously ? 30.

जहां राक्षसों, जहरीले सर्पों, चोरों, डाकुओं और शत्रुओं के दल तथा दावाग्नि (जंगल में लगने वाली आग) हो उन स्थानों पर तथा समुद्र के मध्य में अर्थात् इन सारे उपद्रवों के समय आपका स्मरण करने पर आप जगत् की रक्षा करती हो ।
॥ श्लोक ३१ ॥

Wherever dwell Rākshasas and virulently-poisonous Nāgas,
Wherever foes exist, wherever the powers of the Dasyus,
And where flaming fire appears amid the ocean,
There abiding thou dost safeguard the universe ! 31.

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम् ॥
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥

॥ मन्त्र ३३–श्लोक ३२ ॥

देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते–
र्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः ॥
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु
उत्पातपाकजनिताँश्च महोपसर्गान् ॥

॥ मन्त्र ३४–श्लोक ३३ ॥

हे विश्वेश्वरि ! आप विश्व का परिपालन करती हो, विश्वस्वरूपा होकर विश्व को धारण करती हो। जगत् के स्वामी की भी आप वन्दनीया हो। जो लोग विनीत होकर भक्तिभाव से आपके सामने नतमस्तक होते हैं, वे सम्पूर्ण विश्व के आश्रय होते हैं॥ श्लोक ३२ ॥

O queen of the universe, thou safeguardest the universe !
Thou hast the nature of the universe, for thou upholdest the universe
Thou art the lady worthy to be praised by the lord of the universe. They are
The refuge of the universe, who bow in faith before thee ! 32.

हे देवि ! आप प्रसन्न हों, शत्रुओं के भय से हमारी रक्षा करें। जैसे कि आपने दैत्यों का संहार कर तत्काल हम लोगों की रक्षा की है वैसे ही आप समस्त संसार के पापों को शीघ्र शान्त करें, तथा उनसे उत्पन्न महामारी आदि उग्रतम उपद्रवों को भी तुरन्त शान्त करें॥ श्लोक ३३ ॥

O goddess, be gracious ; Protect us wholly from fear of our foes
Perpetually, as thou hast at this very time saved us promptly by the slaughter of the Asuras !
And bring thou quickly to rest the sins of all the worlds
And the great calamities which have sprung from the maturing of portents ! 33.

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि ।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥

॥ मन्त्र ३५–श्लोक ३४ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र ३६ ॥

वरदाहं सुरगणा वरं यं मनसेच्छथ ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥

॥ मन्त्र ३७–श्लोक ३५ ॥

संसार के सन्तापों का हरण करने वाली हे देवि ! जो लोग आपके चरणों में शीश नवाते हैं, उन पर आप प्रसन्न हों। तीनों लोकों के निवासियों की पूज्या हे देवि ! संसार के लिए आप वरदायिनी हों ॥ श्लोक ३४ ॥

To us who are prostrate be thou gracious,
O goddess, who takest away affliction from the universe !
O thou worthy of praise from the dwellers in the three worlds,
Bestow thou boons on the worlds !" 34.

The goddess said :

देवी ने कहा—हे देवो ! मैं वर देने वाली वरदा हूं, तुम्हारे मन में जो इच्छा हो वह वर मांगो। विश्व के उपकार के लिए मैं वह वरदान दूंगी।
॥ श्लोक ३५ ॥

I am ready to bestow a boon, O ye hosts of gods, choose whatever boon ye desire in your mind; I grant it as a thing that benefits the worlds. 35.

देवा ऊचुः

॥ मन्त्र ३८ ॥

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेतत् त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥

॥ मन्त्र ३९–श्लोक ३६ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र ४० ॥

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे ।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥

॥ मन्त्र ४१–श्लोक ३७ ॥

नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसंभवा ।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवासिनी ॥

॥ मन्त्र ४२–श्लोक ३८ ॥

देवताओं ने कहा—हे समस्त संसार की ईश्वरि ! आप तीनों लोकों की सम्पूर्ण बाधाओं की शान्ति तथा इसी प्रकार हमारे शत्रुओं का विनाश करो ॥ श्लोक ३६ ॥

देवी ने कहा—वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाइसव युग के आने पर शुम्भ और निशुम्भ नामक दो अन्य महादैत्य उत्पन्न होंगे, उस समय मैं नन्द गोप के घर में यशोदा के गर्भ से जन्म लेकर विन्ध्याचल पर्वत पर निवास करूंगी और उन दैत्यों का विनाश करूंगी ॥ श्लोक ३७-३८ ॥

The gods said :

O queen of all, complete thou thus indeed the pacification of every trouble of the three worlds, and the destruction of our enemies. 36.

The goddess said :

When the twenty-eigth age has arrived, in the Vaivasvata Manv-antara two other great Asuras shall be born, Śumbha and Niśumbha. Then born as the offspring of Yaśoda's womb in the cowherd Nanda's house, and dwelling on the Vindhya mountains, I will destroy them both. 37–38.

पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥

॥ मन्त्र ४३–श्लोक ३९ ॥

भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान्वैप्रचित्तान्महासुरान् ।
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥

॥ मन्त्र ४४–श्लोक ४० ॥

ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः ।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम् ॥

॥ मन्त्र ४५–श्लोक ४१ ॥

भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि ।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ संभविष्याम्ययोनिजा ॥

॥ मन्त्र ४६—श्लोक ४२ ॥

तत्पश्चात् पृथ्वी मण्डल पर मैं अत्यन्त रौद्र रूप में अवतार लेकर वैप्रचित्त नाम के दानवों का विनाश करूंगी ॥ श्लोक ३९ ॥

And again becoming incarnate in a very terrible form on the face of the earth, I will slay the Vaipraçitta Dānavas. 39.

उन उग्र वैप्रचित्त नामक महासुरों के भक्षण करने से मेरी दन्तपंक्ति अनार के पुष्प की तरह लाल रंग की हो जायेगी, अतः स्वर्ग लोक में देवगण तथा मृत्युलोक में रहने वाले मानव मेरी स्तुति करते हुए मुझे हमेशा रक्तदन्तिका के नाम से संबोधित करेंगे । ॥ श्लोक ४०–४१ ॥

And when I devour those fierce and great Vaipraçitta Asuras; my teeth shall become red like the flowers of the pomegranate. Hence the gods in Svarga and men in the world of mortals praising me shall always talk of me as "Red-toothed." 40–41.

अनन्तर जब सौ वर्षों तक पृथ्वी पर वर्षा न होने से जल का अभाव हो जायेगा तब मैं मुनियों द्वारा स्तुति करने पर "अयोनिजा" के रूप में पृथ्वी पर उत्पन्न होऊंगी ॥ श्लोक ४२ ॥

And again after a period of a hundred years during which rain and water shall fail, praised by the munis I shall be born, but not wmob-begotten, on the earth. 42.

ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् ।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ॥

॥ मन्त्र ४७-श्लोक ४३ ॥

ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः ।
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥
शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि ॥

॥ मन्त्र ४८-श्लोक ४४ ॥

तत्रैव च बधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ।
दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ॥

॥ मन्त्र ४९-श्लोक ४५ ॥

इसके बाद जब मैं सौ नेत्रों से मुनियों का साक्षात्कार करूंगी तब मनुष्यगण मुझे शताक्षी के नाम से सम्बोधित करेंगे ॥ श्लोक ४३ ॥

Then because I shall behold the munis with a hundred eyes, mankind shall therefore celebrate me as "Hundred-eyed." 43.

हे देवताओ ! उस समय मैं अपनी देह से उत्पन्न शाकों के द्वारा वर्षा न होने तक सारे संसार का भरण पोषण करूंगी तथा सब प्राणियों के प्राण सुरक्षित हो सकेंगे । अतः मैं शाकम्भरी के नाम से प्रसिद्ध होऊंगी ॥ श्लोक ४४ ॥

Next, O ye gods, I shall support the whole world with the life-sustaining vegetables, which shall grow out of my own body, during a period of heavy rain. 44.

इस अवतार के समय मैं "दुर्गम" नामक असुर का वध करूंगी, तब मैं दुर्गा देवी के नाम से संसार में प्रसिद्धि प्राप्त करूंगी ॥ श्लोक ४५ ॥

I shall gain fame on the earth then as Śākambharī; and in that very period I shall slay the great Asura named Durgama. 45.

पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ।
रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात् ॥

॥ मन्त्र ५०–श्लोक ४६ ॥

तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः ।
भीमादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ॥

॥ मन्त्र ५१–श्लोक ४७ ॥

यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति ।
तदाहं भ्रामरं रूपं कृत्वा सङ्ख्येयषट्पदम् ॥

॥ मन्त्र ५२–श्लोक ४८ ॥

त्रैलोक्यस्य हितार्थाय बधिष्यामि महासुरम् ।
भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः ॥

॥ मन्त्र ५३–श्लोक ४९ ॥

जब मैं भयंकर स्वरूप ग्रहण कर मुनियों की रक्षार्थ हिमाचल में रहने वाले दैत्यों का भक्षण करूंगी तब सारे मुनि लोग भक्ति भाव से नतमस्तक होकर मेरी स्तुति करेंगे तथा मैं "भीमादेवी" के नाम से विख्यात होऊंगी ॥ श्लोक ४६-४७ ॥

And again when taking a terrible form on mount Himavat I shall destroy Rākshasas for the sake of delivering the munis, all the munis bowing their bodies reverently shall laud me then; hence my name "The terrible goddess" shall become celebrated. 46-47.

जब अरुण नामक असुर तीनों लोकों में भयंकर उपद्रव करेगा, तब मैं संख्यातीत भौंरों का स्वरूप ग्रहण कर तीनों लोकों के हितार्थ उस महान् असुर का वध करूंगी, तब लोग भ्रामरी के नाम से मेरी स्तुति करेंगे ॥ श्लोक ४८-४९ ॥

When Aruṇākhya shall work great trouble in the three worlds, I shall take a bee-like form, the form of innumerable bees, and shall slay the great Asura for the welfare of the three worlds, and folk shall then extol me everyone as Bhrāmarī. 48-49.

इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ।

॥ मन्त्र ५४-श्लोक ५० ॥

तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसङ्क्षयम् ॥

॥ मन्त्र ५५ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
नारायणीस्तुति र्नाम एकादशोऽध्यायः ॥

इस प्रकार दानवों के द्वारा जब जब विश्व में संकट उपस्थित होगा तब मैं अवतार लेकर शत्रुओं का विनाश करूंगी ॥ श्लोक ५० ॥

Thus whenever trouble shall arise caused by the Dānavas, at each such time I shall become incarnate and acomplish the foes' destruction. 50.

मार्कण्डेयपुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर कथा में देवीमाहात्म्य के अन्तर्गत नारायणी-स्तुति नामक ग्यारहवां अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

The end of the Eulogy of the Goddess.

द्वादशोऽध्यायः

देव्युवाच

॥ मन्त्र १ ॥

एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः ।
तस्याहं सकलां बाधां शमयिष्याम्यसंशयम् ॥

॥ मन्त्र २–श्लोक १ ॥

द्वादश अध्याय

फल स्तुति

देवी ने इस स्तुति के माहात्म्य का वर्णन किया और इसके पाठ और श्रवण से प्राप्य फलों पर प्रकाश डाला। देवों को अपने अधिकार पुनः प्राप्त हो गये और दैत्य पाताल चले गये। देवी के स्वरूप और गुणों की स्तुति की गयी।

जगदम्बिका ने कहा—जो इन स्तुतियों से नित्य नियमपूर्वक मेरी स्तुति करेगा, उसके समस्त संकटों को मैं निश्चय ही नष्ट कर दूंगी।

॥ श्लोक १ ॥

DEVĪ-MĀHĀTMYA

The slaying of Śumbha and Niśumbha concluded.

The goddess descants on the merits of this poem and the beneficent results of reading and listening to it.—The gods regained their rights and the Daityas departed to Pātāla.—*Her attributes and beneficence are extolled.*

The goddess said :

And whoever with mind composed shall praise me constantly with these hymns, I will quiet down every trouble for him assuredly. 1.

मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वद्वधं शुम्भनिशुम्भयोः ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः ।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ॥

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद्दुष्कृतोत्था न चापदः ।
भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ॥

॥ मन्त्र ५-श्लोक ४ ॥

शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः ।
न शस्त्रानलतोयौघात्कदाचित्संभविष्यति ॥

॥ मन्त्र ६-श्लोक ५ ॥

मधुकैटभ के नाश और महिषासुर वध तथा शुम्भ-निशुम्भ के वध का जो पाठ करेंगे तथा अष्टमी, चतुर्दशी और नवमी को एकाग्रचित्त होकर भक्ति-भाव से मेरे माहात्म्य को सुनेंगे, वे पापमुक्त रहेंगे तथा पापों से होने वाली आपत्तियां उन्हें नहीं सतायेंगी। वे कभी दरिद्र न होंगे तथा उन्हें कभी भी प्रियजनों का वियोग नहीं सहना पड़ेगा ॥ श्लोक २–४ ॥

शत्रुओं, चोरों, डाकुओं तथा लुटेरों से एवं राजाओं, शस्त्रों और अग्नि तथा जल प्रवाह से भी कभी उन्हें भय नहीं होगा ॥ श्लोक ५ ॥

And those who shall celebrate the destruction of Madhu and Kaiṭabha, the slaughter of the Asura Mahisha, and the slaying of Śumbha and Niśumbha likewise; and those also who shall listen in faith to this poem of my sublime majesty on the eighth day of the lunar fortnight, on the fourteenth and on the ninth, with intent mind, to them shall happen no wrong-doing whatever, nor calamities that arise from wrong-doing, nor poverty, nor indeed deprivation of their desires. 2–4.

Never shall he experience fear from enemies, from robbers, nor from kings, nor from weapon, or fire or water-flood. 5.

तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः ।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ॥

॥ मन्त्र ७—श्लोक ६ ॥

उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान् ।
तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ॥

॥ मन्त्र ८ - श्लोक ७ ॥

यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम ।
सदा न तद्विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ॥

॥ मन्त्र ९–श्लोक ८ ॥

बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्ये महोत्सवे ।
सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ॥

॥ मन्त्र १०–श्लोक ९ ॥

इस कारण लोगों को एकाग्रचित्त होकर भक्ति भाव से मेरे इस माहात्म्य को नियमित रूप से पढ़ना और सुनना चाहिए क्योंकि यह अत्यन्त कल्याणदायी है ॥ श्लोक ६ ॥

Hence this poem of my majesty must be read by men of composed minds and listened to by them always with faith, for it is the supreme course of blessings. 6.

मेरा यह माहात्म्य महामारी से उत्पन्न सारे उपद्रवों तथा आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक उत्पातों का शमन करने वाला है।
॥ श्लोक ७ ॥

Now may this poem of my majesty quell all kinds of calamities, which arise from grievous pestilence, and the three-fold portent. 7.

मेरे पूजागृह में जहां प्रतिदिन विधि-विधान के अनुसार मेरे इस पूर्वोक्त माहात्म्य का पाठ किया जाता है उस स्थान को मैं कभी नहीं त्यागूंगी और सदा सर्वदा मैं वहाँ उपस्थित रहूंगी ॥ श्लोक ८ ॥

Where this poem is duly read constantly at my sanctuary, I will never forsake that place, and there my presence is fixed. 8.

बलिदान, अर्चन तथा होम आदि कर्मों में तथा मांगलिक उत्सवों के अवसर पर मेरे इस सम्पूर्ण चरित्र का पाठ और श्रवण करना चाहिए।
॥ श्लोक ९ ॥

At the offering of the bali, and during worship, in the ceremonies with fire, and at a great festival, all this story of my exploits must verily be proclaimed and listened to. 9.

जानताजानता वापि बलिपूजां तथाकृताम् ।
प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथाकृतम् ॥

॥ मन्त्र ११-श्लोक १० ॥

शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः ॥

॥ मन्त्र १२-श्लोक ११ ॥

सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः ।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥

॥ मन्त्र १३-श्लोक १२ ॥

श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः ।
पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ॥

॥ मन्त्र १४-श्लोक १३ ॥

विधि-विधान का ज्ञान प्राप्त करके तथा उसे न जानते हुए अज्ञानवश भी मेरे निमित्त जो बलि, पूजा तथा हवन आदि किये जावेंगे वह सब मैं प्रेमपूर्वक स्वीकार करूंगी ॥ श्लोक १० ॥

शरद् ऋतु में अर्थात् आश्विन के नवरात्र में जो वार्षिकी महापूजा की जाती है उस समय यदि कोई भी मेरे इस माहात्म्य को भक्तियुक्त होकर श्रवण करेगा वह मेरी प्रसन्नता के कारण सब प्रकार की बाधाओं से छुटकारा पाकर धनधान्य तथा पुत्र-सुख से सुखी होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥ श्लोक ११–१२ ॥

मेरे इस माहात्म्य को तथा मेरी उत्पत्ति की शुभकारी कथाओं को तथा रणक्षेत्र में प्रदर्शित मेरे पराक्रम को सुनकर मनुष्य निडर हो जाता है।
॥ श्लोक १३ ॥

I will accept with kindliness both the bali worship that is paid, and the oblation by fire that is offered, by him who understands or him who understands not. 10.

And at the great annual worship that is performed in autumn time, the man, who listens filled with faith to this poem of my majesty, shall assuredly through my favour be delivered from every trouble, and be blessed with riches, grain and children. 11–12.

From listening to this poem of my majesty moreover come splendid issues and prowess in battles, and a man becomes fearless. 13.

जानताजानता वापि बलिपूजां तथाकृताम् ।
प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथाकृतम् ।।

॥ मन्त्र ११-श्लोक १० ॥

शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः ।।

॥ मन्त्र १२-श्लोक ११ ॥

सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः ।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ।।

॥ मन्त्र १३-श्लोक १२ ॥

श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः ।
पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ।।

॥ मन्त्र १४-श्लोक १३ ॥

विधि-विधान का ज्ञान प्राप्त करके तथा उसे न जानते हुए अज्ञानवश भी मेरे निमित्त जो बलि, पूजा तथा हवन आदि किये जावेंगे वह सब मैं प्रेमपूर्वक स्वीकार करूंगी ॥ श्लोक १० ॥

शरद् ऋतु में अर्थात् आश्विन के नवरात्र में जो वार्षिकी महापूजा की जाती है उस समय यदि कोई भी मेरे इस माहात्म्य को भक्तियुक्त होकर श्रवण करेगा वह मेरी प्रसन्नता के कारण सब प्रकार की बाधाओं से छुटकारा पाकर धनधान्य तथा पुत्र-सुख से सुखी होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥ श्लोक ११-१२ ॥

मेरे इस माहात्म्य को तथा मेरी उत्पत्ति की शुभकारी कथाओं को तथा रणक्षेत्र में प्रदर्शित मेरे पराक्रम को सुनकर मनुष्य निडर हो जाता है।
॥ श्लोक १३ ॥

I will accept with kindliness both the bali worship that is paid, and the oblation by fire that is offered, by him who understands or him who understands not. 10.

And at the great annual worship that is performed in autumn time, the man, who listens filled with faith to this poem of my majesty, shall assuredly through my favour be delivered from every trouble, and be blessed with riches, grain and children. 11–12.

From listening to this poem of my majesty moreover come splendid issues and prowess in battles, and a man becomes fearless. 13.

रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते ।
नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥

॥ मन्त्र १५-श्लोक १४ ॥

शान्तिकर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने ।
ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं श्रृणुयान्मम ॥

॥ मन्त्र १६-श्लोक १५ ॥

उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते ॥

॥ मन्त्र १७-श्लोक १६ ॥

बालग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम् ।
संघातभेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥

॥ मन्त्र १८-श्लोक १७ ॥

मेरे माहात्म्य को सुनने वाले लोगों के शत्रु नष्ट हो जाते हैं तथा वह व्यक्ति निश्चय ही कल्याण प्राप्त करता है एवं उसका वंश सुख से प्रफुल्लित होता है ॥ श्लोक १४ ॥

When men listen to this poem of my majesty, enemies pass to destruction, and prosperity accrues and their family rejoices. 14.

सब प्रकार के शान्ति कर्मों के अवसर पर, दुःस्वप्नों के देखने पर तथा नवग्रहों के प्रकोप से उत्पन्न भयानक कष्ट पैदा होने पर मेरा यह माहात्म्य सुनना चाहिये ॥ श्लोक १५ ॥

Let a man listen to this poem of my majesty everywhere, at a ceremony for securing tranquillity, and after seeing an ill-dream and when planets are greatly eclipsed. 15.

इस कथा के सुनने से सभी प्रकार के विघ्न और ग्रहों की उत्कट पीड़ायें शान्त हो जाती हैं तथा दुःस्वप्न शुभ में बदल जाते हैं ॥ श्लोक १६ ॥

Thereby portents turn into calm, and also dreadful eclipses of the planets, and also an ill-dream which man have seen; and a sweet dream appears. 16.

बालग्रहों से पीड़ित बालकों को यह माहात्म्य शान्ति प्रदान करता है। लोगों में आपसी दुराव हो जाने पर यह अच्छी मित्रता प्रदान करता है।
॥ श्लोक १७ ॥

It produces peacefulness in children who have been possessed by the demon that seizes children, and it is the best promoter of friendship among men when union is dissolved. 17.

दुर्वृत्तानामशेषाणां बलहानिकरं परम् ।
रक्षोभूतपिशाचानां पठनादेव नाशनम् ॥

॥ मन्त्र १९-श्लोक १८ ॥

सर्वं ममैतन्माहात्म्यं ममसन्निधिकारकम् ।
पशुपुष्पार्घधूपैश्च गन्धदीपैस्तथोत्तमैः ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १९ ॥

विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् ।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ॥
प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन्सकृत्सुचरिते श्रुते ॥

॥ मन्त्र २१-श्लोक २० ॥

श्रुतं हरति पापानि तथारोग्यं प्रयच्छति ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक २१ ॥

यह माहात्म्य दुराचार में प्रवृत्त सभी व्यक्तियों के बल का विनाश करता है। इसका पाठ करने मात्र से ही राक्षस, भूत और पिशाच स्वतःनष्ट हो जाते हैं ॥ श्लोक १८ ॥

मेरा यह सम्पूर्ण माहात्म्य पढ़ने वालों को मेरे अधिक निकट लाता है। जल, छाग-महिष आदि गुडहल (जपा) कण्डील आदि पुष्प, चन्दन धूप और दीप आदि विशिष्ट सामग्री के द्वारा पूजा कर एवं ब्राह्मण भोजन और हवन तथा प्रतिदिन पंचामृत से अभिषेक तथा षड्रस व्यंजनों का नैवैद्य अर्पण कर और वस्त्र आभूषण एवं पशु चढ़ा कर एक वर्ष की अवधि तक जो मेरी आराधना करते हैं, उससे मुझे जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी ही प्रसन्नता मेरे इस उत्तम चरित्र को एक बार सुनने से उत्पन्न होती है। इस माहात्म्य को सुनने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं तथा आरोग्य (रोग-मुक्ति) लाभ मिलता है ॥ श्लोक १९-२१ ॥

It is the most potent diminisher of the power of all men of ill livelihood; verily through reading it, comes the destruction of Rākshasas, goblins and Piśāças. 18.

All this poem of my majesty brings a man near unto me. And by means of cattle, flowers, arghya offerings and incenses, and by the finest perfumes and lamps, by feasts given to brāhmans, by oblations, by sprinkled water day and night, and by various other objects of enjoyment, by gifts yearly—the favour which comes by such means, such favour is won from me when this story of my noble exploits is once heard. 19-21.

रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्त्तनं मम ।
युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिबर्हणम् ॥

॥ मन्त्र २३-श्लोक २२ ॥

तस्मिञ्छ्रुते वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते ।
युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक २३ ॥

ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् ।
अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्निपरिवारितः ॥

॥ मन्त्र २५-श्लोक २४ ॥

दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः ।
सिंहव्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः ॥

॥ मन्त्र २६-श्लोक २५ ॥

मेरी उत्पत्ति कथाओं का कीर्तन सब प्रकार के भूत-प्रेतों के समुदाय से रक्षा करता है। दुष्ट दैत्यों के संहार से सम्बद्ध युद्ध सम्बन्धी चरित्र के सुनने पर मनुष्य को शत्रु के भय से मुक्ति मिल जाती है। हे देवो! तुम लोगों ने तथा ब्रह्मर्षियों, सुमेधा आदि ने जो स्तुतियां की हैं वे सब कल्याण बुद्धि का उदय करती हैं ॥ श्लोक २२-२३ ॥

वन में या जनशून्य मार्ग में, दावाग्नि से आक्रान्त हो जाने पर, निर्जन स्थान में, चोर, डाकुओं के मध्य फंस जाने पर अथवा शत्रुओं द्वारा अपहृत हो जाने पर, जंगल में सिंह, व्याघ्र तथा जंगली हाथियों आदि हिंसक जीवों के पीछे लग जाने पर, क्रुद्ध राजा की आज्ञा से वध के लिए या कारा-

When heard it takes away sins and confers perfect health. This celebration of me preserves created beings from future births, even this story of my exploits in battles, the annihilation of the wicked Daityas. When it is heard no fear, that is caused by enmity, springs up among men. And the hymns which ye have composed, and those by brāhman ṛishis, and those composed by Brahmā bestow a splendid mind. 22-23.

He who is surrounded by a raging fire in a forest or on a lonesome road, or who is encompassed by robbers in a desolate spot, or who is captured by enemies, or who is prowled after by a lion or tiger or by wild elephants in a forest, or who is under the cammand of an

राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो बध्यो बन्धगतोऽपि वा ।
आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ॥

॥ मन्त्र २७-श्लोक २६ ॥

पतत्सु चापि शस्त्रेषु सङ्ग्रामे भृशदारुणे ।
सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक २७ ॥

स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत संकटात् ।
मम प्रभावात्सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ॥

॥ मन्त्र २९-श्लोक २८ ॥

दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ॥

॥ मन्त्र ३० ॥

गृह में ले जाये जाने पर, अथवा अपार आंधी में फंस जाने पर, सागर में नाव पर यात्रा करते समय आंधी और तूफान से संकटग्रस्त हो जाने पर, तथा अति भयानक युद्ध में शस्त्रों का प्रहार किये जाने पर, अथवा दुःख से संत्रस्त होने पर जो भी मेरे इस चरित्र का स्मरण करता है वह इन सब संकटों से मुक्त हो जाता है। मेरे प्रभाव से सिंह आदि हिंसक जीव तथा चोर-लुटेरे और शत्रु लोग मेरे इस चरित्र का स्मरण करने वाले मनुष्य से दूर भाग जाते हैं।
॥ श्लोक २४-२८ ॥

enraged king, or who is sentenced to death, or who has fallen into bonds, or who is whirled around by the wind, or who stands in a ship in the wide sea, or, who is in the most dreadful battle with weapons falling upon him, or who is afflicted with pain amidst all kinds of terrible troubles—such a man on calling to mind this story of my exploits is delivered from his strait. Through my power lions and other dangerous beasts, robbers and enemies, from a distance indeed, flee from him who calls to mind this story of my exploits. 24–28

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र ३१ ॥

इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा ॥

॥ मन्त्र ३२-श्लोक २९ ॥

पश्यतां सर्वदेवानां तत्रैवान्तरधीयत ।
तेऽपि देवा निरातङ्काः स्वाधिकारान्यथा पुरा ॥

॥ मन्त्र ३३-श्लोक ३० ॥

यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः ।
दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे दैवरिपौ युधि ॥

॥ मन्त्र ३४-श्लोक ३१ ॥

ऋषि कहते हैं—प्रचंड बलशालिनी भगवती चण्डिका यह कह कर देवों के देखते-देखते वहीं पर अन्तर्धान हो गईं ॥ श्लोक २९ ॥

The ṛishi said :

Having spoken thus the adorable Caṇḍikā, who is fierce in prowess, vanished there, while the gods were gazing indeed on her. 29.

देवताओं ने भी शत्रुओं के मारे जाने के कारण निर्भय होकर पहले की भांति यज्ञांश का उपभोग करते हुए अपने अधिकार प्राप्त कर लिए। ॥ श्लोक ३० ॥

The gods also relieved from fear, their foes being slain, all resumed their own dominions as before, participating in their shares of sacrifices. 30.

देवी द्वारा जगत् का ध्वंस करने वाले अद्भुत पराक्रमी तथा देवताओं के प्रबल शत्रु शुम्भ तथा

And the Daityas—when Śumbha, that most fierce foe of the gods, who brought ruin on the world and who was peerless in prowess, had

जगद्विध्वंसिनि तस्मिन्महोग्रेऽतुलविक्रमे ।
निशुम्भे च महावीर्ये शेषाः पातालमाययुः ॥

॥ मन्त्र ३५-श्लोक ३२ ॥

एवं भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः ।
संभूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम् ॥

॥ मन्त्र ३६-श्लोक ३३ ॥

तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते ।
सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ॥

॥ मन्त्र ३७-श्लोक ३४ ॥

व्याप्तं तयैतत्सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर ।
महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया ॥

॥ मन्त्र ३८-श्लोक ३५ ॥

निशुम्भ के मारे जाने के पश्चात् शेष बचे हुए दैत्य पाताल लोक में आ गये ॥ श्लोक ३१-३२ ॥

हे राजन् यह अम्बिका सनातन रूप से नित्य होने पर भी बार-बार अवतार लेकर विश्व का पालन करती हैं ॥ ३३ ॥

इन्हीं के द्वारा सम्पूर्ण विश्व ममता-मोह से ग्रस्त होता है। तथा इनके द्वारा ही विश्व की सृष्टि हुई है। प्रार्थना करने पर वे प्रसन्न होकर विशिष्ट ज्ञान और संपत्ति प्रदान करती हैं ॥ श्लोक ३४ ॥

हे नृप सुरथ ! सृष्टि के प्रलय के समय महामारी के स्वरूप में महाकाली ही इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त रहती हैं ॥ श्लोक ३५ ॥

been slain by the goddess in fight, and Niśumbha also great in valour was slain—all came to Pātāla. 31–32.

Thus that adorable goddess, although everlasting, yet takirg birth again and again, accomplishes the safeguarding of the world, O king. 33.

By her this universe is bewitched; she verily gives birth to the universe. And when besought, she bestows knowledge; when gratified, she bestows prosperity. 34.

All this egg of Brahmā, O king, is pervaded by her, who is Mahākālī at Mahākāla, and who has the nature of the Great Destroying Goddess. 35.

सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा ।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥

॥ मन्त्र ३९-श्लोक ३६ ॥

भवकाले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धिप्रदा गृहे ।
सैवाभावे तथालक्ष्मीर्विनाशायोपजायते ॥

॥ मन्त्र ४०-श्लोक ३७ ॥

स्तुता संपूजिता पुष्पैर्गन्धधूपादिभिस्तथा ।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे तथा शुभाम् ॥

॥ मन्त्र ४१-श्लोक ३८ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
फलस्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः ॥

प्रलय के समय वे ही महामारी का स्वरूप धारण करती हैं और उत्पत्ति रहित होकर भी वे ही सृष्टि करने वाली के रूप में आविर्भूत होती हैं। ॥ श्लोक ३६ ॥

वे ही नित्य स्वरूपिणी देवी समय-समय पर पंचभूतों का संरक्षण करती हैं तथा मनुष्यों के उत्थान के समय वे ही घर में धन-धान्य की वृद्धि करने वाली लक्ष्मी के रूप में ऐश्वर्य की वृद्धि करती हैं। वे ही अभाव उत्पन्न होने पर अलक्ष्मी अर्थात् दुःख-दारिद्र्य का रूप ग्रहण कर विनाश का निमित्त बन जाती हैं। ॥ श्लोक ३७ ॥

चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि पंचोपचार अथवा षोडषोपचार के सहित एकाग्र मन से पूजा करने तथा स्तुति करने पर वे ही धन, पुत्र आदि एवं आस्तिक-बुद्धि (धर्म-निष्ठा) तथा सद्गति अर्थात् मोक्ष प्रदान करती हैं ॥ श्लोक ३८ ॥

श्रीमार्कण्डेय-पुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में फल-स्तुति नामक बारहवां अध्याय सम्पूर्ण हुआ।

She indeed is Mahā-mārī at the fated time; she indeed is creation, the Unborn. She indeed the Eternal gives stability to created beings at their fated time. 36.

She indeed is Lakshmī, bestowing prosperity on the houses of men while she abides with them; and she indeed when she is absent becomes the goddess of ill Fortune unto their destruction. 37.

When hymned and worshipped with flowers, and with incense, perfumes and other offerings, she bestows wealth and sons, and a mind brilliant in righteousness. 38.

The end of Śumbha and Niśumbha concluded.

त्रयोदशोऽध्यायः

ऋषिरुवाच

॥ मन्त्र १ ॥

एतत् ते कथितं भूप देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ।
एवंप्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ॥

॥ मन्त्र २–श्लोक १ ॥

त्रयोदश अध्याय

देवी द्वारा राजा सुरथ एवं समाधि वैश्य को वर देना

इस स्तुति को सुनने के बाद राजा सुरथ और वैश्य समाधि ने तपस्या की और देवी का पूजन किया। चण्डिका ने उन्हें दर्शन दिये और राजा को वरदान दिया कि वह अगले जन्म में मनु सावर्णि के रूप में उत्पन्न होगा और वैश्य को ज्ञान दान किया।

ऋषि ने कहा—हे भूप सुरथ ! मैंने तुम्हें उन देवी महामाया के इस उत्तम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष देने वाले माहात्म्य (चरित्र) को बतलाया। जो पूर्व में वर्णित प्रभावशालिनी होने के साथ ही इस जगत् को धारण करने वाली हैं ॥ श्लोक १ ॥

THE DEVĪ MĀHĀTMYA

(Concluded)

After hearing this poem, king Suratha and the vaiśya *practised austerities and worshipped the goddess.—*Caṇḍikā *appeared to them and gave the king the boon that he should be* Manu Sāvarṇi *in a future life, and bestowed knowledge on the* vaiśya.

The ṛishi said :

I have now related to thee, O king, this sublime poem the Devī-māhātmya. Such majestic power has the goddess, by whom this world is upheld. 1.

विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया ।
तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ॥
मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे ॥

॥ मन्त्र ३-श्लोक २ ॥

तामुपैहि महाराज शरणं परमेश्वरीम् ।

॥ मन्त्र ४-श्लोक ३ ॥

आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ॥

॥ मन्त्र ५ ॥

मार्कण्डेय उवाच

॥ मन्त्र ६ ॥

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ।
प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम् ॥

॥ मन्त्र ७-श्लोक ४ ॥

उन भगवती के द्वारा ही विद्या की उत्पत्ति होती है तथा भगवान् विष्णु की माया स्वरूपा भगवती के द्वारा ही तुम (राजा सुरथ) तथा समाधि वैश्य एवं अन्य विवेकी जन मोहित होते हैं। पहले भी मोहित होते रहे हैं तथा भविष्य में भी मोहित होंगे। अतः हे महाराज आप उन्हीं परमेश्वरी की शरण में जाओ। आराधना करने पर वे ही मानव-मात्र को सांसारिक भोग तथा मोक्ष प्रदान करती हैं॥ श्लोक २-३॥

मार्कण्डेय ने कहा- शत्रुओं द्वारा अपने राज्य का अपहरण कर लिये जाने पर निर्वेद से भरे हुए राजा सुरथ ने ऋषि सुमेधा का उपदेश सुनने के बाद

Moreover knowledge is conferred by her who is the adorable Vishṇu's Illusive power. By her thou and this vaiśya and other men of discrimination, and celebrated men are bewitched; and others shall become bewitched. Go unto her, the supreme queen, as to a place of refuge, O great king. She indeed, when propitiated by men, bestows enjoyment, Svarga and final emancipation from existence. 2–3.

Mārkaṇḍeya said :

Having heard this his speech, king Suratha fell prostrate before the illustrious ṛishi who preformed severe penances, and being down-

ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रासृगुक्षितम् ।
एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः ॥

॥ मन्त्र १२—श्लोक ९ ॥

परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ॥

॥ मन्त्र १३ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र १४ ॥

यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन ।

॥ श्लोक १० ॥

मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥

॥ मन्त्र १५ ॥

सुरथ और समाधि दोनों ही अपने शरीर के रक्त से प्रोक्षण कर बलि देते थे। इस प्रकार संयम के साथ निरन्तर तीन वर्षों तक वे भगवती जगदम्बा की आराधना करते रहे। तदनन्तर जगन्माता चण्डिका ने प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन दिया और कहा—॥ श्लोक ९ ॥

When they continued with subdued souls to propitiate her thus for three years, Caṇḍikā, who upholds the world, well-pleased spoke in visible shape. 9.

The goddess said :

देवी ने कहा—हे राजन्! तथा हे वैश्य तुम दोनों ने अपने जिस अभीष्ट की प्राप्ति के लिए तप किया है, वह मुझसे प्राप्त करो, मैं तुम से प्रसन्न हूं और वह सब मैं तुम्हें देती हूं ॥ श्लोक १० ॥

What thou dost solicit, O king, and thou O rejoicer of thy family, receive ye all that from me; well-pleased I bestow it. 10.

मार्कण्डेय उवाच

॥ मन्त्र १६ ॥

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि ॥

॥ श्लोक ११ ॥

अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ॥

॥ मन्त्र १७ ॥

सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः ॥

॥ श्लोक १२ ॥

ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम् ॥

॥ मन्त्र १८ ॥

देव्युवाच

॥ मन्त्र १९ ॥

स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् ॥

॥ मन्त्र २०-श्लोक १३ ॥

मार्कण्डेय ने कहा—राजा सुरथ ने अग्रिम जन्म में भी निरापद, निष्कंटक राज्य की प्रार्थना की तथा इस जन्म में शत्रुओं के सैन्य बल को नष्ट कर अपने अपहृत राज्य को पुनः प्राप्त करने की कामना की। ॥ श्लोक ११ ॥

वैश्य समाधि ने भी सांसारिक भावों से विरक्त होकर अपने पराये की ममता-मोह का विच्छेद करने वाले मोक्षदायक ज्ञान को प्राप्त करने की कामना की ॥ श्लोक १२ ॥

देवी ने कहा—(सुरथ एवं वैश्य की प्रार्थनाओं को सुनकर प्रसन्नचित्त देवी ने उन दोनों से कहा—) हे राजन् सुरथ ! कुछ ही समय पश्चात् तुम अपने परम्परागत राज्य को पुनः प्राप्त कर लोगे तथा विपक्षियों को मार कर तुम्हारा राज्य निष्कंटक होगा ॥ श्लोक १३ ॥

Mārkaṇḍeya said :

Then the king chose a kingdom that should not perish in another life, and in this life his own kingdom wherein the power of his enemies should be destroyed by force. 11.

Then the vaiśya also, whose mind was down-cast, chose knowledge,—to be wise, knowing 'what is mine', and 'what I am,'—knowledge that causes the downfall of worldly attachments. 12.

The goddess said :

O king, thou shalt obtain thine own kingdon in a very few days, after slaying thine enemies; it shall be steadfast for thee there. 13.

हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥

॥ मन्त्र २१ ॥

मृतश्च भूयः संप्राप्य जन्म देवाद् विवस्वतः ॥

॥ मन्त्र २२-श्लोक १४ ॥

सावर्णिको मनुर्नाम भवान्भुवि भविष्यति ।

॥ मन्त्र २३ ॥

वैश्यवर्य त्वया यश्च वरोस्मत्तोऽभिवाञ्छितः ॥

॥ मन्त्र २४-श्लोक १५ ॥

तं प्रयच्छामि संसिद्धयै तव ज्ञानं भविष्यति ॥

॥ मन्त्र २५ ॥

मार्कण्डेय उवाच

॥ मन्त्र २६ ॥

इति दत्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् ।

॥ मन्त्र २७-श्लोक १६ ॥

इस देह त्याग के पश्चात् अग्रिम जन्म में तुम सूर्यदेव और उनकी शक्ति सवर्णा से उत्पन्न हो कर सावर्णिक मनु के नाम से संसार में प्रसिद्धि पाओगे। हे कुलश्रेष्ठ वैश्य! तुमने मोक्ष प्राप्ति का जो वर मांगा है वह वर मैं तुम्हें देती हूं, तुम्हें ब्रह्म का साक्षात्कार होगा॥ श्लोक १४-१५॥

मार्कण्डेय ने कहा—(इस प्रकार मार्कण्डेय मुनि इस आराधना को समाप्त करते हुए अपने शिष्य क्रौष्टुकि से कहते हैं) हे क्रौष्टुकि! इस प्रकार राजा सुरथ तथा समाधि नामक वैश्य को मनोभिलषित वर प्राप्त होने के कारण उन दोनों ने भक्तिभाव से भगवती की स्तुति की और वह (भगवती) तत्काल ही अन्तर्धान हो गईं।

And when dead thou shalt gain another life from the god Vivasvat, and shalt be a Manu on earth, by name Sāvarṇika. And O excellent vaiśya, I bestow on thee the boon which thou hast besought of me; knowledge shall be thine unto full perfection. 14–15.

Mārkaṇḍeya said :

Having thus given them both the boon that each desired, the goddess vanished forthwith, while extolled by them both in faith.

बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताम्यामभिष्टुता ।
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥

॥ मन्त्र २८-श्लोक १७ ॥

सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॥

॥ मन्त्र २९ ॥

सावर्णिर्भविता मनुः ॥ ॐ ॥

॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
सुरथवैश्ययोर्वरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥

हे क्रौष्टुके ! इस तरह देवी द्वारा अभिलषित वरप्राप्त, क्षत्रियों में श्रेष्ठ, राजा सुरथ राज्योपभोग कर शरीर त्याग के बाद अग्रिम जन्म में सूर्य से जन्म लेकर सावर्णि नामक मनु के नाम से इस पृथ्वी पर उत्पन्न होंगे ॥ श्लोक १६–१७ ॥

श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णि से सम्बद्ध मन्वन्तर-कथा के अन्तर्गत देवीमाहात्म्य में सुरथ एवं समाधि का 'वर प्राप्ति' नामक त्रयोदश अध्याय सम्पूर्ण हुआ ।

Having thus gained the boon from the goddess, Suratha the noble kshattriya shall obtain a new birth through the Sun, and shall be the Manu Sāvarṇi. 16–17.

The end of Devī Māhātmya.

अथोत्तरभाग आरभ्यते ।

ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तम्–

ॐ अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यह मा दित्यैरुतविश्वदेवैः ।
अहं मित्रावरुणोभावि भर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥

॥ १ ॥

देवी सूक्त

'देव्यथर्वशीर्ष' में देवी द्वारा इस सूक्त के कहे जाने का उल्लेख है। अतः यह देवी सूक्त कहलाता है। महर्षि अम्भृण की वाक् नाम की ब्रह्म-विदुषी कन्या ने इसके द्वारा स्वयं की आत्म रूप में स्तुति की है। वह इस सूक्त की ऋषि हैं तथा सर्वव्यापी सच्चिदानन्द रूप परमात्मा इसके देवता हैं। इनसे अपने तादात्म्य का अनुभव करने के कारण सम्पूर्ण जगत् के अधिष्ठान के रूप में इस ऋषिका ने स्वयं को स्थापित किया है।

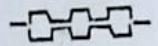

मैं समस्त प्राणियों में आत्मरूप में अवस्थित सत् चित्, आनन्दरूपिणी देवी हूं। मैं एकादश रुद्र, वसु, आदित्य एवं विश्वेदेवों के रूप में संचरण करती हूं। मैं ही, मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि तथा दोनों अश्विनीकुमारों को धारण किये हुए हूं। जिस प्रकार संसार का कारण माया है उसी प्रकार समस्त

DEVĪ SŪKTA

(Being uttered by the goddess herself, when all the gods assembled before her, it is known as the Devī Sūkta. *It was a prayer made by* Vāk, *the godly daughter of* Maharṣhi Ambhraṇa, *who, therefore, is the* Ṛishi *of this* Sūkta. *The all pervasive ultimate* Brahma *is the deity. Her feeling of identity with* Brahma *and the assertion that I am that which is the basis of the universe—find expression in the* Devī Sūkta.)

I am the goddess subsisting as self in all living beings in the nature of existence, consciousness and bliss. I move about as the eleven Rudras, Vasu, Āditya and all universal gods and initiate motion. It is I that keeps in fold Mitra, Varuṇa, Indra, Agni, and both the Aśvini Kumāras. Even as Māyā is the cause of the

अहं सोमं माहनसं विभर्म्यहं त्वष्टारमुतपूषणं भगम् ।
अहं दधामिद्रविणंहविष्मते सुप्राव्ये३ यजमानाय सुन्वते ॥

॥ २ ॥

अहं राष्ट्रीसङ्गमनी वसूनां चिकितुषीप्रथमा यज्ञियानाम् ।
तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्या वेशयन्तीम् ॥

॥ ३ ॥

विश्व शुक्ति में चाँदी के भ्रम की तरह मेरे भीतर ही निहित है अर्थात् इस अखिल विश्व की उत्पत्ति का कारण मैं ही हूं ॥ १ ॥

मैं शत्रु विनाशक, आकाशचारी देवताओं, सोम, त्वष्टा, प्रजापति, पूषा एवं भग आदि को धारण करती हूं तथा मैं ही उस यजमान को यज्ञ का श्रेष्ठ फल एवं धन प्रदान करती हूं, जो देवताओं को विशिष्ट हविष्य प्रदान कर सोमरस से उन्हें तृप्त करता है ॥ २ ॥

समस्त विश्व की अधीश्वरी के रूप में मैं अपने उपासकों को ऐश्वर्य प्रदान करती हूं एवं उपास्य परब्रह्म से अभिन्न होते हुए प्रपंच स्वरूप में मैं विभिन्न भावों में अवस्थित हूं। मैं समस्त भूतगणों में स्थित हूं। समस्त देवता विभिन्न रूपों में जो कुछ भी करते हैं, वह मेरी उपासना ही है ॥ ३ ॥

world, I am the ultimate cause of all, like a mother of pearl giving the illusion of silver. 1.

I take the form of all celestial gods like Soma, the destroyer of foes, Tvashta, Prajāpati, Pūsha and Bhag and bestow fame, glory and the fruition of sacrificial rites upon the yajmānas who offer specific oblations to the gods satiating them with soma juice. 2.

As the Supreme goddess of the world, I shower prosperity and excellence on my devotees. Being inseparable from the revered Parabrahma, I inhere in the various manifestations of illusory forms as also I exist in all living beings. All that the gods perform together is by way of devotion unto me. 3.

मयासो अन्नमत्ति योविपश्यति यः प्राणिति य ईंशृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मान्त उपक्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि ॥

॥ ४ ॥

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टंदेवेभि रुत मानुषेभिः ।
यं कामये तं तमुग्रंकृणोमितं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥

॥ ५ ॥

अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्मद्विषे शरं वेहन्त वाउ ।
अहं जनाय समदंकृणोम्यहं द्यावा पृथिवी आविवेश ॥

॥ ६ ॥

मेरी शक्ति के द्वारा ही प्राणी श्वास लेना, देखना सुनना एवं खाना आदि विभिन्न क्रियाएं सम्पादित करता है। जो लोग मुझे भोक्तृ-शक्ति के रूप में नहीं जानते, वे अज्ञानवश हीनदशा को प्राप्त होते हैं। हे बहुश्रुत ! मात्र श्रद्धा एवं भक्ति के द्वारा प्राप्त होने वाले ब्रह्म के रहस्य का मैं उपदेश देती हूं, सुनो ॥ ४ ॥

It is due to my energy that any living one breathes, hears, feeds or performs similar activities. Those who do not recognise my consuming power ignorantly fall into humbler plights. O learned one ! I preach before you the mysteries of the Brahma attainable only through faith and devotion. 4.

मैं इन्द्र आदि देवताओं तथा मनुष्यों के द्वारा प्रेमपूर्वक सेवित इस ब्रह्मरूप तत्व का उपदेश करती हूं। मैं जिसे शक्तिसम्पन्न बनाने की इच्छा करती हूं उसे जगत् का स्रष्टा ब्रह्मा तथा अतीन्द्रिय ज्ञान से युक्त ऋषि और उच्च कोटि का मेधावी बना देती हूं ॥ ५ ॥

I preach the substance that is Brahma, fondly adored by Indra and other gods, as also by human beings. Whosever I please to make mighty, I render him mightier and make him like Brahmā, the creator of the world, a ṛishi endowed with super-sensory knowledge and an intellectual of a very high order. 5.

मैं ही ब्रह्मज्ञान द्रोही, हिंसक वृत्ति के असुरों का विनाश करने के लिए रुद्र के धनुष का आकर्षण करती हूं तथा शरणागतों की सुरक्षार्थ उनके शत्रुओं से लोहा लेती हूं। मैं ही पृथ्वी एवं आकाश में अन्तर्यामी के रूप में अवस्थित रहती हूं ॥ ६ ॥

Is is I who destroys the violent Asuras opposing the knowledge of Brahma and for doing so twang the bow-string of Rudra thereby offering protection to my devotees, battling against their foes. 6.

अहं सुवे पितरमस्य मूर्द्धन्ममयोनि रप्स्वं१ तः समुद्रे ।
ततो वितिष्ठे भुवनानु विश्वो तामूंद्यां वर्ष्मणोपस्पृशामि ॥

॥ ७ ॥

अहमेव वात इव प्रवाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।
परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना संबभूव ॥

॥ ८ ॥

॥ इति देवीसूक्तं सम्पूर्णम् ॥

मैं ही इस विश्व के स्थावर जंगम, अधिष्ठान के परमात्मतत्व के ऊपर पितृ रूप आकाश की सृष्टि करती हूं। मेरे द्वारा ही समुद्र (जो कि समस्त भूतों का परमात्मस्वरूप में उत्पादक है) तथा जल (बुद्धि सम्बन्धी व्यापार) में मेरे द्वारा ही चैतन्य स्वरूप ब्रह्म स्थित है, अतः समस्त भुवनों में मैं व्यापक हूं ॥ ७ ॥

मैं ही जब कारण रूप में अखिल ब्रह्माण्ड की रचना में संलग्न होती हूं तो वायु की गति से मैं स्वयं चलने लगती हूं तथा स्वेच्छा से ही कर्मोन्मुख होती हूं अर्थात् विभिन्न कर्मों में संलग्न होती हूं। मैं स्वर्गलोक का भी अपने शरीर से स्पर्श करती हूं। पृथ्वी और आकाश दोनों से ही मैं दूर हूं। यह सब मेरी अपनी महिमा का ही प्रभाव है ॥ ८ ॥

देवी सूक्त सम्पूर्ण हुआ ।

I stretch the canopy of a paternal sky over the fundamental self-substance of all animate and inanimate objects. The ultimate causal reality existing in the ocean is verily due to me and it is through me that ultimate consciousness and total intelligence inhere in water (intellection) and, therefore, I pervade all the three worlds. 7.

As the uncaused cause, when I take up the creation of the entire universe, I begin to blow with the breath of air and by my own pleasure and will become action-oriented and functional. I also embrace the heavens with my body. I am beyond the earth and the sky. All that is present is the manifestation of my glory. 8.

Here ends the Devī–Sūkta.

आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन च द्विज ।
विधिना ब्रूहि सकलं यथावत्प्रणतस्य मे ॥
॥ २ ॥

ऋषिरुवाच

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते ।
भक्तोऽसीति न मे किञ्चित्तवावाच्यं नराधिप ॥
॥ ३ ॥

सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी ।
लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥
॥ ४ ॥

हे द्विज श्रेष्ठ ! मैं आपके चरणों में नतमस्तक हूं। मुझे जिस विधि से और देवी के जिस स्वरूप की आराधना करनी है, वह सब विधि पूर्वक बतलाइये ॥ २ ॥

O excellent twice-born sir, I bow my head at your feet. Kindly tell me systematically the method of worship as also that form of the goddess which I have to worship. 2.

ऋषि कहते हैं—हे राजन् ! जो तुमने प्रश्न किया वह रहस्यमय और गोपनीय है; किन्तु मेरे भक्त हो इसलिए तुमसे कुछ भी अकथनीय नहीं है। ॥ ३ ॥

The ṛishi said :

The question that you have asked ,O King, is full of mystery and secrecy. But you are my devotee hence nothing is to be concealed from you. 3.

त्रिगुणात्मिका परमेश्वरी महालक्ष्मी ही सब की आदिकारण हैं। दृश्य और अदृश्य रूप से वे ही सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त होकर अवस्थित हैं ॥ ४ ॥

The ultimate goddess Mahālakshmī, having the three attributes, is the prime cause of all. She alone pervades the entire universe, established in all manifest and unmanifest forms. 4.

मातुलिङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च बिभ्रती ।
नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रती नृप मूर्द्धनि ।।
॥ ५ ॥

तप्तकाञ्चनवर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा ।
शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ।।
॥ ६ ॥

शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी ।
बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ।।
॥ ७ ॥

सा भिन्नाञ्जनसंकाशा दंष्ट्राङ्कितवरानना ।
विशाललोचना नारी बभूव तनुमध्यमा ।।
॥ ८ ॥

हे राजन् ! महालक्ष्मी अपनी चार भुजाओं में मातुलिङ्ग (बिजौरे का फल), गदा, खेट (ढाल) एवं पानपात्र और मस्तक पर नाग, लिङ्ग और योनि इन वस्तुओं को धारण करती हैं ॥ ५ ॥

तपाए हुए सोने के समान उनकी कान्ति है तथा तप्त स्वर्ण के समान ही उनके आभूषण हैं। उन्होंने अपने तेज से इस शून्य जगत् को परिपूर्ण किया है ॥ ६ ॥

परमेश्वरी महालक्ष्मी ने इस समस्त जगत् को शून्य देखकर केवल तमोगुण युक्त उपाधि के द्वारा एक दूसरा उत्कृष्ट रूप धारण किया है ॥ ७ ॥

एक नारी के रूप में वह रूप प्रकट हुआ, जिसके शरीर की कान्ति दीप्तिमान काजल की भांति काले रंग की थी। उसका उत्कृष्ट मुख दाढ़ों से शोभित था, दोनों नेत्र विशाल तथा कटि भाग (कमर) पतला था ॥ ८ ॥

Mahālakshmī holds citron fruit, club, shield and drinking bowl in her four hands, O king, and on her head she wears Nāg, linga and Yoni. 5.

Her complexion is very much like gold purified in fire and her ornaments also are of molten gold. She has fulfilled the void of the world with her radiance. 6.

Finding the entire universe a void, the ultimate goddess Mahālakshmī has taken another excellent form by dint of her attribute of Tamas. 7.

That attribute took a woman's form, the lustre of whose body was like luminous soot. Her excellent mouth was graced with jaw-teeth, both of her eyes were large and her waist was slim. 8.

खड्गपात्रशिरःखेटैरलंकृतचतुर्भुजा ।
कबन्धहारं शिरसा बिभ्राणा हि शिरःस्रजम् ॥
॥ ९ ॥

सा प्रोवाच महालक्ष्मीं तामसी प्रमदोत्तमा ।
नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ॥
॥ १० ॥

तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ।
ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते ॥
॥ ११ ॥

महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा ।
निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ॥
॥ १२ ॥

उसकी चारों भुजाएं ढाल, तलवार, प्याला (चषक पात्र) और कटे हुए मुण्ड से सुशोभित थीं। वक्षःस्थल पर कबंध (धड़) तथा मस्तक पर वह मुण्डमाला धारण किए हुए थीं ॥ ९ ॥

Her four hands were adorned with shield, scymitar, goblet, and a severed head. She had a torso on her breast and on her head was a wreath of severed heads. 9.

इस तरह प्रकट स्त्रियों में उत्कृष्ट तामसी देवी ने महालक्ष्मी से कहा—हे माता ! आपको प्रणाम है। मेरा नाम और कर्म बतलाइये ॥ १० ॥

That Tāmasī goddess, excellent among women, who thus took form, spoke to goddess Mahālakshmī : O mother, I bow in reverence before you. Please give me my name and tell me my functions. 10.

तब महालक्ष्मी ने स्त्रियों में उत्कृष्ट उस तामसी देवी से कहा—मैं तुम्हें नाम प्रदान करती हूं तथा तुम्हारे जो-जो कर्म हैं, उनको भी बतलाती हूं। ॥ ११ ॥

Thereat Mahālakshmī said to the Tāmasī goddess, excellent among womankind : I bestow a name upon you and shall also tell you the functions that you have to perform. 11.

महामाया, महाकाली, महामारी, क्षुधा, तृषा, निद्रा, तृष्णा, एकवीरा, कालरात्रि तथा दुरत्यया—ये ही तुम्हारे नाम हैं, जो कर्मों के द्वारा जगत्

Mahāmāyā, Mahākālī, Hunger, Thirst, Sleep, Covetuousness, Ekvīrā, Kālarātri and Duratyayā—These are your names that will be

इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः ।
एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ॥
॥ १३ ॥

तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप ।
सत्वाख्येनातिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥
॥ १४ ॥

अक्षमालाङ्कुशधरा वीणापुस्तकधारिणी ।
सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यैव सा ददौ ॥
॥ १५ ॥

महाविद्या महावाणी भारती वाक् सरस्वती ।
आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्बीजगर्भा च धीश्वरी ॥
॥ १६ ॥

में चरितार्थ होंगे। इन नामों के माध्यम से तुम्हारे कर्मों का ज्ञान प्राप्त कर जो उनका पाठ करता है, वह समस्त सुखों का उपभोग करता है ॥ १२-१३ ॥

हे नृप ! महाकाली से यह कहकर महालक्ष्मी ने अत्यन्त शुद्ध सत्त्व गुण से युक्त दूसरा स्वरूप धारण किया जो चन्द्रमा की तरह गौरवर्ण था ॥ १४ ॥

वह उत्कृष्ट नारी अपने हाथों में अक्षमाला, अंकुश, वीणा एवं पुस्तक धारण किए हुए थी। उसको भी महालक्ष्मी ने नाम प्रदान किए ॥ १५ ॥

महाविद्या, महावाणी, भारती, वाक्, सरस्वती, आर्या, ब्राह्मी, कामधेनु, बीजगर्भा और धीश्वरी (बुद्धि की अधिष्ठात्री)—ये तुम्हारे नाम होंगे ।
॥ १६ ॥

justified by the deeds you will perform. One who recites your names by attaining a knowledge of your deeds therefrom, shall attain all sorts of happiness. 12–13.

Having thus spoken to Kālī, O king, Mahālakshmī took another form from the purest of her attribute of Satva which was as fair as the moon. 14.

That excellent lady had a garland of eyes, dart, Vīṇā and book in her four hands. To her also Mahālakshmī gave the following names: 15.

Mahāvidyā, Mahāvāṇī, Bhāratī, Vāk, Saraswatī, Āryā, Brāhmī, Kāmdhenu, Bījagarbhā and Dhīśvarī (the goddess of intellect). 16.

अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्वतीम् ।
युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥
॥ १७ ॥

इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ।
हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥
॥ १८ ॥

ब्रह्मन्विधे विरिञ्चेति धातरित्याह तं नरम् ।
श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम् ॥
॥ १९ ॥

महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह ।
एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥
॥ २० ॥

इसके उपरान्त महालक्ष्मी ने महाकाली तथा महासरस्वती से कहा—देवियो ! तुम दोनों अपने-अपने गुणों के अनुरूप स्त्री-पुरुष के जोड़े उत्पन्न करो। ॥ १७ ॥

उन दोनों से यह कहकर महालक्ष्मी ने प्रथम स्वयं ही स्त्री-पुरुष का एक जोड़ा उत्पन्न किया। वे दोनों हिरण्यगर्भ (सात्विक ज्ञान सम्पन्न) और सुन्दर तथा कमल के आसन पर सुशोभित थे। उन दोनों में एक स्त्री और दूसरा पुरुष था ॥ १८ ॥

तदुपरान्त महालक्ष्मी ने पुरुष को ब्रह्मन्, विधे, विरिञ्चि तथा धातः, इन शब्दों से सम्बोधित किया तथा स्त्री को श्री ! पद्मे ! कमले ! लक्ष्मी ! इन सम्बोधनान्त नामों से सम्बोधित किया ॥ १९ ॥

इसके अनन्तर महाकाली तथा महासरस्वती ने भी अलग-अलग एक-एक जोड़ा उत्पन्न किया। इनके भी रूपों और नामों को मैं तुम्हें बतलाता हूं। ॥ २० ॥

Thereafter, Mahālakshmī said to Mahākālī and Mahāsaraswatī: You goddesses both give birth to couples of man and woman according to your attributes. 17.

Having thus spoken to both of them, Mahālakshmī first herself produced a couple–a man and a woman–both of them were Hiraṇyagarbha (full of pure knowledge) and beautiful and were seated on a lotus. 18.

Mahālakshmī then addressed the male as Brāhman, Vidhi, Viranci, and Dhātah. She also addressed the woman as Srī, Padmā, Kamalā and Lakshmī. 19.

Thereafter Mahākālī and Mahāsarawatī also produced a couple each. I give you their names and their forms. 20.

नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम् ।
जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥
॥ २१ ॥

स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः ।
त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥
॥ २२ ॥

सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप ।
जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥
॥ २३ ॥

विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ।
उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा ॥
॥ २४ ॥

नीलकण्ठ (नीलवर्ण कण्ठ), रक्तबाहु (लाल रंग के हाथों वाला), श्वेतांग (गौरवर्ण शरीर), चन्द्रशेखर (मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट धारण किए हुए) पुरुष को एवं गौर वर्ण की स्त्री को उत्पन्न किया ॥ २१ ॥

वह पुरुष रुद्र, शंकर, स्थाणु, कपर्दी एवं त्रिलोचन के नामों से विख्यात हुआ तथा त्रयी, विद्या, कामधेनु, भाषा, अक्षरा, स्वरा, ये नाम स्त्री के प्रसिद्ध हुए ॥ २२ ॥

हे नृप ! महासरस्वती ने गौरवर्ण की स्त्री और श्यामवर्ण के पुरुष को उत्पन्न किया। उन दोनों के नाम भी मैं तुम्हें बतलाता हूं ॥ २३ ॥

इन दोनों में पुरुष के नाम विष्णु, कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव तथा जनार्दन प्रसिद्ध हुए। तथा उमा, गौरी, सती, चण्डी, सुभगा एवं शिवा, इन नामों से स्त्री की प्रसिद्धि हुई ॥ २४ ॥

Nīlakaṇṭha (blue–throated), Rakta–bāhu (Red – handed), Śvetāṅga (fair coloured), Çandra–Śekhar (wearing the moon as a crown) was the male and the woman was fair complexioned. 21.

The man came to be known as Rudra, Śankar, Sthāṇu, Kapardī and Triloçana and Trayī, Vidyā, Kāmdhenu, Bhāshā, Akshara, Svarā were the names through which the female became known all over. 22.

O King, Mahāsaraswatī produced a fair coloured woman and a dark complexioned man. I give you their respective names. 23.

Of the two, the man attained fame by the names of Vishṇu, Kṛishṇa, Hṛishikeśa, Vāsudeo, and Janārdana. Umā, Gaurī, Satī, Çaṇḍī, Subhagā and Śivā were the names by which the female became famous. 24.

एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे ।
चक्षुष्मन्तो नु पश्यन्ति नेतरेऽतद्विदो जनाः ॥
॥ २५ ॥

ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृपत्रयीम् ।
रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥
॥ २६ ॥

स्वरया सह संभूय विरञ्च्योऽण्डमजीजनत् ।
बिभेद भगवान् रुद्रस्तद् गौर्या सह वीर्यवान् ॥
॥ २७ ॥

अण्डमध्ये प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप ।
महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥
॥ २८ ॥

इस प्रकार तीनों ही युवतियां तत्क्षण ही पुरुष स्वरूप को प्राप्त हो गईं। इस रहस्य को ज्ञानरूप नेत्र वाले व्यक्ति ही समझ सकते हैं। अन्य अज्ञानी पुरुष इस रहस्य को नहीं जान सकते ॥ २५ ॥

हे नृप ! महालक्ष्मी ने त्रयीविद्या-स्वरूपिणी सरस्वती को पत्नी के रूप में ब्रह्मा को समर्पित किया। वर प्रदायिनी गौरी को रुद्र की पत्नी तथा लक्ष्मी को वासुदेव की पत्नी के रूप में प्रदान किया ॥ २६ ॥

तदुपरान्त ब्रह्मा ने सरस्वती के साथ संयुक्त होकर ब्रह्माण्ड उत्पन्न किया एवं भगवान् रुद्र ने गौरी के साथ संयुक्त होकर उस ब्रह्माण्ड का भेदन किया ॥ २७ ॥

हे नृप ! उस ब्रह्माण्ड में प्रधान (महत् तत्त्व) आदि कार्य-समूह पञ्च महाभूत के रूप में परिणत होकर सम्पूर्ण स्थावर जंगम जगत् की सृष्टि हुई। ॥ २८ ॥

Thus all the three women attained man's forms. This mystery is intelligible only to those who have the eyes of knowledge. Other ignorant ones cannot fathom this mystery out. 25.

O king, Mahālakshmī gave away Saraswatī—the incarnation of the three-fold knowledge—to Brahmā as wife, the boon-bestowing Gaurī to Rudra and Lakshmī as spouse to Vāsudeo. 26.

Then Brahmā in conjugation with Sarasvatī, produced the egg of the universe and Rudra coupled with Gaurī pierced that universal egg. 27.

O king, in that universe, activated to Pradhān or the elements of Mahat etc., charged the five eternal elements to create animate beings and inanimate objects. 28.

पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः ।
संजहार जगत्सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ।।
॥ २९ ॥

महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीश्वरी ।
निराकारा च साकारा सैव नानाभिधानभृत् ।।
॥ ३० ॥

नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन कुत्रचित् ।
॥ ३१ ॥

।। इति प्राधानिकरहस्यं सम्पूर्णम् ।।

इसके अनन्तर भगवान् विष्णु ने लक्ष्मी के साथ मिलकर उस जगत् का पालन-पोषण किया तथा भगवान् महेश्वर ने गौरी के साथ प्रलयकाल में उस समस्त जगत् का संहार किया ॥ २९ ॥

हे महाराज सुरथ ! महालक्ष्मी ही सर्वसत्व-मयी तथा सम्पूर्ण तत्त्वों की स्वामिनी हैं। वे ही निराकार और साकार रूप में परिणत होकर विभिन्न नामों को धारण करती हैं ॥ ३० ॥

सगुण वाचक सत्य, ज्ञान, चित्, महामाया आदि अनेक नामों से देवी महालक्ष्मी का निरूपण करना चाहिए। केवल महालक्ष्मी इस एक नाम से तथा दूसरे प्रत्यक्षादिक प्रमाणों से उनका निरूपण सम्भव नहीं हो सकता ॥ ३१ ॥

॥ प्राधानिक रहस्य सम्पूर्ण हुआ ॥

Thereafter Vishṇu in conjugation with Lakshmī undertook the care and preservation of that world and lord Maheśwara with Gaurī brought about its destruction at the great deluge. 29.

O king Surath, Mahālakshmī alone is full of all substance and the goddess of all elements. She alone incarnates all names and forms by manifesting herself in various forms, and formlessly. 30.

The goddess has to be expounded by giving her the attributive names of truth, knowledge, consciousness, Mahāmāyā etc. It is not possible to explain her by the lone name of Mahālakshmī or to prove her existence by perception or other epistemological sources. 31.

Here ends the Prādhānik Rahasya.

अथ वैकृतिकरहस्यारम्भः ॥

ऋषिरुवाच

त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधोदिता ।
सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥

॥ १ ॥

वैकृतिक रहस्य

सुमेधा ऋषि प्राधानिक रहस्य में वर्णित त्रिगुणात्मिका शक्तियों के ध्यान और उपासना क्रम का उपदेश करते हुए राजा सुरथ से कहते हैं--रजोगुणयुक्त त्रिगुणात्मिका महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती का परस्पर अभेद होने से उनको त्रिगुणा कहा गया है।

हे राजन्! जो तामसी आदि भेदसे पूर्व में त्रिगुणात्मिका शक्ति बतलायी गई है वही शर्वा, चण्डिका, दुर्गा, भद्रा और भगवती आदि नामों से कही गई हैं॥ १॥

VAIKRATIK RAHASYA

The ṛishi Sumedhā *preaching before king* Surath *the order of meditation and worship of the triple-attributed Energies prescribed in the* Prādhānik–Rahasya, *says* : *The triple-attributed, raj-predominated* Mahālakshmī, Mahākālī *and* Mahā-Saraswatī *are mutually inseparable and hence called* Triguṇā.

The ṛishi (Sumedhā) said :

O King, the goddess with the three attributes, but the preponderance of sattva formerly described as Tāmasī, etc., is also verily called Śarvā, Çaṇḍikā, Durgā, Bhadrā and Bhagawatī. 1.

योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा ।
मधुकैटभनाशार्थं यां तुष्टावाम्बुजासनः ॥

॥ २ ॥

दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जनप्रभा ।
विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥

॥ ३ ॥

स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपापि भूमिप ।
रूपसौभाग्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः ॥

॥ ४ ॥

अर्थात् मूल लक्ष्मी ही इन अनेक नामों से सम्बोधित हुई हैं। भगवान् विष्णु की योगनिद्रा के रूप में बताई गई तमोगुण प्रधान काली हैं, जिनकी स्तुति मधुकैटभ के विनाश के लिए ब्रह्मा ने की है। (महदादि अणुपर्यन्त समस्त जगत् को कवलित करने के कारण ये महाकाली कहलाती हैं।) ॥ २ ॥

Owing to the yogic sleep of Vishṇu, Mahā-kālī has a preponderance of Tamas. She was invoked by Brahmā for killing the demons Madhu and Kaitabha and is known as Mahā-kālī. 2.

इनका स्वरूप इस प्रकार है––दस मुख, दस भुजाएं (अर्थात् पांच दाहिनी तथा पांच बांई ओर) तथा दक्षिण एवं वाम के भेद से पांच-पांच पैर और नील अञ्जन की तरह वे कान्ति युक्त तथा तीस विशाल नेत्रों की माला से सुशोभित हैं। अर्थात् इनके प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं ॥ ३ ॥

She has ten faces, ten hands, and ten legs. She is soot black in colour and has a radiant row of thirty eyes. 3.

हे राजन् ! वे दांतों और दाढ़ों से भयंकर रूप धारण किये हुए भी रूप, सौभाग्य, कान्ति और महा-सम्पत्ति तथा प्रतिष्ठा देने वाली हैं। आशय यह है कि शत्रुओं के लिए भयंकर होते हुए भी भक्तों को सौभाग्य देती हैं ॥ ४ ॥

O king, her teeth aud jaw-teeth keep shining giving her an awe-inspiring form. Even so, she is the abode of beauty, good fortune, splendour and dignity. 4.

खड्गबाणगदाशूलं चक्रपाश (शङ्ख) भुशुण्डिभृत् ।
परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्चयोतद्रुधिरं दधौ ॥
॥ ५ ॥

एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया ।
आराधिता वशीकुर्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥
॥ ६ ॥

सर्वदेवशरीरेभ्यो याविर्भूताऽमितप्रभा ।
त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥
॥ ७ ॥

महाकाली दक्षिण हस्त से लेकर वाम हस्त तक क्रमशः खड्ग, बाण, गदा, शूल, चक्र, पाश (शङ्ख), भुशुण्डि, परिघ, धनुष तथा रक्त-स्राव करते हुए मुण्ड को धारण किए हुए हैं ॥ ५ ॥

In her hands she holds scymitar, arrow, club, mace, discus, conch, gun, chopper, bow and a human head dripping blood. 5.

यही वैष्णवी माया शक्ति हैं तथा ब्रह्मा आदि स्तम्भ पर्यन्त समस्त पदार्थों की लय भूमि होने से महाकाली कहलाती हैं। इनकी प्राप्ति बड़े कष्ट से होती है, किन्तु भक्ति पूर्वक और विधि-विधान से इनकी सेवा और आराधना करने पर उपासक (पूजक) स्थावर जङ्गम विश्व को अपने वश में कर लेता है ॥ ६ ॥

Such is she, Mahākālī, also called Vaishṇavī Māyā, difficult to attain. But on being worshipped, she brings the aminate and inanimate world under the possession of her devotee. 6.

महालक्ष्मी का स्वरूप इस प्रकार है---हे राजन्! समस्त देवताओं के शरीर से अद्भुत स्वरूप वाली जो शक्ति प्रकट हुई, वे ही महालक्ष्मी हैं। वे त्रिगुणात्मिका हैं अर्थात् मूल प्रकृति कहलाती हैं। इन्हीं का नाम महिषमर्दिनी (महिषासुर का वध करने वाली) है ॥ ७ ॥

The energies produced from the bodies of gods were incarnated by Mahālakshmī. She is primordial nature comprising the triple attributes and she is also Mahishāsur-mardinī (killer of the demon Mahish). 7.

श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला ।
रक्तमध्या रक्तपादा नीलजङ्घोरुरुन्मदा ॥
॥ ८ ॥

सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा ।
चित्रानुलेपना कान्तिरूपसौभाग्यशालिनी ॥
॥ ९ ॥

अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ।
आयुधान्यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधःकरक्रमात् ॥
॥ १० ॥

अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ।
चक्रं त्रिशूलं परशुः शङ्खो घण्टा च पाशकः ॥
॥ ११ ॥

महिषमर्दिनी का स्वरूप शिवांश होने के कारण श्वेतमुखवाली, विष्णु के अंश के कारण नीलभुजा और चन्द्रांश के कारण श्वेतस्तनमण्डल वाली, इन्द्रांश के कारण रूप में रक्तवर्ण वाली, ब्रह्मांश के कारण रक्तवर्ण के पैरों वाली, वरुण के अंश के कारण नील जङ्घा और ऊरु वाली, अपराजिता होने के कारण उन्मदा, सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बर-विभूषणा, (विभिन्न वस्त्रों और पुष्पों से विभूषित) और अनेक प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों का लेप करने वाली, अङ्ग-प्रत्यङ्ग में कान्ति धारण करने वाली तथा अतिशय सौभाग्यशालिनी हैं ॥ ८–९ ॥

ये महालक्ष्मी अष्टादश भुजा के रूप में पूज्या हैं (सहस्र शब्द यहां अनन्त वाचक है) तथा ये अनन्त भुजा भी कहलाती हैं। हे राजन् ! इस प्रकार जिन महालक्ष्मी का मैंने स्वरूप बतलाया है, उन सर्वाधिष्ठात्री, सर्वदेवमयी भगवती की जो उपासक पूजा करता है, वह समस्त लोकों और देवों का स्वामी होता है। ये कमल पर विराजमान हैं तथा दाहिने हाथ से लेकर बांये हाथ तक आयुधों से सुशोभित हैं।

Her face is fair, her arms are blue and her round breasts are snow-white, her waist and legs are red, with blue thighs and calves. Being inconquerable, she is rapturous in her strength. Her thighs are extraordinarily beautiful, and covered by a multi-coloured cloth which looks charming. Her annointments are also colourful and she is graced with beauty, splendour and good fortune. 8–9.

She of thousands of arms, is worshipped as having eighteen arms. The weapons which she holds are now described from those in her right hands to those in her left from bottom to top. O king, a devotee who worships the Sarva-devamayī (having all the gods) goddess

शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः ।
अलंकृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥
॥ १२ ॥

सर्वदेवमयीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप ।
पूजयेत्सर्वलोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥
॥ १३ ॥

गौरीदेहात्समुद्भूता या सत्वैकगुणाश्रया ।
साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिवर्हिणी ॥
॥ १४ ॥

दधौ चाष्टभुजा बाणमुसले शूलचक्रभृत् ।
शङ्खं घण्टां लाङ्गलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥
॥ १५ ॥

इनके आयुध इस प्रकार हैं––अक्षमाला, कमल, बाण, असि (तलवार) कुलिश (वज्र), गदा और चक्र, त्रिशूल, परशु (फरसा)। ये आयुध दाहिने हाथ के नीचे से आरम्भ होकर ऊपर तक अवस्थित हैं। शङ्ख, घण्टा, पाश, शक्ति, दण्ड, चर्म, धनुष, पान पात्र और कमण्डलु, ये नौ आयुध बांए हाथ के ऊपर से आरम्भ होकर नीचे तक अवस्थित हैं।

॥ १०–१३ ॥

Mahālakshmī becomes the master of all the world and all the gods. She is seated on a lotus and has the following weapons : Akshamālā (garland of eyes), lotus, arrow, sword, thunder-bolt, club, discus, trident, axe (in her right hands) and conch, bell, noose, Śakti, staff, hide, bow, goblet and mendicant's pot (in her left hands). 10–13.

महासरस्वती का ध्यान—शुम्भासुर का वध करने वाली, जो मैंने पूर्व में बतलाया है, वे ही साक्षात् सरस्वती हैं। वे सत्त्वगुणमयी और गौरी की देह से उत्पन्न हुई हैं। इनके आयुध अग्रांकित हैं। हे राजन्! पूर्वोक्त सरस्वती अष्ट-भुजा हैं। इनके दाहिने हाथ में बाण, मूसल तथा शूल और चक्र हैं एवं बांये हाथ में शङ्ख, घण्टा, लांगल (हल), कार्मुक (धनुष) धारण किए हुएहैं ॥ १४–१५ ॥

Dependent only upon the attribute of Sattva having emanated from the body of Gaurī and who has killed the demon Śumbha, she is Saraswatī manifest. O lord of the earth, she has eight arms and she holds in her hands arrow, pounder, mace, discus, conch, bell, plough and bow respectively. 14–15.

एषा संपूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति ।
निशुम्भमथिनी देवी शुम्भासुरनिवर्हिणी ॥
॥ १६ ॥

इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ।
उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥
॥ १७ ॥

महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सरस्वती ।
दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥
॥ १८ ॥

सरस्वती की उपासना का फल––सरस्वती देवी साधकों द्वारा भक्तिपूर्वक समर्पित भाव से पूजा करने पर साधकों को त्रिकालज्ञ होने की शक्ति देती हैं, अर्थात् त्रिकालदर्शी बनाती हैं। ये ही निशुम्भ तथा शुम्भ की विध्वंसिनी हैं ॥ १६ ॥

This goddess Saraswatı who is the vanquisher of Niśumbha and the destroyer of Śumbhāsur, when worshipped devotedly, bestows omniscience, 16.

हे राजन् ! इस प्रकार मैंने तुम्हें पूर्वोक्त तीनों मूर्तियों का स्वरूप बतलाया है, इसके उपरान्त अब जगज्जननी महालक्ष्मी, महाकाली एवं महासरस्वती इन तीनों की पृथक्-पृथक् उपासना सुनो ॥ १७ ॥

O king, thus the forms of the goddess have here been narrated and now listen to the methods of worship of the world-mother in her separate forms. 17.

आवरण देवों के स्थान––जब चर्तुभुजा महालक्ष्मी का पूजन किया जाय तब मध्य में उनकी पूजा करके दाहिनी और बांई ओर क्रमशः चर्तुभुजा महाकाली एवं चतुर्भुजा महासरस्वती का पूजन करना चाहिए। इनके पृष्ठ भाग में तीनों मिथुनों का पूजन करना चाहिए ॥ १८ ॥

When the worship of Mahālakshmi has to be performed, her idol has to be installed in the middle and Mahākālī and Mahāsaraswatī have to be placed towards its right and left sides respectively. 18.

विरञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे ।
वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥

॥ १९ ॥

अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या दशानना ।
दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीति समर्चयेत् ॥

॥ २० ॥

अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ।
दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥

॥ २१ ॥

मध्य में अवस्थित महालक्ष्मी के पृष्ठ भाग में सरस्वती एवं ब्रह्मा का पूजन करना चाहिए। महाकाली के पृष्ठ भाग में गौरी के साथ रुद्र की पूजा एवं महासरस्वती के पृष्ठ भाग में लक्ष्मी सहित विष्णु की पूजा करनी चाहिए। महालक्ष्मी आदि तीनों देवियों के सामने अग्रिम श्लोक में वर्णित तीन देवियों का पूजन करना चाहिए ॥ १९ ॥

मध्य में अवस्थित महालक्ष्मी के सामने अष्टादश भुजा लक्ष्मी का पूजन करना चाहिए तथा इनकी बांई ओर अवस्थित महाकाली के सामने दशानना अर्थात् प्रथम चरित्र की अधिष्ठात्री का पूजन करना चाहिए एवं इनके दाहिनी ओर अवस्थित महासरस्वती के सामने उत्तर चरित्र की अधिष्ठात्री अष्टभुजा सरस्वती का पूजन करना चाहिए ॥ २० ॥

त्रिशक्तियों की स्वतन्त्र पूजा का प्रकार—

यदि मध्य में अष्टादशभुजा की पूजा की जाए तो उनकी दांयी ओर दशानना तथा बांयी ओर अष्टभुजा की, इसी तरह यदि मध्य में दशानना की पूजा की जाए तो दायीं ओर अष्टादश भुजा एवं बायीं ओर अष्टभुजा एवं यदि मध्य में अष्टभुजा की पूजा की जावे तो दायें अष्टादश भुजा एवं बायें

Just in Mahālakshmī's rear, Saraswatī and Brahmā should be worshipped. Towards the back of Mahākālī, Rudra with Gaurī and back of Mahāsaraswatī, Vishṇu with Lakshmī have to be worshipped. 19.

Just in front of the centrally placed Mahālakshmī, the eighteen-armed Mahālakshmī should be placed and worshipped and in front of Mahālakshmī placed at her right, the ten-faced Mahākālī has to be worshipped. At the right of Mahāsaraswatī, the eight-armed Saraswatī should be worshipped. 20.

O King, if the eighteen-armed goddess is to be worshipped, she should be placed in the middle and on her right and left respectively the ten-faced and the eight-armed goddesses should be installed. However, for quelling

कालमृत्यू च संपूज्यौ सर्वारिष्टप्रशान्तये ।
यदा चाष्टभुजा पूज्या शुम्भासुरनिवर्हिणी ॥
॥ २२ ॥

नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तथा रुद्रविनायकौ ।
नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥
॥ २३ ॥

अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः ।
अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥
॥ २४ ॥

महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती ।
ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥
॥ २५ ॥

दशानना की पूजा करने का नियम है । किन्तु मध्य में तीनों शक्तियों में से किसी की भी पूजा करने पर अरिष्ट शान्ति के लिए उनके दाहिनी ओर काल और बायीं ओर मृत्यु की पूजा करना अनिवार्य है ॥ २१½ ॥

पूर्वोक्त शक्तियों में यदि शुम्भ का संहार करने वाली अष्टभुजा सरस्वती की पूजा की जाए तो ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि नवशक्तियों तथा दक्षिणोत्तर में क्रमशः रुद्र और विनायक का पूजन करना भी आवश्यक है ॥ २२½ ॥

नाम मन्त्रों के द्वारा तीनों मुख्य शक्तियों की स्तुति किस प्रकार की जाए इसका निर्णय निम्न-लिखित है :—**'नमो देव्यै महादेव्यै'** इस स्तोत्र से महालक्ष्मी की स्तुति करनी चाहिए। किन्तु सर्व-प्रथम पूजा के शुभारम्भ के अवसर पर तीनों चरित्रों की स्तुतियों का पाठ किया जाना चाहिए ॥ २३½ ॥

तीनों मूल शक्तियों की पूजा यदि पृथक्-पृथक् की जाए तो वहां उनके स्वयं के चरित्र की स्तुति का ही प्रयोग किया जाना चाहिए ।

तीनों शक्तियों में मध्यम चरित्र की अधिष्ठात्री देवता महालक्ष्मी ही मानी जाती हैं । अतएव

misfortunes of all kinds, Kāla and Mṛityu have also to be worshipped on the right and the left sides respectively. 21½.

If the Śumbha-slayer eight-armed Sara-swatī has to be worshipped, all the nine Energies (Brāhmī, Māheshwarī, Kaumārī, Vaishṇavī, Vārāhī, Nārsinghī, Aindrī, Śivdūtī, Çāmuṇḍā) with Rudra on the right side and Vināyak on the left should also be worshipped. 22½.

For worshipping any of the three main incarnations, the hymn "Namo Devyaih" etc. should be recited in honour of goddess Mahā-lakshmī. But before the worship proper, the eulogies, in the form of hymns and mantras, to the three incarnations should be recited. 23½.

The utmost worthy of worship is the eighteen-armed Mahishāsur-slayer goddess

महिषान्तकरी येन पूजिता स जगत्प्रभुः ।
पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ॥

॥ २६ ॥

अर्घ्यादिभिरलंकारैर्गन्धपुष्पैस्तथाक्षतैः ।
धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः ॥

॥ २७ ॥

रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप ।
प्रणामाचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥

॥ २८ ॥

एकमात्र इनकी पूजा करने पर अन्य दोनों शक्तियां स्वतः ही पूजित हो जाती हैं। फलतः अष्टादशभुजा महिषमर्दिनी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। क्योंकि वे ही महाकाली महासरस्वती तथा पुण्य-पापों की स्वामिनी एवं समस्त लोकों की महारानी और नियामिका हैं॥ २४–२५½॥

जो भाग्यशाली साधक महिषमर्दिनी महालक्ष्मी की भक्ति पूर्वक आराधना करता है, वही संसार का स्वामी है दूसरा कोई नहीं। अतः समूचे ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करने वाली एवं पोषण करने वाली भक्तवत्सला चण्डिका की भली भांति आराधना करनी चाहिए॥ २६॥

पूजन सामग्री–अर्घ्य अर्थात् पाद्य, मधुपर्क, आचमनीय तथा चन्दन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप तथा अनेक प्रकार के विशिष्ट नैवेद्यों से पूजा करनी चाहिए॥२७॥

इसके अतिरिक्त, भक्ति भावना के साथ साधक को रुधिर मिश्रित बलि अन्न, मांस तथा आसव और चन्दन आदि से सुगन्धित आचमन एवं कर्पूर युक्त ताम्बूल (पान) से भगवती का अर्चन करना चाहिए। ॥ २८½॥

Mahālakshmī as she is verily called Mahākālī and Mahāsaraswatī. She is the ultimate goddess of all sins and virtues as also of all the worlds. 24–25½.

One who has worshipped with devotion the Mahisha-slayer Mahālakshmī, shall become the master of the world. Therefore, the creator and the preserver of the universe, goddess Caṇḍikā, who is full of affection for her devotees, is fully worthy of worship. 26.

With libations etc., with ornaments, scent, flowers, rice, incense, lamp and with oblations made of various edibles, the worship has to be performed. 27.

Also with Bali dripping blood, flesh and wine, O King, and with prostration and ācaman (sipping water from the palm) with sandal paste and scents, with camphor and betel leaf, the worship has to be performed with proper devotion. 28½.

सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः ।
वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥
॥ २९ ॥

पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया ।
दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥
॥ ३० ॥

वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् ।
कुर्याच्च स्तवनं धीमांस्तस्या एकाग्रमानसः ॥
॥ ३१ ॥

ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ।
एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥
॥ ३२ ॥

देवी के सम्मुख बायीं तरफ उनका सायुज्य प्राप्त करने वाले महिष नामक असुर की पूजा करनी चाहिए ॥ २९½ ॥

देवी के दाहिनी ओर उनके वाहन सिंह का, जो विष्णु के चराचर स्थित विराट रूप में, अष्ट ऐश्वर्य से सम्पन्न है, पूजा करनी चाहिए ।

॥ ३०½ ॥

अङ्ग देवताओं की पूजा के बाद एकाग्रचित्त और करबद्ध होकर तीनों चरित्रों का पाठ स्वयं की तथा अन्य लोगों की अभीष्ट सिद्धि के लिए करना चाहिए ॥ ३१½ ॥

सप्तशती के तीनों चरित्रों के पाठ में पूर्व निर्धारित नियम और विधि-विधान का पालन अनिवार्य माना गया है । तदनुसार यदि किसी एक चरित्र का पाठ करना हो तो केवल मध्यम चरित्र का ही पाठ करना चाहिए न कि प्रथम या तृतीय चरित्र में से किसी एक या दोनों का पाठ । इस नियम का उल्लङ्घन पाठ को निष्फल और विघ्न को आमन्त्रित करता है ॥ ३२½ ॥

On the left side before the goddess should be placed for worship the severed head of the great Asur Mahish who has attained complete union with her. 29½.

On her right in front, the goddess' mount, the lion should be worshipped, who is the symbol of supreme religon and the upholder of all things animate and inanimate. 30½.

Thereafter the intelligent devotee should worship the goddess with concentrated mind and with folded hands, and chant the hymns to the incarnations of the goddess. 31½.

If one wants to worship only one of the incarnations, he may do so unto the middle one and not the first and the third incarnation, separately or jointly. The recitation of half of the eulogy is prohibited, as such a recitation will not bear fruits. 32½.

चरितार्धं तु न जपेज्जपन्छिद्रमवाप्नुयात् ।
प्रदक्षिणानमस्कारान् कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥
॥ ३३ ॥

क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः ।
प्रतिश्लोकं च जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा ॥
॥ ३४ ॥

जुहुयात्स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः ।
भूयो नामपदैर्देवीं पूजयेत्सुसमाहितः ॥
॥ ३५ ॥

प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्रणम्यारोप्य चात्मनि ।
सुचिरं भावयेदीशां चण्डिकां तन्मयो भवेत् ॥
॥ ३६ ॥

साधक नतमस्तक होकर तथा श्रद्धा से भगवती के समक्ष हाथ जोड़कर बारम्बार क्षमा करने की प्रार्थना करते हुए, प्रदक्षिणा करके प्रणाम करे।

॥ ३३½ ॥

श्लोकों के मन्त्र विभाग के अनुसार, सप्तशती पाठ की समाप्ति होने पर, एक-एक मन्त्र से तिल और घी मिलाकर पायस (खीर) से हवन करना चाहिए। यदि यह सब करने में किसी कारण सक्षम न हो तो महालक्ष्मी के **'देव्या यया ततमिदं––'** **'त्वं स्वाहा त्वं स्वधा––'** **'देवि प्रपन्नार्तिहरे––'** **'नमो देव्यै महादेव्यै––'** इस देवी सूक्त से भी हवन कर देने पर सम्पूर्ण पाठ के हवन की पूर्ति हो जाती है।

॥ ३४½ ॥

होम के बाद नाम मन्त्रों से महालक्ष्मी का एकाग्रमन होकर पुनः पूजन करे। तथा विनम्र भाव से पुनः प्रणाम करके देवी को अन्तःप्रतिष्ठित कर एक निश्चित समय तक भगवती चण्डिका का चिन्तन करते हुए तन्मय हो जाए ॥ ३५–३६ ॥

The devotee with bowed head and shedding all lethargy, should fold his hands before the goddess and repeatedly asking her forgiveness, go round the deity. 33½.

Each of the couplets of the Seven-hundred versed Eulogy is a mantra and on its completion, he should make an offering of Khīra (rice pudding) mixed with til and ghee.. Otherwise he may make his offerings with the mantras of the Devī Sūkta. 34½.

After the Homa, he should again worship Mahālakhsmī by reciting her nāma-mantras with a concentrated mind. Then he should deferentially bow before the goddess with his limbs and mind under control and installing her in his heart should meditate long upon her virtue. The meditation has to be so intense that he attains oneness with the goddess.

35–36.

एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ।
भुक्त्वा कामान् यथाकामं देवी सायुज्यमाप्नुयात् ।।
॥ ३७ ॥

यो न पूजयते नित्यं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ।
भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत्परमेश्वरी ।।
॥ ३८ ॥

तस्मात्पूजय भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् ।
यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ।।
॥ ३९ ॥

।। इति वैकृतिकं रहस्यं सम्पूर्णम् ।।

जो साधक पूर्वोक्त नियमों का पालन करते हुए नित्यप्रति परमेश्वरी का पूजन करता है वह अपनी मनोभिलाषाओं का उपभोग कर देवी के स्वरूप में मिल जाता है ॥ ३७ ॥

हे राजन् ! सांसारिक भोग एवं मोक्ष की अभिलाषा रखने वाले जो लोग भक्तवत्सल भगवती चण्डिका की आराधना नहीं करते और उनसे विमुख हो जाते हैं वे सारे जीवन अन्तर्व्यथा से पीड़ित रहते हैं ॥ ३८ ॥

अतएव हे राजन् ! सुरथ ! समस्त लोकों की एकमात्र महेश्वरी भगवती चण्डिका की विधि-विधान के अनुसार उपासना करो । ऐसा करने पर लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों का उपभोग प्राप्त करोगे ॥ ३९ ॥

॥ वैकृतिक रहस्य सम्पूर्ण हुआ ॥

Thus a devotee who devotedly worships goddess Caṇḍikā everyday, attains all his heart's desires and becomes one with the goddess. 37.

One who does not worship the affectionately disposed Caṇḍikā daily, all his virtues come to naught and he suffers untold misery. 38.

Therefore, O King, you worship the one and only ultimate goddess of the universe with the method given in the scriptures and attain all happiness. 39.

Here ends the Vaikṛatik Rahasya.

अथ मूर्तिरहस्यारम्भः

ऋषिरुवाच

नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा ।
सा स्तुता पूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥

॥ १ ॥

मूर्ति रहस्य

राजा सुरथ को मूल देवी की उपासना बताकर सुमेधा ऋषि षडङ्ग देवियों के स्वरूप और उनकी उपासना तथा उसका फल बतला रहे हैं।

हे राजन् ! कलि एवं द्वापर युग के सन्धिकाल में नन्द से उत्पन्न होकर नन्दा नाम की भगवती अवतरित होंगी, जो भक्तिपूर्वक अर्चना एवं स्तुति के द्वारा पूजित होने पर तीनों लोकों को साधक के अधीन बना देती हैं ॥ १ ॥

MŪRTI RAHASYA

Apprising king Surath *of the goddess' worship,* Sumedhā ṛishi *teaches him the forms and the fruits of such worship in her six-fold forms.*

The ṛishi said :

Born of Nanda during the confluence of the Dwāpar and the Kali eras, O King, goddess Nandā when prayed and worshipped with devotion, can bring the three worlds under the possession of her devotees. 1.

कनकोत्तमकान्तिः सा सुकान्तिकनकाम्बरा ।
देवी कनकवर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ॥

॥ २ ॥

कमलाङ्कुशपाशाब्जैरलङ्कृतचतुर्भुजा ।
इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्रीरुक्माम्बुजासना ॥

॥ ३ ॥

या रक्तदन्तिका नाम देवी प्रोक्ता मयानघ ।
तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम् ॥

॥ ४ ॥

रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा ।
रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा ॥

॥ ५ ॥

भगवती नन्दा का स्वरूप—भगवती नन्दा स्वर्ण सदृश देहकान्ति वाली, स्वर्ण के समान ही कान्ति-युक्त वस्त्र धारण किए हुए, प्रकाशस्वरूपिणी एवं स्वर्णाभूषण से अलंकृत हैं ॥ २ ॥

The beauty of her body is as resplendent as gold and she dons clothes of golden colour, having the lustre of beaten gold. She also adorns herself with splendid gold ornaments. 2.

भगवती नन्दा के आयुधों के नाम—चतुर्भुजा नन्दा अपनी चारों भुजाओं में कमल, अंकुश, पाश एवं शङ्ख धारण किए हुए हैं। ये भगवती इन्दिरा, कमला, लक्ष्मी, श्री तथा रुक्माम्बुजासना (स्वर्णमय कमलासन पर अधिष्ठित) आदि नामों से सुप्रसिद्ध हैं। (इनका प्रादुर्भाव शिशिर ऋतु के नवरात्र में हुआ है) ॥ ३ ॥

In her four hands she holds lotus, spear, noose and conch. She is called by the names of Indirā, Kamlā, Lakshmī, Śrī and Rukmāmbujā (seated on a lotus shaped throne of gold). 3.

हे निष्पाप नृप ! पूर्व में मैंने रक्तदन्तिका नाम से जिस देवी का वर्णन किया है, अब उनके समस्त भयों के विनाशक स्वरूप का परिचय देता हूं, तुम सुनो ॥ ४ ॥

O sinless king, formerly introduced by me as Raktadantikā, her characteristics will I now narrate, which please listen to. 4.

रक्तदन्तिका का स्वरूप—रक्तदन्तिका रक्तवर्ण के (लाल रङ्ग के) वस्त्र धारण करने वाली, रक्तवर्ण के शरीरवाली एवं सर्वाङ्ग में रक्ताभूषणों से युक्त

Raktadantikā wears clothes of crimson colour, her body too is red and the ornaments that she puts on are also red in colour. Her

रक्ततीक्ष्णनखा रक्तदशना रक्तदन्तिका ।
पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम् ॥
॥ ६ ॥

वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी ।
दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ॥
॥ ७ ॥

कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी ।
भक्तान्संपाययेद्देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ ॥
॥ ८ ॥

हैं। वे रक्तवर्ण के ही आयुधों से सुसज्जित, रक्तवर्ण के नेत्रों वाली, रक्तवर्ण की ही केश-राशि वाली, रक्तवर्ण के तीक्ष्ण नखों एवं दांतों वाली हैं। इसीलिए अत्यन्त भीषणस्वरूपवाली ये देवी रक्तदन्तिका नाम से प्रसिद्ध हैं। जिस प्रकार स्त्री अपने पति के प्रति अनुरक्त होती है, उसी प्रकार देवी अपने भक्त पर मातृतुल्य स्नेह रखते हुए अनुरक्त रहती हैं।

॥ ५–६ ॥

weapons are red, her eyes are red and her hair also is of red colour and she has an awe-inspiring bearing. Raktadantikā's sharp nails and teeth are red. Just as a wife dotes on her husband, the goddess loves likewise her devotees with a motherly affection. 5–6.

देवी रक्तदन्तिका पृथ्वी के समान विशाल आकार वाली हैं। उनके स्तन सुमेरु पर्वत के सदृश हैं। वे दीर्घाकार लम्बे, चौड़े, अत्यन्त स्थूल एवं अतीव मनोहर हैं। कठोर होते हुए भी अत्यन्त सुन्दर हैं एवं समस्त आनन्दों के समुद्र हैं। समस्त अभिलाषाओं, कामनाओं को पूर्ण करने वाले इन दोनों स्तनों का देवी अपने भक्तों को पान कराती हैं। तात्पर्य यह कि देवी मातृतुल्य स्नेह से अपने भक्तों की समस्त कामनाओं की पूर्ति करती हैं।

॥ ७–८ ॥

The dimensions of the goddess' figure are as large as the earth. Her breasts are like the mount Sumer; large, long, plump, and very charming. They are hard and firm but beautiful; the oceans of all happiness. These breasts fulfill all desires and the goddess feeds them to her devotees like a loving mother. 7–8.

खड्गं पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च बिभर्ति सा ।
आख्याता रक्तचामुण्डा देवी योगीश्वरीति च ॥
॥ ९ ॥

अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।
इमां यः पूजयेद् भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ॥
॥ १० ॥

अधीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुःस्तवम् ।
तं सा परिचरेद्देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥
॥ ११ ॥

इनके आयुध—चतुर्भुजा देवी रक्तदन्तिका ऊपरी दाहिनी भुजा में खड्ग, ऊपरी बांई भुजा में पान पात्र तथा निचली दाहिनी भुजा में मुसल और निचली बांई भुजा में हल धारण करती हैं। इन्हें रक्तचामुण्डा एवं योगेश्वरी देवी के नाम से सम्बोधित किया गया है ॥ ९ ॥

The four-handed goddess Raktaçaṇḍikā holds scymitar, drinking bowl, club and plough. She has also been called Raktaçamuṇḍā and Yogeśwarī by the devotees. 9.

इनकी पूजा का फल—इन देवी रक्तदन्तिका के द्वारा सम्पूर्ण स्थावर जङ्गम विश्व व्याप्त है, अतएव जो साधक इनकी पूजा करता है, वह चराचर जगत् में व्याप्त हो जाता है अर्थात् यश प्राप्ति एवं ब्रह्म साक्षात्कार के द्वारा उनके समान बन जाता है ॥ १० ॥

The goddess pervades the entire world of animate and inanimate objects. So, whosoever worships her himself covers the animate and inanimate world with his glory. 10.

देवी की स्तुति का फल एवं वात्सल्य का निदर्शन—जो साधक देवी रक्तदन्तिका के इस स्वरूप की स्तुति नित्य करता है, उस साधक की देवी स्नेह पूर्वक उसी प्रकार सेवा करती हुई उसकी रक्षा करती हैं, जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री अपने प्रिय पति की सेवा-परिचर्या करती हैं ॥ ११ ॥

The devotee who everyday worships goddess Raktadantikā's form is affectionately served and protected by her as a devoted wife waiting upon her husband's needs and desires. 11.

शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना ।
गम्भीरनाभिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी ॥
॥ १२ ॥

सुकर्कशसमोतुङ्गवृत्तपीनघनस्तनी ।
मुष्टिं शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥
॥ १३ ॥

पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं शाकसंचयम् ।
काम्यानन्तरसैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युज्वरापहम् ॥
॥ १४ ॥

कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति बिभ्रती परमेश्वरी ।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्त्तिता ॥
॥ १५ ॥

देवी शाकम्भरी नीलवर्णा हैं अर्थात् वे नीले रंग की देहकान्ति वाली हैं। उनके नेत्र नीलकमल के सदृश हैं, उनकी नाभि गम्भीर (गहरी) है एवं त्रिवली से विभूषित उदर (मध्य भाग) सूक्ष्म है।
॥ १२ ॥

The form of Goddess Śakambharī is of an indigo colour. Her eyes are like blue lotuses; her navel is deep and her belly with its three skinfolds is subtle. 12.

उनके स्तन अत्यन्त कठोर, उठे हुए, वर्तुलाकार, स्थूल तथा एक दूसरे से सटे हुए हैं। वे कमल में निवास करने वाली हैं तथा उनके हाथों में बाणों से परिपूर्ण मुष्टि, कमल, शाकसमूह एवं प्रकाशमान धनुष सुशोभित हैं। वह शाकसमूह अनेकानेक अभीष्ट रसों से युक्त एवं क्षुधा, तृषा और मृत्यु के भय को नाश करने वाला तथा पुष्प, पल्लव, मूल, फलों आदि से युक्त है॥ १३-१४॥

Her breasts are hard, high, rotund, large and adjacent together. She resides in a lotus and in her hands she holds fistfuls of arrows, lotus, vegetables and scintilating bow. Her bunch of vegetables, consisting of flowers, tender leaves, roots and fruit, is full of various desirable juices and is the destroyer of hunger, thirst and the fear of death. 13–14.

इनके अन्य नाम—वे शाकम्भरी देवी शताक्षी (सौ नेत्रों वाली), दुर्गा, विशोका (शोक का नाश करने वाली), दुष्टों का दमन करने के कारण दुष्ट-दमनी, पाप कर्मों एवं विपत्तियों का शमन करने

The goddess is also known as Śatākshi (having hundred eyes), Durgā, Viśokā (killer

विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम् ।
उमा गौरी सती चण्डी कालिका सापि पार्वती ॥
॥ १६ ॥

शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायन् जपन्संपूजयन्नमन् ।
अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानामृतं फलम् ॥
॥ १७ ॥

भीमापि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशनभासुरा ।
विशाललोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा ॥
॥ १८ ॥

वाली, शिव की अर्द्धाङ्गिनी होने के कारण उमा, गौर वर्णा होने के कारण गौरी, पातिव्रत्य का पालन करने के कारण सती, अत्यन्त क्रोधयुक्त कर्म करने के कारण चण्डी एवं समस्त विश्व को आत्मसात् करने के कारण और कृष्णवर्णा होने के कारण पार्वती तथा कालिका कहलाती हैं ॥ १५–१६ ॥

शाकम्भरी की उपासना का फल—शाकम्भरी देवी की उपासना, उनका ध्यान, उनके मन्त्र का जप एवं कल्पोक्त विधान के अनुसार उनका पूजन एवं नमन करने पर साधक शीघ्र ही अन्न, पान एवं अमृतरूप फल का अक्षयरूप से उपभोग करता है। तात्पर्य यह कि भोग एवं मोक्ष दोनों को ही वह प्राप्त कर लेता है ॥ १७ ॥

पांचवीं अङ्गदेवी भीमा भी नीले रङ्ग के वर्ण-वाली हैं तथा देदीप्यमान दाढ़ों और दांतों से युक्त सुन्दरमुख वाली हैं। वे दीर्घ आयतनेत्रों वाली, स्त्री का स्वरूप धारण करने वाली एवं सुडौल और पुष्ट स्तनों वाली हैं। इसी रूप में देवी भीमा का ध्यान करना चाहिये ॥ १८ ॥

of sorrows). Dushtadamanī (vanquisher of evil doers), the healer of sins and misery, Umā. Gaurī, Satī, Caṇḍī, Kālikā and Pārvatī. 15–16.

The worship, meditation, adoration and deferential bowings before goddess Śākambharī very soon brings to the devotee prosperity in the form of foods and drinks and also the immortal fruit (of deliverance) for all times. 17.

The colour of goddess Bhīmā is also blue. Her teeth and jaw-teeth are lustrous, with a beautiful mouth. Her eyes are large and she has a woman's form with round and firm breasts. 18.

चन्द्रहासं च डमरुं पानपात्रं च बिभ्रती ।
एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥
॥ १९ ॥

तेजोमण्डलदुर्दर्शा भ्रामरी चित्रकान्तिभृत् ।
चित्रानुलेपना देवी चित्राभरणभूषिता ॥
॥ २० ॥

चित्रभ्रमरपाणिः सा महामारीति गीयते ।
इत्येता मूर्त्तयो देव्या याः ख्याता वसुधाधिप ॥
॥ २१ ॥

देवी भीमा के अस्त्र एवं उनके नाम—वे अपनी दाहिनी ऊपरी भुजा में खड्ग निचली दाहिनी भुजा में डमरु तथा ऊपरी बांई भुजा में चर्म और निचली बांई भुजा में कपाल एवं चषक धारण करती हैं। इन आयुधों को धारण करने वाली वे एकवीरा, काल-रात्रि एवं कामदा (समस्त अभीष्टों की पूर्ति करने वाली) कहलाती हैं ॥ १९ ॥

षष्ठाङ्ग देवी भ्रामरी—तेजस्वी मुखमण्डल के कारण नेत्रों को चकाचौंध करने वाली अद्भुत कान्ति वाली, विभिन्न प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों का अनुलेपन करने वाली, अद्भुत आभूषणों से सुशोभित हैं। विभिन्न वर्णयुक्त जीव रूपी भ्रमर (भौंरा) को हाथ में धारण करने वाली इस रूप से सुशोभित देवी महामारी नाम से पूज्या हैं।

आख्यान का उपसंहार—हे सुरथ ! इस प्रकार शास्त्रों में जगन्माता भगवती चण्डिका की इन मूर्तियों का वर्णन किया है। जो स्तुति करने पर कामधेनु के सदृश साधक की समस्त अभिलाषाओं की पूर्ति करती हैं।

She holds a scymitar named Çandrahāsa, ḍamarū (a leather covered percussion musical instrument narrow in the middle and wide at the tops), skull and drinking cup in her hands. She is called Ekvīrā, Kālarātri and Kāmadā (the fulfiller of desires). 19.

The goddess Bhrāmarī's beauty is multi-coloured, and her glowing aura is invincible. Her annointments also are of various colours and her ornaments are various and strange. Eulogies are sung to her glory as Çitrabhramar-Pāṇi (or holding in her hand [pāṇi] various bhramaras i.e. souls) and Mahāmārī. O King, these various images of the world-mother goddess Çaṇḍikā have been described. When

जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्त्तिताः कामधेनवः ।
इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया ॥
॥ २२ ॥

आख्यानं दिव्यमूर्तीनामभीष्टफलदायकम् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन देवीं जप निरन्तरम् ॥
॥ २३ ॥

सप्तजन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्महत्यासमैरपि ।
पाठमात्रेण मन्त्राणां मुच्यते सर्वकिल्विषैः ॥
॥ २४ ॥

देव्या ध्यानं मया ख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं महत् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वकामफलप्रदम् ॥
॥ २५ ॥

॥ इति मूर्त्तिरहस्यम् सम्पूर्णम् ॥

षडङ्ग देवियों की गोपनीयता—दिव्य मूर्तियों का षडङ्ग देवी के रूप में यह आख्यान अत्यन्त गोपनीय रहस्य है, अतः तुम्हें अन्य किसी को यह नहीं बताना चाहिए ॥ २०–२२ ॥

दिव्य मूर्तियों का यह आख्यान सभी अभीष्ट फलों को देने वाला है, इसलिए सब प्रकार से निरन्तर अभीष्ट देने वाली इस देवी के आराधन में तत्पर हो ॥ २३ ॥

व्यक्ति सप्तशती मन्त्रों के पाठ मात्र से सात जन्मों में सञ्चित ब्रह्महत्या के समान घोर पाप समूहों से भी मुक्त हो जाता है ॥ २४ ॥

हे राजन् ! मैंने अत्यन्त गोपनीय अर्थात् गुप्त से भी गुप्त देवी का ध्यान तुम्हें बतलाया है जो समस्त कामनाओं एवं अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाला है ॥ २५ ॥

॥ मूर्तिरहस्य सम्पूर्ण हुआ ॥

sung devotionally she fulfills all desires like a Kāmadhenu. It is the most secret mystery and you should not disclose itto any one. 20–22.

The legend of these divine forms is the bestower of the fruits of all the heart's desires. Therefore you should continually keep yourself in adoration by repeating her name. 23.

The recitation of these hymns gives riddance from all sins—accumulated from seven previous births—even the sin of a brāhmaṇa's murder. 24.

I have revealed before you by all efforts, the most secret of the secrets of the goddess' meditation which fulfills all wishes and desires. 25.

Here ends the Mūrti Rahasya.

❀ अथ चण्डीपूजा पद्धतिः ❀

तत्र श्रीमान् साधकः प्राप्तनवार्णदीक्षः[१] सप्तशतीदीक्षितो वा गुरुदर्शितक्रियाकलापः[२] सिद्धक्षेत्रे गिरौ रम्ये अथवा क्वचित् पुण्यभूमौ वातातपसहां कुटीं निर्माय साधयेत् । अथ श्रीमान् साधको ब्राह्मे[३] मुहूर्ते समुत्थाय कृतावश्यकः प्रक्षालितकरचरणः शुद्धः शुद्धाम्बरधरः शुद्धासने

---

१. प्राप्तनवार्णदीक्ष इति । दीक्षाग्रहणविधिरन्यत्रोक्तः । दीक्षाया आवश्यकत्वं मन्त्रमुक्तावल्याम्—जपो देवार्चनविधिः कार्यो दीक्षान्वितैर्नरैरिति । यामलेऽपि-उपचारसहस्रं तु योजितं भक्तिसंयुतम् । अदीक्षितार्चनं देवा न गृह्णन्ति कदाचनेत्यादि । अन्यत्रापि । दीक्षामूलं जपं सर्वं दीक्षामूलं परंतपः । देवि दीक्षाविहीनस्य न सिद्धिर्न च सद्गतिरित्यादि । गुरूपदेशं विना मन्त्रग्रहणे दोषः क्रियासारे-कल्पे दृष्ट्वा तु यो मन्त्रं जपते तु विमूढ़धीः । मूलनाशो भवेत्तस्य फलमस्य सुदूरत इति ।

२. गुरूदर्शितेति । विशुद्धमातापितृको जितेन्द्रियः सर्वागमज्ञः परदुःखकातरः । यथार्थवाग् वेदविदङ्गपारगः शान्तः कुलीनो गुरुरीरितो द्विज इत्यादि ।

३. ब्राह्म इति । द्वौ दण्डौ रात्रिशेषे तु ब्राह्मं मुहूर्तकं विदुरिति ।

समुपविश्य ब्रह्मरन्ध्रगतशुक्लसहस्रारमध्यकर्णिकास्थं स्फटिकाभं ध्यानमुद्राधरं वराभयकरं द्विभुजं शुक्लाम्बरालेपविभूषणं श्रीगुरुं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य। ॐ अखण्डमण्डलाकारं[1] ॥ १ ॥ अज्ञानतिमिरान्धस्य[2] ॥ गुरुर्ब्रह्मा[3]। इत्यादित्रिभिर्मन्त्रैः स्तुत्वा दण्डवत्प्रणम्य तदाज्ञां गृहीत्वा हृत्पद्मे गुरूपदिष्टरूपामिष्टदेवतां ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य ऋष्यादिपूर्वकं दशधा जपं विधाय श्रीदेव्यै समर्प्य सर्वस्वरूपे इत्यादि मन्त्रैः स्तुत्वा प्राणायामं[4] विधाय बद्धाञ्जलिः प्रार्थ्य भूमिं प्रणम्य शौचाद्यावश्यकं निर्वर्त्य नद्यादौ गत्वा विहितदिने[5] विहितकाष्ठेन ॐ क्लीं कामदेव-

---

१–३. अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्। तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया। चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुरेव महेश्वरः। गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

४. प्राणायाममिति। प्राणायामत्रयं चैव कुर्याद्वै तदनन्तरं। पूरकं वामनाड्या तु कुर्यात्षोडशधा जपात्॥ कुम्भकं मध्यनाड्या तु चतुःषष्टिजपात्ततः। रेचनं पिङ्गलया तु द्वात्रिंशज्जपसंख्यया॥ विपरीतं ततः कुर्याद् यथाशक्त्या तु साधकः। तदशक्तौ तदर्धेन तदर्धेनाथवा शिवे। प्राणायामं विना देवपूजने न हि योग्यतेति। कर्मणोऽन्ते तथारम्भे प्राणसंयममाचरेत्। प्रणवेन तथा मूलमुखार्णेन प्रयत्नत इति च।

५. विहितदिने अमादिवर्जिते। तथा चोक्तम्—नष्टेन्दुषष्ठीप्रतिपत्सु धीमान् न जातु दन्तोत्कषणं विदध्यात्। कुर्वन्नवाप्नोति तदाशु नूनं लक्ष्मीकुलज्ञातिजनोपघातम्॥ विहितकाष्ठेन पलाशाश्वत्थादिवर्जितेन। अत्र विशेषः स्मृत्यायुर्वेदयोर्द्रष्टव्यः।

सर्वजनप्रियाय नमः इति दन्तान्विशोध्य जिह्वाशुद्धिं च विधाय जिह्वायां कनिष्ठया वाग्बीजमुल्लिख्य यथेष्टगण्डूषैर्मुखशुद्धिं विधाय मूलाभिमन्त्रितजलेन मुखं प्रक्षाल्य नाभि-मात्रेऽम्भसि इमं[१] मे गङ्गे इत्यादि मन्त्रान्पठित्वा स्मार्तक्रमेण स्नात्वा नवार्णमन्त्रेण कुम्भमुद्रया स्वशिरः आसिच्य बहिर्धौते वाससी परिधाय स्वशाखोक्तां[२] वैदिकीं सन्ध्यामुपास्य तर्पणं च विधाय। ॐ ह्रीं चण्डिकायै हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं चण्डिकायै शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रीं चण्डिकायै शिखायै वषट्। ॐ ह्रीं चण्डिकायै कवचाय हुं। ॐ ह्रीं चण्डिकायै नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रीं चण्डिकायै अस्त्राय फट्। इति षडङ्गन्यासं विधाय ध्यानक्रमेण श्रीदेवीं ध्यात्वा मूलान्ते श्रीचण्डिका तृप्यतामित्यष्टोत्तरशतं तदर्धमष्टाविंशतिवारं वा सुगन्धिपुष्पमिश्रजलेन श्रीदेवीं संतर्प्य। ॐ कात्यायन्यै विद्महे कन्यकुमारि धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्। इति गायत्रीं यथाशक्ति जपित्वा प्राणायामपूर्वकं जपं श्रीदेव्यै समर्प्य जलकुम्भं गृहीत्वा पूजास्थानमागत्य बहिः करचरणं प्रक्षाल्य गन्धाक्षतपुष्पबिल्वपत्रधूपदीपनैवेद्यादिपूजोपस्करं सम्पाद्य द्वारपूजां

---

१. इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या। असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्यासुषोमया।

२. स्वशाखा मन्त्रब्राह्मणरूपस्य ऋग्वेदादेः शाकलाद्याः तदुक्तां तत्तच्छाखीयस्मार्तसूत्रनिर्दिष्टामिति।

कुर्यात् । तद्यथा बहिर्द्वारि आसनमास्तीर्य भूमौ जलेन त्रिकोणवृत्तचतुरस्रं मण्डलमालिख्य तन्मण्डलं गन्धाक्षतपुष्पैः ॐ ह्रीं द्वारार्घ्यमण्डलाय नमः । इति सम्पूज्यास्त्रक्षालितं साधारं पात्रं संस्थाप्य तस्मिन्सगन्धं जलमापूर्य तत्रांकुशमुद्रया तीर्थमावाह्य गङ्गे[1] मन्त्रेण धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य मूलेनाष्टवारमभिमन्त्र्य तज्जलेन तत्त्वत्रयैराचम्य द्वारस्योर्ध्वशाखायां दक्षे, ॐ धात्रे नमः । वामे ॐ विधात्रे नमः । अधः शाखायां दक्षे, ॐ गङ्गायै नमः । वामे ॐ यमुनायै नमः । ऊर्ध्वोदुम्बरे, ॐ द्वारश्रियै नमः । अधः, ॐ देहल्यै नमः । इति सम्पूज्य । वामाङ्घ्रिसङ्कोचेनान्तः प्रविश्य । नैर्ऋत्यकोणे । ॐ वास्तुपुरुषाय नमः । इति गन्धाक्षतैः सम्पूज्य । आसनभूमौ रक्तचन्दनेन चतुरस्रं विलिख्य तत्र पृं पृथिव्यै नमः इति मण्डलं गन्धादिभिः सम्पूज्य तत्रासनमास्तीर्य पृथ्वीति[2] मन्त्रेण तत्र प्रार्थ्योपविश्य शिखां बद्ध्वा प्राणायामं संकल्पं च विधाय तत्त्वत्रयेणाचामेत् । ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा । ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा । ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा । इत्याचम्य । दक्षे हरिं वामे

---

१. गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नर्मदे सिन्धु काबेरि जलेऽस्मिन्संनिधिं कुरु ॥

२. पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता । त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ।

ईश्वरं प्रणवादिनमोन्तनाममन्त्रेण सम्पूज्य । प्राङ्मुखः शुद्धचित्तः क्वचिन्निर्मले पीठे चन्दनागरुकुङ्कुमैः षट्कोणाष्टदलभूपुरात्मकं यन्त्रं निर्माय षट्कोणमध्ये ऐं ह्रीं क्लीं इति क्रमेण बीजान्यालिख्य भूतशुद्धिं कुर्यात् । अथ च पद्मासनं बद्ध्वा मौनी मूलाधारपद्मे जीवकलां सूक्ष्मां सोमसूर्याग्निरूपिणीं विषतन्तुनिभां कुण्डलिनीं ध्यात्वा षट्चक्राणि भित्त्वा सहस्रारं ब्रह्मबिलमानीय तथा चतुर्विंशतितत्त्वानि[1] स्वे स्वे मूलकारणे लीनानि विभाव्य प्राणायामक्रमेण यमिति वायुबीजेन षोडशवारजप्तेन कृष्णवर्णेन वायुमापूर्य तस्यैव चतुःषष्टि-जपेन कुम्भयित्वा दक्षनासाध्वना द्वात्रिंशता रेचयेत् । एवं भूतानि देहगतानि शुष्काणि विभाव्य पुनस्तथैव पिङ्गलया रमिति वह्निबीजं रक्तं ध्यायन् षोडशभिः पूरकं तेनैव चतुःषष्ट्या कुम्भकं द्वात्रिंशता रेचकमारचय्य शुष्कभूतानि संदह्य पुनस्तथैवेडया वमिति वरुणबीजं शुक्लवर्णं ध्यायन् पूर्ववत्षोडशवारजपेन पूरकं विधाय तेनोत्थामृतेन शरीरमाप्लाव्य चितः भूतानि तत्संबन्धीनि चतुर्विंशतितत्त्वानि च यथाक्रमेणोत्पाद्य लमिति भूबीजेन पीतवर्णेन चतुःषष्ट्या कुम्भकं विधाय

---

१. पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशगन्धरसरूपस्पर्शशब्दनासिकाजिह्वात्वक्चक्षुःश्रोत्रवाक्पाणिपादपायूपस्थप्रकृति-मनोबुद्ध्यहंकारेति चतुर्विंशतितत्त्वानि ।

तथैव पिङ्गलया रेचयेत् । पुनः कुण्डलिनीं मूलाधारमानयेत् । इत्थं भूतशुद्धिं विधाय निरस्तसकलभ्रमो वामे श्रीगुरुं दक्षे श्रीगणेशं मध्ये श्रीमहालक्ष्मीं ध्यात्वा प्रणम्य एकादश-न्यासान्कुर्यात् । तत्रादौ मातृकान्यासः । ॐ अं नमः मूर्ध्नि । ॐ आं नमः ललाटे । ॐ इं नमः दक्षनेत्रे । ॐ ईं नमः वामनेत्रे । ॐ उं नमः दक्षकपोले । ॐ ऊं नमः वामकपोले । ॐ ऋं नमः दक्षश्रुतौ । ॐ ॠं नमः वामश्रुतौ । ॐ ऌं नमः दक्षनासायाम् । ॐ ॡं नमः वामनासायाम् । ॐ एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे । ॐ ऐं नमः अधरोष्ठे । ॐ ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ । ॐ औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ । ॐ अं नमः जिह्वायाम् । ॐ अः नमः तालुनि । ॐ कं नमः दक्षवाहौ । ॐ खं नमः दक्षकूर्परे । ॐ गं नमः दक्षमणिबन्धे । ॐ घं नमः दक्षाङ्गुलिमूले । ॐ ङं नमः दक्षाङ्गुल्यग्रे । ॐ चं नमः वामबाहुमूले । ॐ छं नमः तत्कूर्परे । ॐ जं नमः तन्मणिबन्धे । ॐ झं नमः तदङ्गुलिमूले । ॐ ञं नमः तदङ्गुल्यग्रे । ॐ टं नमः दक्षोरूमूले । ॐ ठं नमः दक्षजानुनि । ॐ डं नमः दक्षगुल्फे । ॐ ढं नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले । ॐ णं नमः तत्पादाङ्गुल्यग्रे । ॐ तं नमः वामपादोरूमूले । ॐ थं नमः वामजानुनि । ॐ दं नमः वाम-गुल्फे । ॐ धं नमः तत्पादाङ्गुलिमूले । ॐ नं नमः तत्पादाङ्गुल्यग्रे । ॐ पं नमः दक्ष-

पार्श्वे । ॐ फं नमः वामपार्श्वे । ॐ बं नमः पृष्ठे । ॐ भं नमः नाभौ । ॐ मं नमः जठरे । ॐ यं त्वगात्मने नमः हृदये । ॐ रं असृगात्मने नमः दक्षांसे । ॐ लं मांसात्मने नमः ककुदि । ॐ वं स्नाय्वात्मने नमः वामांसे । ॐ शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादिदक्षहस्तान्तम् । ॐ षं मज्जात्मने नमः हृदयादिवामहस्तान्तम् । ॐ सं मेदआत्मने नमः हृदयादिदक्षपादान्तम् । ॐ हं पूयात्मने नमः हृदयादिवामपादान्तम् । ॐ ल्ङं[1] प्राणात्मने नमः पादादिहृदयान्तम् । ॐ क्षं जीवात्मने नमः हृदयादिशिरोऽन्तम् ।।। इति मातृकान्यासः प्रथमः ।। १ ।।

अथ सारस्वतन्यासः ।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अनामयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मध्यमयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः तर्जन्योः । ॐ ऐं ह्रीं क्ली नमः अंगुष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करतलयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करपृष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मणिबन्धयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः हृदये । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिरसि । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिखायाम् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कवचे ।

१. बह्वृचसंप्रदायप्रसिद्धोऽयं वर्णः ।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नेत्रयोः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करतलकरपृष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पूर्वे । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः आग्नेये । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः दक्षिणे । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नैर्ऋत्ये। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पश्चिमे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः वायव्ये। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः उत्तरे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः ईशाने। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः ऊर्ध्वे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अधः ।। इति द्वितीयः सारस्वतो न्यासः ।।

अथ तृतीयो मातृगणन्यासः।

ॐ ह्रीं ब्रह्माणी पूर्वतः पातु । ॐ ह्रीं माहेश्वरी आग्नेय्यां पातु। ॐ ह्रीं कौमारी दक्षिणे पातु । ॐ ह्रीं वैष्णवी नैर्ऋत्ये पातु । ॐ ह्रीं यज्ञवाराही पश्चिमे पातु । ॐ ह्रीं नारसिंही वायव्ये पातु । ॐ ह्रीं ऐन्द्री उत्तरे पातु । ॐ ह्रीं चामुण्डा ईशाने पातु । ॐ ह्रीं व्योमेश्वरी ऊर्ध्वं पातु । ॐ ह्रीं नागेश्वरी पाताले पातु ।। इति तृतीयो मातृगणन्यासः ।।

अथ चतुर्थः षड्देवीन्यासः।

ॐ कमलाङ्कुशमण्डिता नन्दजा पूर्वाङ्गं पातु । ॐ खड्गपात्रधरा रक्तदन्तिका

दक्षिणाङ्गं पातु । ॐ पुष्पपल्लवमूलादिहस्ता शाकम्भरी पश्चिमाङ्गं पातु । ॐ धनुर्बाण-धरा दुर्गातिहारिणी दुर्गा वामाङ्गं पातु । ॐ शिरःपात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणपर्यन्तं पातु । ॐ चित्रकान्तिभृद् भ्रामरी चरणाभ्यां शिरःपर्यन्तं पातु ।। इति चतुर्थः षड्देवीन्यासः ।।

अथ पञ्चमो ब्रह्मादिन्यासः ।

ॐ ब्रह्मा सनातनः पादादिनाभिपर्यन्तं पातु । ॐ जनार्दनः नाभेर्विशुद्धिपर्यन्तं नित्यं पातु । ॐ रुद्रस्त्रिलोचनः विशुद्धेः शिखापर्यन्तं पातु । ॐ हंसः पादद्वयं पातु । ॐ वैनतेयः करद्वयं पातु । ॐ वृषभश्चक्षुषी पातु । ॐ जनार्दनः परात्परतरः सर्वानन्दमयो हरिः सर्वाङ्गानि पातु ।। इति पञ्चमो ब्रह्मादिन्यासः ।।

अथ षष्ठो लक्ष्म्यादिन्यासः ।

ॐ अष्टादशभुजा सती महालक्ष्मीर्मध्यं पातु । ॐ अष्टभुजा सरस्वती ऊर्ध्वं पातु । ॐ त्रिशल्लोचनमण्डिता महाकाली अधः पातु । ॐ सिंहो हस्तद्वयं पातु । ॐ परहंसः अक्षिमण्डलं पातु । ॐ महिषेण समायुक्तः प्रेतः पादद्वयं पातु । ॐ महेशानश्चण्डिका च सर्वाङ्गानि पातु । इति षष्ठः लक्ष्म्यादिन्यासः ।।

अथ मन्त्रबीजन्यासः सप्तमः ।

ॐ ऐं नमः ब्रह्मरन्ध्रे । ॐ ह्रीं नमः दक्षनेत्रे । ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे । ॐ चां नमः दक्षकर्णे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः दक्षनासापुटे । ॐ यैं नमः वामनासापुटे । ॐ विं नमः मुखे । ॐ च्चें नमः गुदे ।। इति बीजन्यासः सप्तमः ।।

अथाष्टमो बीजन्यासः ।

ॐ ऐं नमः गुदे । ॐ ह्रीं नमः मुखे । ॐ क्लीं नमः वामनासापुटे । ॐ चां नमः दक्षनासापुटे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः दक्षकर्णे । ॐ यैं नमः वामनेत्रे । ॐ विं नमः दक्षनेत्रे । ॐ च्चें नमः ब्रह्मरन्ध्रे ।। इत्यष्टमो बीजन्यासः ।।

अथ नवमो मन्त्रन्यासः ।

ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणपर्यन्तं पूर्वाङ्गे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणावधि दक्षिणाङ्गे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणावधि पृष्ठे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणावधि वामाङ्गे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकात्पादान्तम् । ॐ मूलं ९ नमः पादादिशिरोऽन्तम् ।। इति नवमो मन्त्रन्यासः ।।

अथ दशमः षडङ्गन्यासः ।।

ॐ मू० ९ नमः हृदयाय नमः । ॐ मू० ९ नमः शिरसे स्वाहा । ॐ मू० ९ नमः शिखायै वषट् । ॐ मू० ९ नमः कवचाय हुम् । ॐ मू० ९ नमः नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ मू० ९ नमः अस्त्राय फट् ।। इति षडङ्गन्यासः दशमः ।

अथैकादशन्यासः ।

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा इत्येकं मन्त्रं पठित्वा कृष्णवर्णं ध्यायन् नाभ्यादिचरणान्तं व्यापकमुद्रया न्यसेत् । पुनर्बालार्कसदृशं ध्यायन् ॐ शूलेन पाहि नो देवीति श्लोकचतुष्टयं पठित्वा कण्ठादिनाभ्यन्तं पूर्ववन्न्यसेत् । पुनः शुद्धस्फटिकसंकाशं ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे इत्यादि श्लोकपञ्चकं ध्यात्वा पठन् मूर्धादिकण्ठान्तं न्यसेत् ।। इत्येकादशन्यासः ।।

एवमेकादशन्यासान्विधाय योनिमुद्रां बद्ध्वा स्वात्मानं देवीरूपं ध्यात्वा स्वहृदये वक्ष्यमाणं पूजापीठं विभाव्य तन्मध्ये वक्ष्यमाणमूलमन्त्रस्य बीजत्रयं ध्यात्वा तत्र मध्यबीजे श्रीमहालक्ष्मीं सर्वदेवशरीरतेजसोद्भूतां रहस्योक्तध्यानेन श्वेतानना नीलभुजेत्यादिनालङ्कृत-भुजामेभिरायुधैः कमलासनामित्यन्तेन ध्यात्वा स्वात्मैक्येन विभाव्य तस्या दक्षिणे प्रथमबीजे

श्रीमहाकालीं दशवक्त्रा दशभुजेत्यादिना निश्च्योतद्रुधिरंदधावित्यन्तेन रहस्योक्तेन ध्यात्वा श्रीमहालक्ष्म्या वामे तृतीयबीजे श्रीमहासरस्वतीं दधौ चाष्टभुजा बाणानित्यादि शङ्खं घण्टां लाङ्गलं वसुधाधिपेत्यन्तं रहस्योक्तक्रमेण ध्यात्वा। अत्रायुधध्यानं दक्षिणाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तम् इति श्रीमहासरस्वतीं स्वहृत्पद्मे ध्यात्वा वक्ष्यमाणपीठपूजापुरःसरं श्रीमहालक्ष्मीं साङ्गां सावरणां मानसोपचारैः संपूज्य। मूलाधारे आत्मान्तरात्मपरमात्म-ज्ञानात्मस्वरूपं चतुरस्रं कुण्डं कुण्डल्यग्निप्रज्वलितं ध्यात्वा मूलमन्त्रमुच्चार्यान्ते अहन्तां जुहोमि स्वाहा, एवं अहन्तासत्यपैशुन्यकामक्रोधलोभमोहमदमात्सर्याणि सुषुम्णा स्रुग्युक्तमनःस्रुवेण पृथक् पृथक् हुत्वा निर्दग्धनिखिलवैरिगणः स्थिरचित्तः मूलमन्त्रं यथाशक्ति जपित्वा जपं श्रीदेव्यै समर्प्य बाह्यपूजां कुर्यात्। तद्यथा। स्वदक्षे भूमौ रक्तचन्दनाम्भसा त्रिकोणवृत्तचतुरस्राणि विधाय गन्धाक्षतपुष्पैः ऐं ह्रीं व्यापकमण्डलाय नमः इति मण्डलं सम्पूज्य तत्रास्त्रक्षालित-माधारं संस्थाप्य। मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः इति त्रिपादीं सम्पूज्य। ततोऽर्घ्य-पात्रमस्त्रेण प्रक्षाल्याधारोपरि संस्थाप्य। अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः इत्यर्घ्यपात्रं गन्धादिभिः संपूज्य। मूलं आदिक्षान्तां मातृकां चोच्चरन् तं शुद्धोदकेनापूर्य तत्र गन्धाक्षता-

न्निःक्षिप्य । ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः इति जले सोममण्डलं विभाव्य संपूज्य सूर्यमण्डलादङ्कुशमुद्रया ॐ ब्रह्माण्डोदरतीर्थानीति[1] मन्त्रेण तीर्थान्यावाह्य धेनुमुद्रया ॐ गङ्गे च यमुने चैव इति मन्त्रेण तज्जलममृतीकृत्य हुमित्यवगुण्ठ्य चक्रमुद्रां प्रदर्श्य अस्त्रमुद्रया संरक्ष्य मत्स्यमुद्रया मूलेनाष्टधाभिमन्त्र्य पुनरस्त्रेण संरक्ष्य कवचेनावगुण्ठ्य मूलमुच्चरंस्तेनोदकेनात्मानं पूजाद्रव्यं चाभिषिच्य आत्मानं गन्धादिभिरलङ्कृत्य देवताभेदेनात्मानं ध्यायन्पीठपूजामारभेत । पूर्वलिखितं यन्त्रं क्वचिन्मनोहरे पीठे संस्थाप्य अर्घोदकेनाभ्युक्ष्य । षट्कोणे ॐ ॐकारपीठाय नमः । अष्टदले ॐ पूं पूर्णगिरिपीठाय नमः । चतुरस्रे ॐ कां कामरूपपीठाय नमः । इति संपूज्य । पूजापीठस्य बहिश्चतुर्दिक्षु स्वाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन पूर्वे ॐ गं गणेशाय नमः । दक्षिणे ॐ क्षां क्षेत्रपालाय नमः । पश्चिमे ॐ पां पादुकाभ्यो नमः । उत्तरे ॐ वं वटुकाय नमः । पीठस्य बहिराग्नेयादिकोणेषु । आग्नेये ॐ जं जयायै नमः । नैर्ऋत्ये ॐ विं विजयायै नमः । वायव्ये ॐ जं जयन्त्यै नमः । ईशाने ॐ अं अपराजितायै नमः । इति संपूज्य पीठस्य चतुर्दिक्षु क्रमेण पूर्वादिप्रादक्षिण्येनैताः पूजयेत् । तत्र पूर्वे ॐ विं विष्णुमायायै

---

१. करैः स्पृष्टानि ते रवे । तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकरेति सम्पूर्णो मन्त्रः ।

नमः । ॐ चें चेतनायै नमः । ॐ बुं बुद्ध्यै नमः । ॐ निं निद्रायै नमः । ॐ क्षुं क्षुधायै नमः । इति पञ्चशक्तीः संपूज्य । दक्षिणे ॐ छां छायायै नमः । ॐ शं शक्त्यै नमः । ॐ तृं तृष्णायै नमः । ॐ क्षां क्षान्त्यै नमः । ॐ जां जात्यै नमः । ॐ लं लज्जायै नमः । इति षट्शक्तीः संपूज्य । पश्चिमे ॐ शां शान्त्यै नमः । ॐ श्रं श्रद्धायै नमः । ॐ कां कान्त्यै नमः । ॐ लं लक्ष्म्यै नमः । ॐ धृं धृत्यै नमः । ॐ वृं वृत्त्यै नमः । इति षट्शक्तीः संपूज्य । उत्तरे ॐ स्मृं स्मृत्यै नमः । ॐ दं दयायै नमः । ॐ तुं तुष्ट्यै नमः । ॐ पुं पुष्ट्यै नमः । ॐ मां मात्रे नमः । ॐ भ्रां भ्रान्त्यै नमः । इति षट्शक्तीः संपूज्य । नालमूले आधारादिचतुष्टयं पूजयेत् । ऊर्ध्वोर्ध्वक्रमेण । ॐ आं आधाराय नमः । ॐ कूं कूर्माय नमः । ॐ शें शेषाय नमः । ॐ पृं पृथिव्यै नमः । ॐ नां नालाय नमः । ॐ पं पद्माय नमः । इति संपूज्य ज्ञानामृतसुतृप्तात्मा मण्डलार्चनमारभेत । तत्राष्टपत्रे पूर्वादीशानान्ता पूजा । पूर्वदले ॐ ब्रं ब्रह्माण्यै हंसवाहनायै नमः । आग्नेयदले ॐ मां माहेश्वर्यै वृषभारूढायै नमः । दक्षिणदले ॐ कौं कौमार्यै मयूरवाहनायै नमः । नैर्ऋत्ये ॐ वैं वैष्णव्यै गरुडोपरिसंस्थितायै नमः । पश्चिमे ॐ यं यज्ञवाराह्यै दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरायै नमः । वायव्ये ॐ नां नारसिंह्यै

महास्वनायै नमः । उत्तरे ॐ ऐं ऐन्द्र्यै गजराजसमारूढ़ायै नमः । ईशाने ॐ चां चामुण्डायै गणनाथपरिवारायै सदा रुद्रेण संयुतायै मुण्डमण्डितायै नमः । एताः संपूज्य षट्कोणदेवीर्ब्रह्माणीकर्णिकास्पर्शिकोणमारभ्य दक्षावर्तेन पूजयेत् । अग्रकोणे ॐ नं नन्दजायै हेमगर्भायै नमः । आग्नेयकोणे ॐ रं रक्तदन्तिकायै सुरक्तायै नमः । नैर्ऋत्ये ॐ शां शाकम्भर्यै नीलायै नमः । पश्चिमे ॐ दुं दुर्गायै सर्वदुःखहारिण्यै नमः । वायव्ये ॐ भीं भीमायै दंष्ट्राञ्चितमुखायै नीलायै पात्रशिरोधरायै नमः । ईशाने भ्रां भ्रामर्यै तेजोमण्डलदुर्द्धर्षायै वरदायै नमः । इति संपूज्य । सपुष्पाञ्जलिः षट्कोणकर्णिकामध्यगतप्रथमबीजे श्रीमहाकालीं रहस्योक्तध्यानरूपां दशवक्त्रां दशभुजां दशपादामञ्जनप्रभां त्रिंशल्लोचनमालया राजमानां दक्षिणाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तं खड्गबाणगदाशूलचक्रपाशशङ्खभुशुण्डीपरिघकार्मुकमुण्डानि धारयन्तीं ध्यात्वा ऐं महाकाल्यै नमः इति श्रीमहाकालीं यथालाभोपचारैः संपूज्य । मध्यबीजे श्रीमहालक्ष्मीं रहस्योक्तरूपां श्वेताननां नीलभुजां सुश्वेतस्तनमण्डलां रक्तमध्यां रक्तपादां नीलजङ्घां रूपयौवनोन्मदां सुचित्रजघनां चित्रमाल्याम्बरविलेपनामष्टादशभुजां दक्षिणाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमक्षमालाकमलबाणासिकुलिशगदाचक्रत्रिशूलपरशुशङ्खघण्टापाश–

शक्तिदण्डचर्मचापपानपात्रकमण्डलून्दधतीं ध्यात्वा ॐ ह्रीं महालक्ष्म्यै नमः । इति यथा-लाभोपचारैः संपूज्य । कामबीजे श्रीमहासरस्वतीं शुक्लवर्णां शुक्लमाल्यानुलेपनविभूषण-वस्त्रवतीमष्टभुजां दक्षाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तं बाणमुसलशूलचक्रशङ्खघण्टालाङ्गलधनूंषि बिभ्रतीं ध्यात्वा ॐ क्लीं सरस्वत्यै नमः इति यथालाभोपचारैः संपूज्य श्रीमहालक्ष्म्या वामभागे छिन्नशीर्षं महिषं ध्यात्वा ॐ मं महिषाय नमः इति गन्धादिनैवेद्यान्तोपचारैः संपूज्य श्रीमहा-लक्ष्मीदक्षभागे सिंहं ध्यात्वा ॐ सिं सिंहाय नमः इति यथालाभोपचारैः संपूज्य संतर्प्य यन्त्राग्रे सर्वोत्तमं पीठं संस्थाप्य तत्र रक्तवस्त्रतूलिकादि समास्तीर्य तन्मध्ये पुष्पं दत्वा योग-मुद्रया श्रीमहालक्ष्मीं मध्यबीजे चिरं ध्यात्वा तया मण्डलस्थसर्वशक्तिभ्य ऐक्यं विभाव्य मण्डलात्पीठे समाह्वयेत् । मूलं महालक्ष्मि एह्येहि आगच्छ २ सन्निधिं कुरु २ ॐ महा-पद्मवनान्तस्थे कारणानन्दविग्रहे । सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि । इति पठित्वा मूलमुच्चार्य पीठे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । तत आवाहनीं मुद्रां प्रदर्श्य । ॐ देवेशि भक्तिसुलभे सर्वावरणसंयुते । यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव । इति प्रार्थ्य मूलमुच्चार्य श्रीमहालक्ष्मि इह तिष्ठ तिष्ठेति स्थापनीं मुद्रां प्रदर्श्य । मूलं श्रीमहालक्ष्मि इह सन्निधेहि

सन्निधेहि इति संनिधापनमुद्रया संनिधाप्य। मूलं श्रीमहालक्ष्मि इह संनिरुद्धा भव २ इति संनिरोधनमुद्रया संनिरुध्य। मूलं श्रीमहालक्ष्मि इह संमुखीभव २ इति संमुखीकरणमुद्रया संमुखीकृत्य। मूलं श्रीमहालक्ष्मि इहावगुण्ठिता भव २ इत्यवगुण्ठनमुद्रयावगुण्ठ्य। श्रीदेव्यङ्गे षडङ्गानि विन्यस्य मूलमुच्चार्य श्रीमहालक्ष्मि सकलीकृता भवेत्युकत्वा। पुनर्मूलं श्रीभगवत्यमृतीकृता भवेति देव्याः शिरसि धेनुमुद्रां प्रदर्शयन्नमृतवृष्टिं संचिन्त्य। पुनर्मूलं श्रीभगवति परमीकृता भवेति परमीकरणमुद्रां बद्ध्वा परमामृतमयीं भावयेदिति नवमुद्राः प्रदर्श्य अर्घोदकेन देवीं संप्रोक्ष्य लेलिहानमुद्रया। आं ह्रीं क्रों श्रीमहालक्ष्म्याः प्राणाः इह प्राणाः ३ श्रीमहालक्ष्म्याः जीव इह स्थितः ३ श्रीमहालक्ष्म्याः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि ३ श्रीमहालक्ष्म्याः वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। इति श्रीदेव्याः प्राणान् प्रतिष्ठाप्य। अक्षमाला, कमल, बाण, खड्ग, वज्र, गदा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शङ्ख, घण्टा, पाश, शक्ति, दण्ड, चर्म, चाप, पानपात्र, कमण्डलु, इत्यष्टादशमुद्राः प्रदर्श्य। मूलं श्रीमहालक्ष्म्यै एतत्पाद्यं नमः इति श्यामार्कदूर्वाब्जविष्णुक्रान्ताभिः पाद्यं पादयोर्दद्यात्। मूलं इदमर्घ्यं स्वाहा इति पुष्पाक्षतचन्दनयुतजलेनार्घ्यं शिरसि। इत्यर्घ्यं दत्त्वा धेनुमुद्रां प्रदर्श्य मूलं इदमाचमनीयं श्रीमहालक्ष्म्यै

वं इति जातीलवङ्गकक्कोलैराचमनीयं मुखे। मूलं एष मधुपर्कः श्रीमहालक्ष्म्यै वं इत्याज्य-दधिमध्वात्मकं मधुपर्कं मुखे। पुनराचमनीयं पूर्ववत्। मूलं श्रीमहालक्ष्मि इदं स्नानीयं नमः इति सर्वाङ्गे सुगन्धतैलेनाभ्यज्य सुगन्धामलकादिनोद्वर्त्य शुद्धजलैः स्नापयित्वा पञ्चामृतैर-भिषिच्य पुनर्नानातीर्थजलैरभिषिच्य प्राग्वदाचमनीयं दत्त्वा योनिमुद्रां प्रदर्श्य मूलं एतानि वस्त्राभरणानि श्रीमहालक्ष्म्यै निवेदयामि नमः इति चित्रे वाससी परिधाप्य प्राग्वदाचमनीयं दत्त्वा। मूलं श्रीमहालक्ष्मि एष ते गन्धो नमः इति चन्दनकर्पूरकालागर्वात्मकं गन्धं मध्यमानामाङ्गुष्ठैः शिरसि दद्यात्। मूलं श्रीमहालक्ष्मि इमानि पुष्पाणि वौषट् इति पुष्पाणि शिरसि। ततः मूलेन उत्तमाङ्गहृदाधारपादसर्वाङ्गेषु पञ्च पुष्पाञ्जलीन् दत्त्वा तथैव पुष्पमालामपि समर्प्य तथैव बिल्वपत्राणि गन्धालोडितानक्षतांश्च समर्प्य धूपदीपौ दद्यात्। यथा—धूपभाजनमस्त्रेण प्रोक्ष्य नमः इत्यभ्यर्च्य मूलान्ते श्रीमहालक्ष्मि एष ते धूपो नमः इत्युत्सृज्य ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा इति वामभागस्थितां घण्टां संपूज्य तां वामहस्तेन वादयन् मूलं गायत्रीं चोच्चरन् त्रिघोत्तोल्य श्रीदेवीं धूपयित्वा देव्या वामे स्थापयेत्। एवं मूलं श्रीभगवति एष ते दीपो नमः इति दीपं समर्प्य देव्या दक्षिणे स्थापयेत्। उत्सर्गस्तु

सर्वेषामर्घोदकेन कार्यः । अथ नैवेद्यं यथा–देव्या पुरतस्त्रिकोणवृत्तचतुरस्रं मण्डलं कृत्वा ह्रीं आधारशक्तये नमः इत्याधारशक्तिं संपूज्य तदुपरि नैवेद्यपूरितं पात्रं संस्थाप्य अस्त्रेण संरक्ष्य चक्रमुद्रया यमित्यस्य दशवारजपेन तद्दोषान् संशोष्य रमित्यस्य दशवारजपेन दोषान् संदह्य वमित्यस्य दशवारजपेन धेनुमुद्रयामृतीकृत्य मूलेनाभिमन्त्र्य नमः इति तत्र पुष्पं दत्त्वा मूलान्ते इदं नैवेद्यं श्रीमहालक्ष्म्यै निवेदयामि इति निवेद्य । ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा इत्यापोशानं दत्त्वा । वामहस्तेन ग्रासमुद्रां बद्ध्वा दक्षिणहस्तेन प्राणादिपञ्चमुद्राः प्रदर्शयेत् । ॐ प्राणाय स्वाहा इति कनिष्ठानामाङ्गुष्ठेन । ॐ अपानाय स्वाहा इति तर्जनीमध्यमाङ्गुष्ठेन । ॐ व्यानाय स्वाहा इति मध्यमानामाङ्गुष्ठेन । ॐ उदानाय स्वाहा इति तर्जनी मध्यमानामाङ्गुष्ठेन । ॐ समानाय स्वाहा इति सर्वाङ्गुलीभिरंगुष्ठेन स्पृरोत् । ततः सुशीतलं जलं दत्त्वा देवीं तृप्तां विभाव्य । ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा इत्यापोशानं दत्त्वा । हस्तास्यक्षालनमाचमनीयं च दत्वा । ताम्बूलममृतीकृत्य मूलेनाभिमन्त्र्य तदुपरि पुष्पं दत्त्वा वामहस्ततत्त्वमुद्रया स्पृशन् दक्षिणेनार्घोदकेन मूलं इदं ताम्बूलं श्रीमहालक्ष्म्यै निवेदयामि इति निवेद्य श्रीदेवीं सुप्रसन्नां विभाव्य । प्रणवेन प्राणायामं नवार्णमन्त्रस्य ऋष्यादीन् स्मृत्वा यथासंकल्पं जपं विधाय रसस्यत्रयेण श्रीचण्डिकां सप्तशतमन्त्रेण स्तुत्वा पुनर्मूलमष्टोत्तरशतं जपित्वा पायसेन तिलसर्पिषा

च दशांशं हुत्वा नवार्णेनापि हुत्वा अन्ते श्रीदेवीं' ॐ नमो देव्यै महादेव्यै' इति श्लोकमन्त्रेणापि हुत्वा ऋतुभवैः फलैरपि हुत्वा तज्जपं होमं च श्रीदेव्यै समर्प्य श्रीमहालक्ष्मीं प्रणम्य । शूलेन पाहि नो देवीत्यादिचतुर्भिर्मन्त्रैः प्रदक्षिणां विधाय श्रीचण्डिकाध्यानतत्परः आसने स्थित्वा कृताञ्जलिः । 'ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे' इत्यादिभिः 'लोकानां वरदा भवे'त्येतैर्मन्त्रैः प्रणतः संप्रार्थ्य मनोवाञ्छितं श्रीदेव्यै निवेद्य संहारमुद्रया श्रीदेवीं स्वहृदयकमलमानयेत् । ततोऽर्घ्यपात्रमुत्थाप्य ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि । यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम् ।। इत्युच्चार्य विसृजेत् । निर्माल्यं पवित्रदेशे निःक्षिप्य सुखं विहरेदिति शिवम् । अनेन क्रमेण नवार्णं सप्तशतीस्तोत्रं वा संसाध्य यथार्थफलभाग्भवेदिति ।

।। इति खिलमार्कण्डेयक्रमेण श्रीचण्डिकापूजापद्धतिः ।।

श्रीचण्डी पूजापद्धति का हिन्दी अनुवाद

सौभाग्यशाली साधक गुरुमुख से विधिपूर्वक नवार्ण मन्त्र अथवा सप्तशती की दीक्षा लेकर गुरु द्वारा निर्दिष्ट प्रायोगिक विधि-विधान को भलीभाँति समझकर सिद्धक्षेत्र, रमणीय पर्वतप्रदेश अथवा किसी पुण्य-भूमि में वायु तथा धूप से सुरक्षित कुटी का निर्माण कर साधना आरम्भ करे। अनन्तर साधक ब्राह्ममुहूर्त (दो घड़ी रात्रि शेष रहने पर) में निद्रा त्याग कर लघुशंका आदि से निवृत्त होकर तथा हाथ-पैर धोकर, पवित्र होकर, शुद्ध वस्त्र पहिनकर, पवित्र आसन पर बैठकर, ब्रह्मरन्ध्र (शिर का मध्य भाग) में स्थित श्वेत सहस्रदल कमल की कर्णिका में अवस्थित, स्फटिक के समान कान्ति-युक्त, ध्यानमुद्रा में लीन, द्विभुज (दो हाथ वाले) दाहिने और बांये हाथ में क्रमशः वर एवं अभय की मुद्रा में अवस्थित, श्वेतवस्त्र एवं श्वेतचन्दन से विभूषित श्रीगुरुदेव का ध्यान कर हं यं वं रं लं इन पंचभूत बीजों से उनकी मानसिक पूजा करके—

'ॐ अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥१॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥२॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु र्गुरुरेव महेश्वरः।
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥३॥

इन तीनों मन्त्रों से स्तुति करके साष्टाङ्ग प्रणाम करे तथा उनकी आज्ञा लेकर हृदयकमल में गुरु द्वारा उपदिष्ट इष्टदेवता के स्वरूप का ध्यान कर पूर्वोक्त मानसोपचार (मानसिक पूजा) से पूजन कर

ऋषि, छन्द, देवता आदि का शरीर में न्यास करके दस बार मूल मंत्र का जप करे और उसे देवी को समर्पित कर—

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् ।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥
हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥
असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ॥

सप्त. अ. ११, मन्त्र २४–२८

इन मन्त्रों से भगवती चण्डिका की स्तुति करे। अनन्तर प्राणायाम करके हाथ जोड़कर प्रार्थना करे और भूमि को प्रणाम कर शौच आदि आवश्यक क्रिया से निवृत्त होकर नदी, कूप या सरोवर आदि पर जाकर जिस दिन जिस वृक्ष की दातून विहित हो उससे—

"ॐ क्लीं कामदेवसर्वजनप्रियाय नमः ।

इस मन्त्र का उच्चारण कर दांतों की तथा जीभ की शुद्धि करे। अनन्तर कनिष्ठिका अंगुली से वाग्भव बीज लिखकर अच्छीतरह कुल्ला कर मुख की शुद्धि करे। मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित जल से मुंह धोकर, नाभि पर्यन्त जल में—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या ।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणु ह्यासुषोमया ॥

इन मन्त्रों को पढ़कर स्मार्तविधान से स्नान कर नवार्णमन्त्र बोलकर कुम्भमुद्रा से अपने शिरोभाग का आसिंचन करे तथा जल से बाहर निकल कर धुली हुई धोती पहने एवं दुपट्टा या अंगोछा

धारण करे। अनन्तर अपनी वेदशाखा में विहित वैदिकी संध्या की उपासना करके तर्पण करे। संध्या तर्पण करने के बाद—

ॐ ह्रीं चण्डिकायै हृदयाय नमः ।
ॐ ह्रीं चण्डिकायै शिरसे स्वाहा ।
ॐ ह्रीं चण्डिकायै शिखायै वषट् ।
ॐ ह्रीं चण्डिकायै कवचाय हुम् ।
ॐ ह्रीं चण्डिकायै नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ ह्रीं चण्डिकायै अस्त्राय फट् ।

इन छः मन्त्रों से षडङ्गन्यास कर ध्यानक्रम से श्रीदेवी का ध्यान करके मूलमन्त्र नवार्ण के अन्त में **'श्रीचण्डिका तृप्यताम्'** इस मन्त्र से १०८ बार अथवा ५४ बार या इस संख्या के भी आधे भाग अर्थात् अठ्ठाइस बार सुगन्धित पुष्प से मिश्रित जल से श्रीदेवी का तर्पण करे। अनन्तर **ॐ कात्यायन्यै विद्महे कन्यकुमारि धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।**

इस गायत्री मन्त्र का यथाशक्ति जप करके प्राणायामपूर्वक श्रीदेवी को जप का समर्पण करे। इस कृत्य का सम्पादन करने के बाद जलकुम्भ (पूजा के लिए जल लाने का घड़ा) लेकर पूजा के स्थान पर आकर, पूजागृह के बाहर ही हाथ-पैर धोकर गन्ध (श्वेत, रक्त चन्दन) अक्षत (विना टूटा हुआ चावल) पुष्प, विल्व पत्र (विल्व वृक्ष का पत्ता), धूप, दीप तथा नैवेद्य (भोग लगाने के लिए फल, मेवा या मधुर वस्तु) आदि समस्त पूजनसामग्री का सम्पादन करने के बाद पूजागृह के द्वार की पूजा करे। द्वारपूजा की विधि :—

द्वार के बाहर आसन बिछाकर पूजा की भूमि पर जल से त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्र मण्डल लिखकर चन्दन, अक्षत और पुष्प से **'ॐ ह्रीं द्वारार्घ्यमण्डलाय नमः'** इस मन्त्र से उस मण्डल की पूजा करके **'फट्'** इस अस्त्र मन्त्र से आधारसहित पात्र का प्रक्षालन करके, पहले त्रिपादी और उसके बाद उसके ऊपर पात्र स्थापित करे। उस पात्र को सुगन्धित जल से

परिपूर्ण करके अंकुश मुद्रा से तीर्थों का आवाहन करे। अनन्तर—

'ॐगङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु॥'

इस मन्त्र से धेनुमुद्रा द्वारा अमृतीकरण करके मूलमन्त्र से आठवार इसको अभिमन्त्रित करे। इसके बाद इस जल से **ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा। ॐ विद्या-तत्त्वाय स्वाहा। ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा।** इन तत्त्वत्रय मन्त्रों का उच्चारण कर तीन बार आचमन करके द्वारपूजा करे। द्वार की ऊपरी शाखा की दाहिनी ओर—**ॐ धात्रे नमः**, वायीं ओर—**ॐ विधात्रे नमः** एवं द्वार की नीचे वाली शाखा के दाहिनी ओर—**ॐ गङ्गायै नमः** तथा बायीं ओर—**ॐ यमुनायै नमः** से पूजा करे। द्वार के ऊपर मध्य भाग में **ॐ द्वारश्रियै नमः** तथा नीचे देहली पर **ॐ देहल्यै नमः**। इस मन्त्र से पूजा करके साधक अपने शरीर के वामांग को संकुचित कर पूजागृह के भीतर प्रविष्ट होकर नैर्ऋत्य कोण में **ॐ वास्तुपुरुषाय नमः**। इस मन्त्र से गन्ध और अक्षत से पूजा करे। आसन के स्थान पर लाल चन्दन से चतुरस्र बनाकर **पृं पृथिव्यै नमः**। इस मन्त्र से गन्धाक्षत पुष्प से उस मण्डल का पूजन कर उस पर आसन बिछाकर—

पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥

इस मन्त्र से प्रार्थना कर आसन पर बैठे तथा शिखाबन्धन कर प्राणायाम और संकल्प करके तत्वत्रय से आचमन करे—**ॐ आत्म तत्त्वाय स्वाहा। ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा। ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा।** आचमन करने के बाद अपने दाहिने भाग में **ॐ हरये नमः** तथा बाँये भाग में **ॐ ईश्वराय नमः**। इस मन्त्र से गन्धाक्षत पुष्प से इन दोनों की पूजा करके पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठे और शुद्धचित्त होकर

किसी निर्मल पीठ (स्थान) पर चन्दन, अगरु, कुंकुम से षट्कोण, अष्टदल और भूपुर से संयुक्त यन्त्र बनाकर षट्कोण के मध्य में क्रमशः ऐं ह्रीं क्लीं इन बीजों को लिखकर भूतशुद्धि करे पद्मासन से बैठकर, मौन होकर मूलाधार कमल में सोम, सूर्य और अग्निस्वरूपिणी एवं सूक्ष्म तथा विषतन्तु अर्थात् कमलनाल के बारीक रेशे के समान जीवकला के रूप में प्रकाशमान कुण्डलिनी का ध्यान कर शरीर में स्थित पद्माकार षट्चक्रों का भेदन करते हुए सहस्रदलकमल के रूप में अवस्थित ब्रह्मरन्ध्र में उसे लाकर एवं पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, आकाश, गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द, नासिका, जिह्वा, त्वक्, चक्षु, श्रोत्र, वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ, प्रकृति, मन, बुद्धि, अहंकार इन चौबीस तत्त्वों की अपने अपने मूल कारण में विलीन होने की भावना करके पूरक, कुम्भक, रेचक इस प्राणायाम के क्रम से कृष्णवर्ण (काले रंग का) 'यं' इस वायु बीज का सोलह वार मानसिक जप करके वायु का आपूरण कर पुनः इसी बीज का चौसठ बार जप करके वायु का कुम्भक (अन्तर्निरोध) करके फिर इसी बीज का बत्तीस बार जप करके नासिका के दाहिने छिद्र से रेचन (वायु निर्गमन) करे। इस प्रकार देह में अवस्थित पृथिव्यादि पंचभूतों को शुष्क हुआ मानकर पुनः पिंगला (नासिका का वाम भाग) से 'रं' इस वह्नि (अग्नि) बीज का रक्त (लाल) रूप में ध्यान करते हुए सोलह बार के जप से पूरक, चौंसठ बार के जप से कुम्भक तथा बत्तीस वार के जप से रेचक करके शुष्क भूतों का दाह कर पुनः उसी प्रकार 'इडा' (नासिका का दक्षिण भाग) से 'वं' इस वरुण बीज का शुक्ल वर्ण (सफेद रंग) के रूप में ध्यान करते हुए पहले की तरह सोलह बार जप के द्वारा पूरक करके उसके द्वारा निकले हुए अमृत से शरीर को आप्लावित (अमृत स्नात) करके चैतन्य, पंचभूत तथा उससे सम्बन्धित चौवीस तत्त्वों को निर्दिष्ट क्रम से उत्पन्न कर 'लं' इस पीतवर्ण (पीले रंग के) पृथ्वी बीज के चौंसठ बार जप से कुम्भक करके पूर्ववत् पिंगला से रेचन करे। अनन्तर कुण्डलिनी को पुनः मूलाधार में प्रतिष्ठित करे। इस प्रकार

भूतशुद्धि करके समस्त भ्रमों को स्वयं से दूर कर शान्तचित्त होकर वाम भाग में श्रीगुरु का, दक्षिण भाग में श्रीगणेश का एवं मध्य में श्रीमहालक्ष्मी का ध्यान करके प्रणाम करे और फिर पूजा से सम्बन्धित निम्नलिखित एकादश (ग्यारह) न्यासों का क्रमशः शरीर में विन्यास करे। इन न्यासों में प्रथम मातृका-न्यास इस प्रकार है :—

अथ मातृकान्यासः ।

ॐ अं नमः मूर्ध्नि । ॐ आं नमः ललाटे । ॐ इं नमः दक्षनेत्रे । ॐ ईं नमः वामनेत्रे । ॐ उं नमः दक्षकपोले । ॐ ऊं नमः वामकपोले । ॐ ऋं नमः दक्षश्रुतौ । ॐ ॠं नमः वामश्रुतौ । ॐ ऌं नमः दक्षनासायाम् । ॐ ॡं नमः वामनासायाम् । ॐ एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे । ॐ ऐं नमः अधरोष्ठे । ॐ ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ । ॐ औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ । ॐ अं नमः जिह्वायाम् । ॐ अः नमः तालुनि । ॐ कं नमः दक्षबाहौ । ॐ खं नमः दक्षकूर्परे । ॐ गं नमः दक्षमणिबन्धे । ॐ घं नमः दक्षाङ्गुलिमूले । ॐ ङं नमः दक्षाङ्गुल्यग्रे । ॐ चं नमः वामबाहुमूले । ॐ छं नमः तत्कूर्परे । ॐ जं नमः तन्मणिबन्धे । ॐ झं नमः तदङ्गुलिमूले । ॐ ञं नमः तदङ्गुल्यग्रे । ॐ टं नमः दक्षोरुमूले । ॐ ठं नमः दक्षजानुनि । ॐ डं नमः दक्षगुल्फे । ॐ ढं नमः दक्षपादाङ्गुलिमूले । ॐ णं नमः तत्पादाङ्गुल्यग्रे । ॐ तं नमः वामपादोरूमूले । ॐ थं नमः वामजानुनि । ॐ दं नमः वामगुल्फे । ॐ धं नमः तत्पादाङ्गुलिमूले । ॐ नं नमः तत्पादाङ्गुल्यग्रे । ॐ पं नमः दक्षपार्श्वे । ॐ फं नमः वाम-

पार्श्वे । ॐ बं नमः पृष्ठे । ॐ भं नमः नाभौ । ॐ मं नमः जठरे । ॐ यं त्वगात्मने नमः हृदये । ॐ रं असृगात्मने नमः दक्षांसे । ॐ लं मांसात्मने नमः ककुदि । ॐ वं स्नाय्वात्मने नमः वामांसे । ॐ शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादिदक्षहस्तान्तम् । ॐ षं मज्जात्मने नमः हृदयादिवामहस्तान्तम् । ॐ सं मेदआत्मने नमः हृदयादिदक्षपादान्तम् । ॐ हं पूयात्मने नमः हृदयादिवामपादान्तम् । ॐ ल्डं[१] प्राणात्मने नमः पादादिहृदयान्तम् । ॐ क्षं जीवात्मने नमः हृदयादिशिरोऽन्तम् । इति मातृकान्यासः प्रथमः ॥ १ ॥

अथ सारस्वतन्यासः ।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अनामयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मध्यमयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः तर्जन्योः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अंगुष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करतलयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करपृष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मणिबन्धयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः हृदये । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिरसि । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिखायाम् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कवचे । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नेत्रयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करतलकरपृष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पूर्वे । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः आग्नेये । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः दक्षिणे । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः नैर्ऋत्ये । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः पश्चिमे । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः वायव्ये । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः उत्तरे । ॐ ऐं ह्रीं

क्लीं नमः ईशाने। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः ऊर्ध्वे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अधः ॥ इति द्वितीयः सारस्वतो न्यासः ॥

अथ तृतीयो मातृगणन्यासः।

ॐ ह्रीं ब्रह्माणी पूर्वतः पातु। ॐ ह्रीं माहेश्वरी आग्नेय्यां पातु। ॐ ह्रीं कौमारी दक्षिणे पातु। ॐ ह्रीं वैष्णवी नैर्ऋत्ये पातु। ॐ ह्रीं यज्ञवाराही पश्चिमे पातु। ॐ ह्रीं नारसिंही वायव्ये पातु। ॐ ह्रीं ऐन्द्री उत्तरे पातु। ॐ ह्रीं चामुण्डा ईशाने पातु। ॐ ह्रीं व्योमेश्वरी ऊर्ध्वं पातु। ॐ ह्रीं नागेश्वरी पाताले पातु ॥ इति तृतीयो मातृगणन्यासः ॥

अथ चतुर्थः षड्देवीन्यासः।

ॐ कमलाङ्कुशमण्डिता नन्दजा पूर्वाङ्गं पातु। ॐ खड्गपात्रधरा रक्तदन्तिका दक्षिणाङ्गं पातु। ॐ पुष्पपल्लवमूलादिहस्ता शाकम्भरी पश्चिमाङ्गं पातु। ॐ धनुर्बाणधरा दुर्गातिहारिणी दुर्गा वामाङ्गं पातु। ॐ शिरःपात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणपर्यन्तं पातु। ॐ चित्रकान्तिभृद् भ्रामरी चरणाभ्यां शिरःपर्यन्तं पातु ॥ इति चतुर्थः षड्देवीन्यासः ॥

अथ पञ्चमो ब्रह्मादिन्यासः।

ॐ ब्रह्मा सनातनः पादादिनाभिपर्यन्तं पातु। ॐ जनार्दनः नाभेर्विशुद्धिपर्यन्तं नित्यं पातु। ॐ रुद्रस्त्रिलोचनः विशुद्धेः शिखापर्यन्तं पातु। ॐ हंसः पादद्वयं पातु। ॐ वैनतेयः करद्वयं पातु। ॐ वृषभश्चक्षुषी पातु। ॐ जनार्दनः परात्परतरः सर्वानन्दमयो

हरिः सर्वाङ्गानि पातु ।। इति पञ्चमो ब्रह्मादिन्यासः ।।

अथ षष्ठो लक्ष्म्यादिन्यासः ।

ॐ अष्टादशभुजा सती महालक्ष्मीर्मध्यं पातु । ॐ अष्टभुजा सरस्वती ऊर्ध्वं पातु । ॐ त्रिशल्लोचनमण्डिता महाकाली अधः पातु । ॐ सिंहो हस्तद्वयं पातु । ॐ परहंसः अक्षिमण्डलं पातु । ॐ महिषेण समायुक्तः प्रेतः पादद्वयं पातु । ॐ महेशानश्चण्डिका च सर्वाङ्गानि पातु ।। इति षष्ठः लक्ष्म्यादिन्यासः ।।

अथ मन्त्रबीजन्यासः सप्तमः ।

ॐ ऐं नमः ब्रह्मरन्ध्रे । ॐ ह्रीं नमः दक्षनेत्रे । ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे । ॐ चां नमः दक्षकर्णे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः दक्षनासापुटे । ॐ यैं नमः वामनासापुटे । ॐ विं नमः मुखे । ॐ च्चें नमः गुदे ।। इति बीजन्यासः सप्तमः ।।

अथाष्टमो बीजन्यासः ।

ॐ ऐं नमः गुदे । ॐ ह्रीं नमः मुखे । ॐ क्लीं नमः वामनासापुटे । ॐ चां नमः दक्षनासापुटे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः दक्षकर्णे । ॐ यैं नमः वामनेत्रे । ॐ विं नमः दक्षनेत्रे । ॐ च्चें नमः ब्रह्मरन्ध्रे ।। इत्यष्टमो बीजन्यासः ।।

अथ नवमो मन्त्रन्यासः ।

ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणपर्यन्तं

पूर्वाङ्गे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणावधि दक्षिणाङ्गे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणावधि पृष्ठे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकाच्चरणावधि वामाङ्गे । ॐ मूलं ९ नमः मस्तकात्पादान्तम् । ॐ मूलं ९ नमः पादादिशिरोऽन्तम् । इति नवमो मन्त्रन्यासः ॥

अथ दशमः षडङ्गन्यासः ॥

ॐ मू० ९ नमः हृदयाय नमः । ॐ मू० ९ नमः शिरसे स्वाहा । ॐ मू० ९ नमः शिखायै वषट् । ॐ मू० ९ नमः कवचाय हुम् । ॐ मू० ९ नमः नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ मू० ९ नमः अस्त्राय फट् । ॥ इति षडङ्गन्यासः दशमः ॥

अथैकादशन्यासः ।

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा इत्येकं मन्त्रं पठित्वा कृष्णवर्णं ध्यायन् नाभ्यादिचरणान्तं व्यापकमुद्रया न्यसेत् । पुनर्बालार्कसदृशं ध्यायन् ॐ शूलेन पाहि नो देवीति श्लोकचतुष्टयं पठित्वा कण्ठादिनाभ्यन्तं पूर्ववन्न्यसेत् । पुनः शुद्धस्फटिकसंकाशं ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे इत्यादि श्लोकपञ्चकं ध्यात्वा पठन् मूर्धादिकण्ठान्तं न्यसेत् ॥ इत्येकादशन्यासः ॥

इन पूर्वोक्त एकादश न्यासों को करने के बाद योनिमुद्रा के द्वारा स्वयं का देवी के रूप में ध्यान करके अपने हृदय में आगे बतलाये जाने वाले पूजापीठ की भावना करके उसके मध्य में मूलमन्त्र (नवार्ण मन्त्र) के तीनों बीजों का ध्यान करके मध्य के बीज में समस्त देवों के शरीर तेज से उत्पन्न श्रीमहालक्ष्मी के रहस्योक्त स्वरूप का ध्यान करके देवी के साथ स्वयं की एकरूपता की भावना कर, उनके

दक्षिण में (दाहिनी ओर) प्रथम बीज में श्रीमहाकाली के रहस्योक्त स्वरूप का ध्यान करके श्रीमहालक्ष्मी के वाम भाग में तृतीय बीज में श्रीमहासरस्वती के रहस्योक्त रूप का ध्यान करना चाहिए। पूर्वोक्त तीनों शक्तियोंके ध्यानमें उनके आयुधों का ध्यान दाहिने हाथ के नीचे के हाथ से आरम्भ होकर बायें हाथ के नीचे वाले हाथ तक किया जाता है। अपने हृदयकमल में श्रीमहासरस्वती का ध्यान करके अग्रिम पीठपूजा के साथ श्रीमहालक्ष्मी की मानसोपचार पूजा उनकी अङ्गदेवताओं और आवरणदेवताओं के साथ करनी चाहिए। मूलाधार चक्र में आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा तथा ज्ञानात्मा के स्वरूप में अवस्थित चतुरस्रकुण्ड का कुण्डलिनी की अग्नि से प्रज्वलित रूप में ध्यान कर मूलमन्त्र का उच्चारण करके उसके अन्त में **अहन्तां जुहोमि स्वाहा**, इस मन्त्र का उच्चारण करे। इस प्रकार अहन्ता, असत्य, पैशुन्य, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य इन सबको सुषुम्णा स्रुक् से युक्त मनरूपी स्रुवा से पृथक् पृथक् हवन कर सम्पूर्ण वैरिसमूह को निःशेषरूप से दग्ध करने के बाद स्थिरचित्त होकर यथाशक्ति मूलमन्त्र का जप करे एवं जप श्रीदेवी को समर्पित कर बाह्यपूजा करे। बाह्यपूजा का प्रकार—

अपनी दाहिनी ओर भूमि पर रक्तचन्दन मिश्रित जल से त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्र बनाकर चन्दन, अक्षत एवं पुष्प से **ऐं ह्रीं व्यापकमण्डलाय नमः**, इस मन्त्र से मण्डल की पूजा कर उसके ऊपर अस्त्रमन्त्र से प्रक्षालित आधारस्वरूप त्रिपादी को स्थापित कर **मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः**, इस मन्त्र से त्रिपादी का पूजन कर, अर्घ्यपात्र को अस्त्रमन्त्र से प्रक्षालित कर त्रिपादी के ऊपर स्थापित करे। अनन्तर **अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः**, इस मन्त्र से चन्दनादि के द्वारा अर्घ्यपात्र का पूजन कर मूलमन्त्र तथा अकार से आरम्भ कर क्षकार पर्यन्त मातृकावर्णों का उच्चारण करते हुए उसको शुद्ध जल से पूर्ण करे एवं उसमें गन्धाक्षत डालकर **ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः**, इस मन्त्र

से जल में सोममण्डल की भावना कर उसकी पूजा करके सूर्यमण्डल से अंकुशमुद्रा द्वारा—

ॐ ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे।
तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर॥

इस मन्त्र से तीर्थों का आवाहन कर धेनुमुद्रा द्वारा—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

इस मन्त्र से उस जल का अमृतीकरण करे और **'हुम्'** का उच्चारण कर उसे अवगुण्ठित कर चक्रमुद्रा प्रदर्शित कर, अस्त्र मुद्रा से संरक्षण कर, मूलमन्त्र का आठ वार उच्चारण कर मत्स्यमुद्रा से उसे अभिमन्त्रित करे, पुनः अस्त्र से संरक्षण तथा कवच से अवगुण्ठन करके मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए उस जल से स्वयं का तथा पूजा की वस्तुओं का प्रोक्षण करे तथा गन्धादि से स्वयं को अलंकृत कर देवता के साथ स्वयं के अभिन्न रूप का ध्यान करते हुए पीठपूजा आरम्भ करे। पीठपूजा की विधि :—

पहले लिखे हुए यन्त्र को किसी सुन्दर पीठ पर संस्थापित कर अर्घ्यजल से प्रोक्षण कर षट्कोण में **ॐ ॐकारपीठाय नमः**, अष्टदल में **ॐ पूं पूर्णगिरिपीठाय नमः**, एवं चतुरस्र में **ॐ कां कामरूपपीठाय नमः**, इन मन्त्रों से पूजन करना चाहिए। पूजापीठ के बाहर अपने अग्रभाग से आरम्भ करके चारों दिशाओं में प्रदक्षिणा के क्रम से पूर्व में **ॐ गं गणेशाय नमः**, दक्षिण में **ॐ क्षां क्षेत्रपालाय नमः**, पश्चिम में **ॐ पां पादुकाभ्यो नमः**, उत्तर में **ॐ वं वटुकाय नमः**, पीठ के बाहर आग्नेय कोण में **ॐ जं जयायै नमः**, नैर्ऋत्य कोण में **ॐ विं विजयायै नमः**, वायव्य कोण में **ॐ जं जयन्त्यै नमः**, ईशान कोण में **ॐ अं अपराजितायै नमः** इस प्रकार पूजन कर पीठ की चारों दिशाओं में पूर्ववत् प्रदक्षिणा क्रम से पूर्व दिशा में **ॐ विं विष्णुमायायै नमः**, **ॐ चें चेतनायै नमः**, **ॐ बुं बुद्ध्यै नमः**, **ॐ निं निद्रायै**

नमः, क्षुं क्षुधाय नमः, इन पञ्च शक्तियों का पूजन करे। दक्षिण में ॐ छां छायायै नमः, ॐ शं शक्त्यै नमः, ॐ तृं तृष्णायै नमः, ॐ क्षां क्षान्त्यै नमः, ॐ जां जात्यै नमः, ॐ लं लज्जायै नमः, इन छः शक्तियों का पूजन करे। पश्चिम में ॐ शां शान्त्यै नमः, ॐ श्रं श्रद्धायै नमः, ॐ कां कान्त्यै नमः, ॐ लं लक्ष्म्यै नमः, ॐ धृं धृत्यै नमः, ॐ वृं वृत्यै नमः, इन छः शक्तियों का पूजन करे। उत्तर में ॐ स्मृं स्मृत्यै नमः, ॐ दं दयायै नमः, ॐ तुं तुष्ट्यै नमः, ॐ पुं पुष्ट्यै नमः, ॐ मां मात्रे नमः, ॐ भ्रां भ्रान्त्यै नमः, इन छः शक्तियों का पूजन करे। नालमूल में आधारादिचतुष्टय का पूजन करे। ऊर्ध्वोर्ध्व क्रम से ॐ आं आधाराय नमः, ॐ कूं कूर्माय नमः, ॐ शें शेषाय नमः, ॐ पृं पृथिव्यै नमः, ॐ नां नालायै नमः, ॐ पं पद्माय नमः।

इनका पूजन कर ज्ञानरूपी अमृत से स्वयं के सुतृप्त होने की भावना कर मण्डलार्चन करना चाहिए। सर्वप्रथम अष्टपत्र में पूर्व से आरम्भ कर ईशान कोण तक पूजा करनी चाहिए। पूर्वदल में ॐ ब्रं ब्रह्माण्यै हंसवाहनायै नमः, आग्नेय दल में ॐ मां माहेश्वर्यै वृषभारूढायै नमः, दक्षिण दल में ॐ कौं कौमार्यै मयूरवाहनायै नमः, नैर्ऋत्य में ॐ वैं वैष्णव्यै गरुडोपरिसंस्थितायै नमः, पश्चिम में ॐ यं यज्ञवाराह्यै दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरायै नमः, वायव्य में ॐ नां नारसिंह्यै महास्वनायै नमः, उत्तर में ॐ ऐं ऐन्द्र्यै गजराजसमारूढ़ायै नमः, ईशान में ॐ चां चामुण्डायै गणनाथपरिवारायै सदा रुद्रेण संयुतायै मुण्डमण्डितायै नमः, इनका पूजन करने के बाद षट्कोण की ब्रह्माणी प्रभृति देवियों का कर्णिका के स्पर्श करने वाले ब्रह्माणी के कोण से आरम्भ कर के दाहिनी तरफ से पूजन करे। अग्रकोण में ॐ नं नन्दजायै हेमगर्भायै नमः, आग्नेय कोण में ॐ रं रक्त-दन्तिकायै सुरक्तायै नमः, नैर्ऋत्य में ॐ शां शाकम्भर्यै नीलायै नमः, पश्चिम में ॐ दुं दुर्गायै सर्वदुःखहारिण्यै नमः, वायव्य में ॐ भीं भीमायै दंष्ट्राञ्चितमुखाय नीलायै पात्रशिरोधरायै नमः,

ईशान कोण में **ॐ भ्रां भ्रामर्यै तेजोमण्डलदुर्द्धर्षायै वरदायै नमः।**

यह पूजन करने के बाद पुष्पाञ्जलि अर्पित करते हुए षट्कोण कर्णिका के मध्य में अवस्थित प्रथम बीज में श्रीमहाकाली का रहस्योक्त ध्यान प्रकार से दशवक्त्रा, दशभुजा, दशचरणा, अञ्जन के समान कृष्णप्रभा वाली, तीस नेत्रों की माला से सुशोभित एवं दाहिने हाथ के नीचे वाले हाथ से बायें हाथ के नीचे वाले हाथ तक खड्ग, बाण, गदा, शूल, चक्र, पाश, शङ्ख, भुशुण्डी, परिघ, धनुष और मुण्डों को धारण किए हुए श्रीमहाकाली का ध्यान कर **ऐं महाकाल्यै नमः** इस मन्त्र से श्रीमहाकाली का सामर्थ्यानुसार दिव्यपूजन सामग्री से पूजन करे। मध्यबीज में श्रीमहालक्ष्मी का रहस्योक्त ध्यानप्रकार के अनुसार श्वेतानना, नीलभुजा, सुश्वेतस्तनमण्डला, शरीर के मध्य में रक्त आभावाली, रक्तपादा, नीलजङ्घा, रूप एवं यौवन से हर्षित, सुशोभन जघन वाली, विभिन्न रंगों की माला एवं वस्त्रों और अनुलेपों से अलंकृत अष्टादश भुजा, एवं दाहिने अधःकर से बायें अधःकर तक अक्षमाला, कमल, बाण, असि. कुलिश, गदा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शङ्ख, घण्टा, पाश, शक्ति, दण्ड, चर्म, चाप, पानपात्र और कमण्डलु को धारण किये हुये श्रीमहालक्ष्मी का ध्यान कर **ॐ ह्रीं महालक्ष्म्यै नमः**, इस मन्त्र से यथाशक्ति उपलब्ध दिव्य सामग्री से पूजन करे। अनन्तर कामबीज में रहस्योक्त ध्यानानुसार शुक्लवर्णा, श्वेतवर्ण की माला, श्वेत अनुलेप एवं वस्त्र से विभूषित, अष्टभुजा, दाहिने अधःकर से बायें अधःकर तक बाण, मुसल, शूल, चक्र, शङ्ख, घण्टा, लाङ्गल, धनुष धारण किये हुए श्रीमहासरस्वती की ध्यान कर **ॐ क्लीं सरस्वत्यै नमः**, इस मन्त्र से यथालाभोपचार पूजन करना चाहिये। श्रीमहा-लक्ष्मी के वामभाग में छिन्नशीर्ष महिष का ध्यान कर **ॐ मं महिषाय नमः**, इस मन्त्र से गन्धाक्षत, धूप, दीप नैवेद्यादि से पूजन कर, श्रीमहालक्ष्मी के दक्षिण भाग में सिंह का ध्यान कर **ॐ सिं सिंहाय नमः**, इस मन्त्र से यथालाभोपचार से पूजन एवं तर्पण कर यन्त्र के अग्रभाग में सर्वोत्तम पीठ चौकी

आदि स्थापित कर, उस पर लाल रंग का तूल आदि बिछाकर उसके मध्य में पुष्प का निक्षेप कर मध्य बीज में योगमुद्रा से श्रीमहालक्ष्मी का अनवरत ध्यान कर, मण्डल में अवस्थित सर्वशक्तियों से स्वयं की ऐक्य भावना करके मण्डल से पीठ स्थल पर उन सबका आवाहन करना चाहिए। पुनः मूलमन्त्र के साथ—

महालक्ष्मि एह्योहि आगच्छ २ सन्निधिं कुरु २।
ॐ महापद्मवनान्तस्थे कारणानन्दविग्रहे।
सर्वभूतहिते मातरेह्योहि परमेश्वरि।

यह पढ़ कर मूलमन्त्र का उच्चारण कर पीठ पर पुष्पाञ्जलि अर्पित करे। अनन्तर आवाहनी मुद्रा प्रदर्शित कर—

ॐ देवेशि भक्तिसुलभे सर्वावरणसंयुते।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव॥

यह प्रार्थना कर मूलमन्त्र का उच्चारण कर स्थापनी मुद्रा प्रदर्शित करते हुए **'श्रीमहालक्ष्मि इह तिष्ठ तिष्ठ।'** यह प्रार्थना करे। पुनः सन्निधापन मुद्रा प्रदर्शित करते हुए मूलमन्त्र के साथ **'श्रीमहालक्ष्मि इह सन्निधेहि सन्निधेहि।'** इस प्रकार सन्निधापन करने के बाद सन्निरोधन मुद्रा प्रदर्शित करते हुए मूलमन्त्र के साथ **'श्रीमहालक्ष्मि इह सन्निरुद्धा भव भव।'** इससे सन्निरोधन कर सम्मुखीकरण मुद्रा प्रदर्शित करते हुए मूलमन्त्र के साथ **'श्रीमहालक्ष्मि इह संमुखीभव भव,'** इस प्रकार देवी को सम्मुखीकृत कर अवगुण्ठन मुद्रा प्रदर्शित करते हुए मूल मन्त्र के साथ **'श्रीमहालक्ष्मि इहावगुण्ठिता भव भव,'** इससे अवगुण्ठन करने के बाद श्रीदेवी के अङ्ग में षडङ्गों का न्यास कर मूलमन्त्र का उच्चारण कर **'श्रीमहालक्ष्मि सकलीकृता भव,'** यह कह कर, धेनुमुद्रा प्रदर्शित करते हुए मूलमन्त्र के साथ **'श्रीभगवत्यमृतीकृता भव,'** यह कहकर देवी के मस्तक पर अमृतवृष्टि की भावना करे। पुनः परमीकरणमुद्रा प्रदर्शित कर मूलमन्त्र के साथ **'श्रीभगवति परमीकृता भव,'** इस मन्त्र से देवी को परमामृतमयी के रूप में स्थित मानकर भावना करनी चाहिए। अनन्तर नवमुद्राएं प्रदर्शित कर अर्घ्यजल से देवी का प्रोक्षण करे। फिर लेलिहान मुद्रा के द्वारा प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिए।

श्रीदेवी की प्राणप्रतिष्ठा के बाद अक्षमाला, कमल, बाण, खड्ग, वज्र, गदा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शङ्ख, घण्टा, पाश, शक्ति, दण्ड, चर्म, चाप, पानपात्र, कमण्डलु के माध्यम से अठारह मुद्राएं प्रदर्शित कर, मूलमन्त्र के साथ **'श्रीमहालक्ष्म्यै एतत्पाद्यं नमः।'** यह उच्चारित कर श्यामा तुलसी, आकड़ा, दूर्वा, कमल, विष्णुकान्ता सहित पाद्य (जल) को देवी के चरणों में अर्पित करना चाहिए। पुनः देवी के मस्तक पर पुष्प, अक्षत, चन्दन से संयुक्त जल से, मूल के साथ **इदमर्घ्यं स्वाहा**। इससे अर्घ्य देना चाहिए। अर्घ्य देकर धेनुमुद्रा प्रदर्शित कर, मूलमन्त्र के साथ **'इदमाचमनीयं श्रीमहालक्ष्म्यै वं।'** इस मन्त्र से जातीलवङ्गकक्कोल से संयुक्त आचमन मुख में देना चाहिये। पुनः घृत, दधि, मधु से संयुक्त मधुपर्क मुख में अर्पितकर पूर्ववत् आचमन कराना चाहिए। मूलमन्त्र के साथ **'श्रीमहालक्ष्मि इदं स्नानीयं नमः।'** इस से सर्वाङ्ग में सुगन्धित तैल का अभ्यङ्ग करके सुगन्ध एवं आमलक आदि पिष्टद्रव्य से उद्वर्तन (शुद्धीकरण) कर शुद्धजल से स्नान कराकर पञ्चामृत से अभिषेक कर, पुनः नाना तीर्थजलों से अभिषेक कर पूर्ववत् आचमन दे कर योनिमुद्रा प्रदर्शित कर, मूल के साथ **'एतानि वस्त्राभरणानि श्रीमहालक्ष्म्यै निवेदयामि नमः।'** इस मन्त्र से श्रीदेवी को विभिन्न रंग के परिधान से सुशोभित कर पूर्ववत् आचमन करावे। अनन्तर चन्दन, कर्पूर, काले अगर से संपादित गन्धद्रव्य को मध्यमा, अनामिका एवं अंगुष्ठ के संयोजन द्वारा, मूल के साथ **श्रीमहालक्ष्मि एष ते गन्धो नमः।** इस मन्त्र से देवी के मस्तक पर अर्पित करे। पुनः मूल के साथ **'श्रीमहालक्ष्मि इमानि पुष्पाणि वौषट्।'** इस मन्त्र से मस्तक पर पुष्प अर्पित करे। इसके बाद मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए मस्तक, हृदय, आधार, पादद्वय सहित सर्वाङ्गों में पांच बार पुष्पाञ्जलि अर्पित कर उसी प्रकार पुष्प माला भी समर्पित कर, विल्व पत्र, गन्धालोडित (गन्ध से मिश्रित) अक्षत समर्पित कर धूप-दीप अर्पण करे। **धूप-दीप के अर्पण का प्रकार**—धूप करने के पात्र को अस्त्र से प्रोक्षण कर, **'नमः'** इससे अर्चना कर मूलमन्त्र के अन्त में **'श्रीमहालक्ष्मि एष ते धूपो**

नमः ।' इससे उत्सर्ग कर 'ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा ।' इस मन्त्र से वाम भाग में अवस्थित घण्टा का पूजन कर उसे बायें हाथ से बजाते हुए मूल मन्त्र एवं गायत्री का उच्चारण करते हुए तीन बार बजाकर श्रीदेवी को धूपित कर, धूपपात्र को वाम भाग में स्थापित करना चाहिए । इसी तरह मूल के साथ 'श्रीभगवति एष ते दीपो नमः ।' इस मन्त्र से दीप अर्पित कर देवी के दाहिने भाग में स्थापित करना चाहिए। देवता के निमित्त वस्तुसमर्पण सर्वत्र अर्घोदक से ही करना चाहिये। इसके बाद देवी को नैवेद्य अर्पित करने के लिए, उन के सम्मुख त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्र के रूप में मण्डल का निर्माण कर 'ह्रीं आधारशक्तये नमः ।' इस मन्त्र से आधार शक्ति का पूजन कर उसके ऊपर नैवेद्य से परिपूरित पात्र स्थापित कर, अस्त्र से संरक्षित कर, चक्रमुद्रा के द्वारा 'यम्' इस बीज का दस बार जप कर, उसके दोषों का शोषण कर, 'रं' इस मन्त्र का दस बार जप कर दोषों को दग्ध कर 'वम्' इस बीज का दस बार जप कर धनुमुद्रा से अमृतीकृत कर, मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित कर 'नमः' इस मन्त्र से उसमें पुष्प का निक्षेप कर, मूल के साथ 'इदं नैवेद्यं श्रीमहालक्ष्म्यै निवेदयामि ।' इस मन्त्र से निवेदन कर ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा । इस मन्त्र से जल छोड़कर वामहस्त से ग्रासमुद्रा बांधकर दाहिने हाथ से प्राणादि पञ्चमुद्राओं को प्रदर्शित करना चाहिए। ॐ प्राणाय स्वाहा । इस मन्त्र से कनिष्ठिका, अनामिका एवं अंगुष्ठ के संयोजन से ॐ अपानाय स्वाहा । इस मन्त्र से तर्जनी, मध्यमा एवं अंगुष्ठ के संयोजन से ॐ व्यानाय स्वाहा, इस मन्त्र से मध्यमा, अनामिका एवं अंगुष्ठ के संयोजन से ॐ उदानाय स्वाहा इस मन्त्र से तर्जनी, मध्यमा एवं अंगुष्ठ के संयोजन से ॐ समानाय स्वाहा, इस मन्त्र से सभी अंगुलियों के साथ अंगूठे का स्पर्श करे। अनन्तर सुशीतल जल प्रदान कर, देवी के तृप्तहोने की भावना कर ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा, इस मन्त्र से जल प्रक्षेप कर, हाथ और मुख के प्रक्षालनार्थ आचमन देकर, ताम्बूल को अमृतीकृत कर मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित कर, उस पर पुष्प निक्षेप करके वामहस्त की तत्त्वमुद्रा के द्वारा उसका स्पर्श, कर

दाहिने हाथ के द्वारा अर्घोदक से, मूलमन्त्र के साथ **इदं ताम्बूलं श्रीमहालक्ष्म्यै निवेदयामि,** इस मन्त्र से ताम्बूल निवेदित कर श्रीदेवी के सर्वथा प्रसन्न होने की भावना करे। प्रणव के द्वारा प्राणायाम कर, नवार्ण मन्त्र के ऋष्यादि का स्मरण कर संकल्पानुसार जप करे। इसके बाद रहस्यत्रय के साथ श्रीचण्डिका की सात सौ मन्त्रों (सप्तशती) से स्तुति कर, पुनः अष्टोत्तरशत मूलमन्त्र का जप करना चाहिए। अनन्तर खीर, तिल एवं घृत से दशांश हवन कर, नवार्ण से भी दशांश हवन करना चाहिये। अन्त में—

"ॐ नमो देव्यै महादेव्य शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताःस्म ताम् ॥"

इस श्लोक-मन्त्र से हवन कर ऋतुफलों से भी आहुति देकर, किये हुए जप एवं हवन को देवी को अर्पित कर श्रीमहालक्ष्मी को प्रणाम करे।

"शूलेन पाहि नो" आदि चार मन्त्रों से प्रदक्षिणा करके श्रीचण्डिका के ध्यान में निमग्न होकर आसन पर बैठना चाहिए तथा दोनों हाथ जोड़कर **'ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे'** इस मन्त्र से आरम्भ कर **'लोकानां वरदा भव'** तक के मन्त्रों से प्रणाम कर, प्रार्थना कर मनोवाञ्छित कामना का श्रीदेवी से निवेदन कर संहारमुद्रा के द्वारा श्रीदेवी को अपने हृदयकमल में अवस्थित होने की भावना करे। फिर अर्घ्यपात्र उठाकर—

"ॐ गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम् ॥"

इस मन्त्र को पढ़कर विसर्जन करना चाहिए।

निर्माल्य को पवित्र स्थान पर विसर्जित कर आनन्दपूर्वक विहार करे।

साधक इस क्रम से नवार्ण मन्त्र अथवा सप्तशती स्तोत्र की विधिवत् आराधना करके, अपनें मनोवाञ्छित फलों को प्राप्त करता है।

खिलमार्कण्डेय क्रम के अनुसार श्रीचण्डिका पूजापद्धति समाप्त हुई।

अथ शतचण्डीपाठ–पद्धतिः ।

तत्र अनावृष्ट्याद्यखिलदुरितोपशान्त्यर्थं राज्यावाप्त्यादिसकलकामनासिद्ध्यर्थं च उक्तलक्षणसंपन्नो यजमानः शिवालयसमीपे समे भूतले यथोक्तलक्षणं मण्डपं विधाय तन्मध्ये यथोक्तलक्षणां वेदीं निर्माय तस्या ईशानकोणे यथोक्तलक्षणं चतुरस्रं कुण्डं विरच्य तथा यथोक्तलक्षणान् नव ब्राह्मणान् दशममाचार्यं सर्वलक्षणसंपन्नमिति दश विप्रान् प्रमाणोक्तमधुपर्क-विधानेन आचार्यब्रह्मर्त्विगष्टकत्वेन वरणपूर्वकमर्चयित्वा आचार्याय इतरब्राह्मणापेक्षया द्विगुणां वरणसामग्रीं दत्वा तदनुज्ञया शुभासने समुपविष्टः सपत्नीकः तैः कृतस्वस्त्ययनः सुतबन्धु-सुहृद्वृतो वेदघोषनानावादित्रस्वनपूर्वकं ब्राह्मणैः सह चण्डिकामण्डपं गत्वा प्राग्वद् द्वारपूजां कृत्वा पश्चिमद्वारेण मण्डपं प्रविश्य कृताञ्जलिराचार्याय चण्डिकापूजार्थमनुज्ञां दद्यात् । तत आचार्यः प्राप्तानुज्ञः प्रागुक्तपूजाप्रकरणोक्तक्रमेण स्नानादिचण्डिकातर्पणान्तं कर्म विधायाचम्य प्राणायामं संकल्पं च विधाय प्रागुक्तनवचण्डिकाविधानवद् दिग्देवीः संपूज्य बलिं दत्वा मण्डपे कश्चित् पीठे ग्रहमण्डलं निर्माय तत्र स्वशाखोक्तविधिना नवग्रहान् संपूज्य तत्तद्वैदिकमन्त्रै र्लोकपालान् दिक्पालाँश्च संपूज्य वेद्यां प्रागुक्तविधिना प्रधानकुम्भं संस्थाप्य मण्डपस्य बहिः पूर्वादितो नित्यपूजाप्रकरणोक्तप्रकारेण चतुर्दिक्षु बलिं भूतादिभ्यो दत्वा मण्डपस्य पूर्वादिद्वार-चतुष्टये प्रतिद्वारं पूर्वोक्तविधिना द्वौ द्वौ कुम्भौ गालितोदकपूर्णौ संस्थाप्याचम्य वेद्यां स्वासन-

मास्तीर्य तत्संपूज्योपविश्य बद्धपद्मासनः चण्डिकां ध्यात्वा पूजाप्रकरणोक्तक्रमेण भूतशुद्ध्यादिकं विधाय मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा मूलमन्त्रस्यर्ष्याद्यखिलं न्यासजातं विधाय प्रधानकुम्भे पीठपूजापुरःसरं चण्डिकामावाह्य सचक्रां साङ्गां सावरणां ध्यात्वा नित्यपूजोक्तविधिना अर्घ्यादिस्थापनपूर्वकं सम्यक् संपूज्य परितोषयेत् । अत्र पूजासामग्री तु अशीतिगुञ्जामिता कस्तूरी । तावन्मानं कुंकुमम् । तावज्जातीफलम् । तावान् कर्पूरः । एतच्चतुष्टयं पलमात्रचन्दनेन घर्षयेत् । तेन पलद्वयमनुलेपनं भवति । पलं तु विंशत्युत्तरत्रिंशद्गुञ्जामितम् । अत्युत्कृष्टं वस्त्रं तु मानानुक्तेः स्त्रीजनपरिधानयोग्यं ग्राह्यम् । गद्याणकमानं तु लौकिकतोलकार्धम् । पञ्चविंशतिर्दीपा घृतपूरिताः । कुडवद्वयमात्रं हविष्यान्नं नैवेद्यम् । शतद्वयं नागवल्लीदलम् । तदनुरूपं पूगफलं कर्पूरं खदिरसारादि ग्राह्यम् । इत्थं पूजासामग्रीं संपाद्य नवभिर्ब्राह्मणैः सह महालक्ष्मीं साङ्गां सावरणां संपूज्य आचार्यो ब्राह्मणेभ्यो बहुमानपुरःसरं सप्तशतीपाठार्थमाज्ञां दद्यात् । अत्र यावच्छ्रीदेव्याः पूजनं तावत् सर्वे ब्राह्मणाः जयचण्डीति ब्रुवन्तस्तां ध्यायेयुः । ततस्ते ब्रह्मादयो विप्रा वेद्यामाचार्यसंनिधौ पूजिते स्वे स्वे आसने समुपविश्य भूतशुद्ध्याद्यखिलं न्यासजातं विधाय सुसंहृष्टमनसश्चण्डिकाध्यानपूर्वकं विधिवच्चरितत्रयं सरहस्यं जपित्वोत्थाय श्रीमहालक्ष्मीं प्रदक्षिणनमस्कारैः पुनः पुनः परितोष्यासने समुपविश्य प्रार्थनाश्लोकान् पठित्वा यजमानस्येष्टानि फलानि पुनः पुनः प्रार्थयेरन् । ततो यजमानः भक्तियुक्तः सुलक्षणाः दश

कुमारीर्वक्ष्यमाणक्रमेण संपूज्य संभोज्य ताम्बूलदक्षिणाभिः परितोष्य पश्चादतिभक्तिपूर्वकमाचार्यादि दशविप्राँस्तथैव भोजयित्वा बन्धुभिः सार्धं स्वयमपि भुक्त्वा नृत्तगीतवादित्रनिःस्वनै र्वेदघोषैः सत्कथाभिश्च निशां नयेत् । ततो द्वितीयदिवसे आचार्यादयः स्नात्वा नित्यक्रियां निर्वर्त्य ध्यानपूर्वकं सर्वं चण्डिकातर्पणादिकं कृत्वा दिग्देवीपूजनं च कृत्वा बहिर्भूतबलिं दत्वा श्रीदेवीं प्रदक्षिणीकृत्य प्रणम्य अतिमनोहरे पूजामण्डपे स्वे स्वे चासने समुपविश्य 'जय चण्डि' इति जपन्तो यावद्दुर्गापूजनं भवति तावत्तिष्ठेयुः । आचार्योऽपि पूर्वदिवसापेक्षया यजमानेन संपादितै र्द्विगुणवस्त्राभरणगन्धपुष्पादिसमस्तपूजाद्रव्यै र्विशेषतः पूजां कृत्वा द्विगुणं परितोषणं भगवत्याः कुर्यात् । ततः साचार्या ब्राह्मणा द्विगुणं जपं पाठं च कुर्युः । ततो यजमानः द्विगुणं कुमारीब्राह्मणभोजनं च कारयित्वा पूर्ववद् रात्रौ जागरणमपि कुर्यात् । एवं तृतीयेऽहनि त्रिगुणं पूजाजपपाठकुमारीब्राह्मणभोजनादि विधेयम् । एवमेव चतुर्थेऽहनि चतुर्गुणं सर्वं कुर्यात् । ततः पञ्चमे दिवसे वक्ष्यमाणविधिना अग्निं संस्थाप्य तत्र घृततिलसहितपायसेन जपदशांशेन चरितत्रयस्य सरहस्यस्य प्रतिश्लोकेन 'नमो देव्यै महादेव्यै' इति श्लोकेन वा पूजाप्रकरणोक्तेन नवाक्षरमन्त्रेण वा होमं कृत्वा दिग्देवीनां नाममन्त्रेण प्रत्येकं शतशतसंख्या पायसेन तत्तन्नाम्ना हुत्वा नवग्रहाणां वेदोक्ततत्तन्मन्त्रेण तस्य तस्योक्तसमिद्भिर्घृतैश्चरुभिस्तिलैश्च प्रतिद्रव्येण शतं शतमेकैकस्य हुत्वा वैदिकमन्त्रै स्तैरेव द्रव्यैः शतं शतमाचार्यादयो द्विजा जुहुयुः । इत्थं होमं

संपाद्य श्रीदेवीं प्रणम्य यजमानस्तस्मिन्नग्नये स्रुचं निधाय घृतकुम्भदशांशेन घृतेन 'मूर्द्धानं दिवो अरतिमिति' वैदिकमन्त्रेण अच्छिन्नधारया पूर्णाहुतिं जुहुयात् । अथवा नवाक्षरमन्त्रेण पूर्णाहुतिं दद्यात् । ततो वक्ष्यमाणविधिना संस्रवप्राशनं प्रणीतामार्जनं च कृत्वा जपं हुतं च श्रीमहालक्ष्म्यै निवेद्य मनोरथं प्रार्थयित्वा यजमानो ब्राह्मणाय निष्कषट्कहेमसमेतं वस्त्रालंकारयुक्तं गोमिथुनद्वयं दत्वा 'यस्याः प्रभावमतुलमिति' श्लोकं कृताञ्जलिः पठित्वा आचार्यं प्रणम्योक्तलक्षणं गोमिथुनाष्टकं तस्मै दत्वा अष्टर्त्विग्भ्यश्चैकैकं गोमिथुनमेकैकमुक्तलक्षणं दद्यात् । ततो यजमानं शान्तचित्तं सुखासने समुपवेश्य आचार्यः ऋत्विजश्च कुंकुमाक्षतदूर्वाचन्दनदधीन्यादाय चतुर्णां स्तोत्राणां श्लोकमेकमेकं चोच्चार्याशीर्वादं दद्युः । ततो यजमानः सभार्यः सपुत्रः कृताशीर्वादमङ्गलः श्रीमहालक्ष्मीपरायणो रत्नपुष्पाञ्जलिं देव्यै दत्वा श्रीदेवीं विसृज्य ब्राह्मणेभ्यो भूरि दानं दत्वा मङ्गलघोषशान्तिपाठादिवेदघोषं कुर्वद्भिः सह ब्राह्मणैर्बन्धुभिर्भृत्यवर्गैरिष्टसुहृद्भिः सार्धं तोरणाद्यलंकृतं स्वगृहं प्रविशेदिति शिवम् ।

।। इति शतचण्डीयज्ञविधिः ।।

शतचण्डी विधान का हिन्दी अनुवाद

अनावृष्टि, महामारी आदि समस्त उपद्रवों तथा अमङ्गलों की शान्ति हेतु एवं सभी मनोकामनाओं की पूर्ति हेतु शतचण्डी पाठ विधान भारतवर्ष में चिरकाल से प्रचलित है। अतः यहां संक्षिप्त शत-चण्डी विधान प्रस्तुत किया जाता है—

शिवालय के समीप समतल भूमि पर शास्त्रीय विधानानुसार मण्डप एवं वेदी का निर्माण कर वेदी के ईशान कोण में चतुरस्र कुण्ड बनाना चाहिये। अनन्तर, यजमान आचार्य सहित दश कर्मनिष्ठ ब्राह्मणों अर्थात् आचार्य, ब्रह्मा एवं आठ ऋत्विजों का मधुपर्क विधान से वरण कर अर्चन करे। अन्य ब्राह्मणों की अपेक्षा आचार्य को दुगुनी वरण सामग्री देकर उसकी आज्ञा प्राप्त कर सपत्नीक आसन पर बैठकर ब्राह्मणों द्वारा स्वस्तिवाचन करने के बाद वेदघोष और माङ्गलिक वाद्य के साथ पुत्र एवं बन्धुओं और मित्रों के साथ ब्राह्मणों सहित मण्डपस्थल पर जाकर द्वार पूजा करे एवं पश्चिम द्वार से मण्डप में प्रविष्ट होकर चण्डिका पूजन करने हेतु आचार्य को अनुमति प्रदान करे। अनन्तर, आचार्य पूजा प्रकरण में निर्दिष्ट सामग्री के साथ चण्डिका के स्नान एवं तर्पणान्त कर्म सम्पादन करने के बाद आचमन, प्राणायाम तथा संकल्प के साथ विधि पूर्वक दिग्देवियों का पूजन कर, बलि देकर मण्डप में किसी चौकी पर ग्रह-मण्डल बनाकर, वैदिक मन्त्रों से अपनी शाखोक्त विधान के अनुसार नवग्रहों, लोकपालों एवं दिक्पालों का पूजन कर विधि पूर्वक वेदी पर प्रधान कलश की स्थापना करे। मण्डप के बाहर नित्य पूजा एवं निर्दिष्ट क्रम से पूर्वादि दिशाओं में भूतबलि देकर चारों द्वारों पर दो दो जलपूर्ण कलश स्थापित कर, आचमन कर वेदी पर आसन बिछाकर उसकी पूजा करे और उस पर पद्मासन से बैठकर चण्डिका का ध्यान कर भूतशुद्धि करे। अनन्तर, मूलमन्त्र एवं प्राणायाम से ऋष्यादि सभी न्यासों को करके प्रधान कलश में पीठ पूजा सहित चण्डिका का आवाहन कर, सम्पूर्ण आवरण एवं अङ्ग देवताओं

के साथ उनका ध्यान कर नित्य पूजा के अनुसार पात्र-स्थापन तथा अर्चन करे। आचार्य नव ब्राह्मणों के साथ अङ्ग एवं आवरण देवताओं सहित श्रीमहालक्ष्मी का पूजन कर ब्राह्मणों को सप्तशती पाठ करने की आज्ञा दे। आचार्य द्वारा पूजा के समय ब्राह्मण "जय चण्डि" शब्द का उच्चारण करते हुए उनका ध्यान करें तथा आचार्य के साथ अपने-अपने आसनों पर बैठकर भूतशुद्धि एवं मूलमन्त्र के समस्त न्यासों को सम्पन्न कर एकाग्रचित्त होकर विधिपूर्वक रहस्यत्रय सहित तीनों चरित्रों का पाठ करें। अनन्तर, महालक्ष्मी की प्रदक्षिणा एवं नमस्कार करें। इस कृत्य के अनन्तर यजमान लक्षणसम्पन्न दश कुमारियों का चन्दन माल्यादि से पूजन कर उन्हें विधिपूर्वक भोजन करावे। अनन्तर, ब्राह्मणों को विशिष्ट भोजन कराकर, दक्षिणा एवं ताम्बूल देकर आचार्य सहित वरण किये हुए ब्राह्मणों को भी भोजन करावे। पुनः सपरिवार भोजन कर मङ्गलोत्सव के साथ उस दिन का कृत्य पूरा करे। दूसरे दिन आचार्य सहित सभी लोग स्नानादि नित्यक्रिया के बाद चण्डिका पूजन, दिग्देवियों का पूजन कर बाहर भूत बलि दें। अनन्तर, देवी की प्रदक्षिणा करके प्रणाम करे एवं अपने अपने आसन पर बैठकर "जय चण्डि" का जप करते हुए दुर्गापूजन होने तक बैठें। आचार्य प्रथम दिवस की अपेक्षा द्विगुणित वस्त्र, आभूषणादि सहित समस्त पूजा द्रव्यों से भगवती को सन्तुष्ट करे। अनन्तर, आचार्य सहित ब्राह्मण द्विगुणित जप एवं पाठ करें। पूर्वोक्त क्रम से यजमान द्विगुणित कुमारियों एवं ब्राह्मणों को भोजन कराकर रात्रि जागरण करे। इसी प्रकार तीसरे दिन त्रिगुणित पूजा, जप एवं पाठ के साथ कुमारियों एवं ब्राह्मणों को भोजन करावे। चौथे दिन यह कृत्य चतुर्गुणित किया जावे। पांचवे दिन अग्नि का संस्थापन कर घृत, तिल युक्त पायस (खीर) से जप के दशांश का तथा सरहस्य चरित्रत्रय के प्रत्येक श्लोक से अथवा— **"नमो देव्यै महादेव्यै......"** इस श्लोक से अथवा नवाक्षर मन्त्र से हवन करके दिग्देवियों को नाम मन्त्रों द्वारा सौ-सौ आहुतियां देकर नवग्रहों की यज्ञ-विहित समिधाओं के साथ घृत, चन्दन और

तिल से एक एक को शत आहुतियां देकर इन्हीं द्रव्यों से वैदिक मन्त्रों द्वारा आचार्य सहित ब्राह्मण सौ-सौ आहुतियां दें। तदनन्तर देवी को प्रणाम कर यजमान दोनों स्तम्भों पर स्रुक रखकर घृत कलश के दशांश भाग से—

"मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या
वैश्वानरमृत आजातमग्निम्।
कविसम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं
जनयन्तदेवः॥"

इस वैदिक मन्त्र से अविच्छिन्न धारा द्वारा पूर्णाहुति करे। इस प्रकार श्रीमहालक्ष्मी को जप एवं हवन का समर्पण कर यजमान अपनी मनोकामनाओं की प्रार्थना करके किसी कर्मनिष्ठ ब्राह्मण को स्वर्ण, वस्त्र, अलंकार सहित सवत्सा गौ का दान कर, हाथ जोड़कर प्रणाम कर **"यस्या प्रभावमतुलं....."** इस श्लोक का पाठ कर आचार्य एवं ऋत्विजों को यथाशक्ति एक एक सवत्सा गौ अर्पित करे। अनन्तर, आचार्य एवं ऋत्विक् गण यजमान को आसन पर बैठाकर कुंकुम, अक्षत, दूर्वा, चन्दन आदि द्वारा चारों स्तोत्रों के एक एक श्लोक को पढ़कर आशीर्वाद दें। अनन्तर, पत्नी एवं पुत्रादि के साथ यजमान आशीर्वाद प्राप्त कर महालक्ष्मी को रत्न-पुष्पाञ्जलि अर्पित करे तथा देवी का विसर्जन करे। अन्त में, यजमान ब्राह्मणों को यथाशक्ति दक्षिणादि देकर मङ्गल घोष शान्तिपाठादि के उद्घोष सहित ब्राह्मणों तथा अपने बन्धु-बान्धवों, मित्रों एवं परिजनों के साथ अपने आवास में प्रवेश करे।

शतचण्डी-विधान का हिन्दी अनुवाद समाप्त हुआ।

सम्पादक-परिचयः

THE EDITOR

ज्योतिर्निबन्धादृतधर्मशास्त्र–ग्रन्थादि–निर्माणकृतश्रमोऽसौ ।
विद्वद्वरेण्यः प्रपितामहो मे धरामरेन्दुः सरयूप्रसादः ॥ १ ॥

राधाकृष्णातनूद्भवः स सरयूपारीणविप्रः सुधी–
गोत्रं काश्यपमस्य भाति विमलोपाख्या द्विवेदीत्यपि ।

वेदः शुक्लयजुस्ततोऽस्य महिता शाखा च माध्यन्दिनी
साकेतप्रथिताथ 'पण्डितपुरी' चावासभूः संस्थिता ॥ २ ॥

येनागमाचार्यपदप्रतिष्ठा सार्थीकृता चागमसत्प्रबन्धैः ।
आनीतवान् यं स्वपुरेऽत्र रम्ये नरेन्द्रमान्यो नृपरामसिंहः ॥ ३ ॥

तेन प्रणीतः खलु सप्तशत्याः सर्वस्वभूतो विशदप्रबन्धः ।
जिज्ञासवः शास्त्ररहस्यलुब्धाः श्रद्धां व्यधुश्चार्षगवीषु यत्र ॥ ४ ॥

तदीयमाधारमवाप्य चास्मिन्नासन् निगूढा खलु ये विशेषाः ।
अनूद्य तांस्तान् विषयप्रसत्त्यै हिन्दीगिरा निर्मलया समुक्ताः ॥ ५ ॥

यो विश्रुतः शास्त्रनिविष्टचेता नानाविधग्रन्थविधानशस्तः ।
महर्षिकल्पः स पितामहो मे *दुर्गाप्रसादो* विबुधाग्रगण्यः ॥ ६ ॥

साहित्यज्योतिर्गणितादिशास्त्रे भाषाविशेषेष्वपि यो यशस्वी ।
विद्वत्प्रियोऽनेककृतित्वदक्षः पूज्यः पितासीद् *गिरिजाप्रसादः* ॥ ७ ॥

तस्यात्मजः स्फीतमतिर्विनीतो *गंगाधरेति* प्रथिताभिधानः ।
महेश्वराराधनलब्धविद्यः साहित्यसेवानिरतो य आस्ते ॥ ८ ॥

श्रीवीरेश्वरशास्त्रिणः करुणया यः पाणिनीये मतो
भाष्यान्तं समधीत्य शास्त्रसरणौ व्युत्पत्तिलब्धादरः ।

संसेव्य स्वपितामहस्य चरणद्वन्द्वं च येनाखिलं
स्वायत्तीकृतमागमादिहृदयं तेन प्रसादीकृतम् ॥ ९ ॥

यश्चास्ते जयपत्तनस्थितमहाविद्यालयः प्राक्तनो
वाग्देवी खलु यत्र सौहृदमधाद् विद्याविलासैश्चिरम् ।
तस्मिन्नेष गुरुत्वरक्षणपरः शिक्षाविधामुन्नय-
न्नाचार्योचितसौष्ठवोक्तिरुचिरं साहित्यमध्यापयत् ॥ १० ॥

तेनायं जयपत्तनाधिपभवानीसिंहतुष्ट्यै स्तवो
व्याख्यातः प्रभया स्फुटावगतयेऽप्याङ्ग्लानुवादेन च ।
विद्वद्बन्धुरसौ स्वभावसुभगो राज्ञा समुद्भासितः
पद्मिन्या सह मोदतां भुवि चिरं राज्यश्रियालिङ्गितः ॥ ११ ॥

"My great grandfather was Pandit Sarayu Prasad Dvivedi, author of subject-books on Astrology and Theology like *'Sangrah Shiromani'* or *'Sadachar Prakash'* etc. beneficial to all, respected by men of learning and shining on the earth like the moon in heaven.

Son of Pt. Radha Krishna, he was a learned *Saryuparin* brahman. His *gotra* was *Kashyap* and surname, Dvivedi. He was a *Shukla Yajurvedi* and hailed from the wide-spread sacred *Madhyandini Shakha* (branch). His residence was at the famous Panditpuri, near Ayodhya (Saket), district Faizabad.

"True to his status as an Agamacharya, he justified it fully by writing excellent books on Agam Shastra, like *'Agam Rahasya'*, *'Sarvartha Kalpadrum'*, *'Lalita Sahasranam Vritti'*, *'Varnabeej Prakash'* and a learned commentary on *'Matrika Stuti'*. Maharaj Sawai Ram Singh II of Jaipur brought him to Jaipur, his fascinating capital.

"He was the creator of the voluminous work *'Saptashati Sarvasva'*. Through its medium, those spiritually curious were seen being attracted towards the *Shastras* and their content, and nursing faith in the utterances of the Rishis.

"Relying for support on this *Saptashati Sarvasva,* I have brought to light, in a faultless Hindi translation, the inherent worth-knowing special features of that monumental volume for making them universally known.

"My grandfather, M. M. Pt. Durga Prasad Dvivedi, was a pioneer amongst learned scholars, and being an expert in the *Shastras*, authored several books on Philosophy, Theology, Astronomy, Literature etc. Of these worthy of special mention are '*Chaturvarnya Shiksha*', '*Upapattindu Shekhar*', '*Dashkanth Vadham*' (*Champu* poetry), '*Jaimini Padyamrit*', '*Durga Pushpanjali*', Commentary on '*Sahitya Darpan*', *etc.*

"My respected father, Pandit Girija Prasad Dvivedi was a profound scholar of Astronomy and literature. He was proficient in English, Bangla and Marathi also, besides being a writer of Sanskrit and Hindi books. '*Siddhanta Shiromani*' of Bhaskaracharya, '*Kshetramiti*' (Geometry) '*Meghdoot*', '*Bhagvadgita*', '*Manusmriti*', '*Alankar Sarvasva*' etc. have been commentaried and edited by him. He enjoyed the company of learned men.

"I am known as Gangadhar Dvivedi, his talented but humble son. I have acquired knowledge as a reward of my worship of lord Shankar, and am at present busy in the service of literature.

"By the kind grace of the well-known scholar of Jaipur, Pandit Vireshwar Shastri, Dravid; he attained full command over the *Paniniya Vyakaran* by a thorough study of its *Bhashya*, and by dint thereof secured admission and distinction into the annals of the *Shastriya Marg*. By serving his grandfather, M. M. Pt. Durga Prasad Dvivedi's feet, as his disciple, whatever he received as '*prassad*' of the Agams and philosophy from the veteran, was very well mastered by him.

"The ancient Government Sanskrit Mahavidyalaya of Jaipur, where for long the goddess of speech, Saraswati has showered her affectionate blessings by means of boosting the various branches of learning, was the institution, where, upholding the dignity of teacher-ship, he improved the system of education and taught as a teacher should, the subject of literature in a highly satisfactory manner.

I have written a Hindi commentary–Prabha–on '*Durga Saptashati*' for the pleasure of Col. Sawai Bhawani Singh MVC of Jaipur and edited it alongwith an English translation. The Maharaja has a respect for men of learinng, is of good temperament, and out-shines with his Maharani as life-partner. I wish that he may enjoy a long life with his spouse Maharani Padmini in the embrace of royal prosperity and everlasting happiness."

या चण्डी मधुकैटभप्रमथिनी या माहिषोन्मूलिनी–
या धूम्रेक्षणचण्डमुण्डदलिनी या रक्तबीजाशिनी ।
शक्तिः शुम्भनिशुम्भदैत्यदलिनी या सिद्धिलक्ष्मीः परा
सा दुर्गा नवकोटिमूर्तिमहिताऽस्मान् पातु सर्वेश्वरी ।।

मन्त्र-श्लोकानुक्रमणिका

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
अथ कवचम्	
यद् गुह्यं	२
अस्ति गुह्यतमं	२
प्रथमं शैलपुत्री	२
पंचमं स्कन्दमातेति	४
नवमं सिद्धिदा	४
अग्निना	४
न तेषां	४
यैस्तु भक्त्या	६
ऐन्द्री गजसमारूढ़ा	६
ब्राह्मी हंससमारूढा	६
दृश्यन्ते रथमारूढा	६
खेटकं तोमरं	८
दैत्यानां देहनाशाय	८
महाबले महोत्साहे	८
प्राच्यां रक्षतु	८
प्रतीच्यां वारुणी	१०
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि	१०
जया मे	१०
शिखामुद्योतिनी	१०
त्रिनेत्रा च	१२
कपोलौ कालिका	१२
अधरे चामृतकला	१२
घण्टिकां चित्रघण्टा	१२

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
ग्रीवायां भद्रकाली	१४
खड्गधारिण्युभौ	१४
नखान् शूलेश्वरी	१४
हृदयं ललिता	१४
भूतनाथा च	१६
जङ्घे महाबला	१६
पादाङ्गुलीः	१६
रोमकूपेषु कौवेरी	१६
अन्त्राणि कालरात्रिश्च	१८
ज्वालामुखी	१८
अहंकारं मनो	१८
यशः कीर्तिं च	१८
पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां	२०
रक्षाहीनं तु	२०
पदमेकं न	२०
तत्र तत्रार्थलाभश्च	२०
परमैश्वर्यमतुलं	२२
त्रैलोक्ये तु	२२
यः पठेत्प्रयतो	२२
जीवेद्वर्षशतं	२२
स्थावरं जङ्गमं	२४
भूचराः खेचराश्चैव	२४
अन्तरिक्षचरा	२४
ब्रह्मराक्षसवेताला:	२४
मानोन्नतिर्भवेद्राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं	२६
जपेत्सप्तशतीं	२६
तावत्तिष्ठति	२६
प्राप्नोति पुरुषो	२६

॥ इति कवचं समाप्तम् ॥

अर्गला–स्तुतिः

जयन्ती मङ्गला	२८
मधुकैटभविद्राविविधातृवरदे	२८
महिषासुरनिर्नाशविधात्रि	३०

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
वन्दिताङ्घ्रियुगे	....	....	३०
रक्तबीजवधे	....	....	३०
अचिन्त्यरूपचरिते	....	....	३०
नतेभ्यः सर्वदा	....	....	३२
स्तुवद्भ्यो	....	....	३२
चण्डिके सततं	....	....	३२
देहि सौभाग्यमारोग्यं	....	....	३२
विधेहि द्विषतां	....	....	३४
विधेहि देवि	....	....	३४
विद्यावन्तं	....	....	३४
प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने	....	....	३४
चतुर्भुजे	....	....	३६
कृष्णेन संस्तुते	....	....	३६
हिमाचलसुतानाथपूजिते	....		३६
सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणेऽम्बिके			३६
इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते	....		३८
देवि प्रचण्ड	....	....	३८
देवि भक्तजनो	....	....	३८
पत्नीं मनोरमां	....	....	३८
इदं स्तोत्रं	....	....	४०

॥ इति अर्गला स्तुतिः ॥

देवी कीलकम्

विशुद्धज्ञानदेहाय	....	....	४२
सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणा		....	४२
सिध्यन्त्युच्चाटनादीनि	....	....	४२
न मन्त्रो नौषधं	....	....	४४
समग्राण्यपि	....	....	४४
स्तोत्रं वै	....	....	४४
सोऽपि क्षेममवाप्नोति	....	....	४६
ददाति प्रतिगृह्णाति	....	....	४६
यो निष्कीलां	....	....	४८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
न चैवाप्यटतस्तस्य	....	....	४८
ज्ञात्वा प्रारभ्य	....	....	५०
सौभाग्यादि च	....	....	५०
शनैस्तु	....	....	५०
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन	....	....	५०

॥ इति देवी कीलकम् ॥

रात्री सूक्तम्

ओं रात्री व्यख्यदायती	....	....	५२
ओर्वप्रा अमर्त्या	....	....	५२
निरुस्वसारमस्कृतोषसं	....	....	५४
सा नो अद्य	....	....	५४
निग्रामासो	....	....	५४
यावया वृक्यं	....	....	५६
उपमापेपिशत्तमः	....	....	५६
उप ते गा इवाकरं	....	....	५६

॥ इति रात्रि-सूक्तम् ॥

कण्ठपाठ के अभ्यास के लिए पूर्वाङ्ग एवं उत्तराङ्ग सहित मन्त्रों की यह अनुक्रमणिका संलग्न की गई है।

अथ सप्तशती

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः	श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
ॐ नमश्चण्डिकायै	....	....	५८	स तत्राश्रममद्राक्षीद्	....	....	६२
ॐ मार्कण्डेय उवाच				तस्थौ कञ्चित्स	....	....	६४
सावर्णिः सूर्यतनयो	....	....	५८	सोऽचिन्तयत्तदा तत्र	....	....	६४
महामायानुभावेन	....	....	६०	मद्भृत्यैस्तैर	....	....	६४
स्वारोचिषेऽन्तरे	....	....	६०	मम वैरिवशं	....	....	६४
तस्य पालयतः	....	....	६०	अनुवृत्ति	....	....	६६
तस्य तैरभवद्	....	....	६०	संचितः	....	....	६६
ततः स्वपुरमायातो	....	....	६२	तत्र विप्राश्रमाभ्यासे	....	....	६६
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य		—	६२	सशोक इव	....	....	६६
ततो मृगयाव्याजेन	....	....	६२				

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
प्रत्युवाच	....	....	६८
वैश्य उवाच			
समाधिर्नाम	....	....	६८
पुत्रदारैर्निरस्तश्च	....	....	६८
वनमभ्यागतो	....	....	६८
प्रवृत्तिं स्वजनानां	....	....	७०
कथं ते किं	....	....	७०
राजोवाच			
यैर्निरस्तो	....	....	७०
तेषु किं भवतः	....	....	७०
वैश्य उवाच			
एवमेतद्यथा	....	....	७२
किं करोमि	....	....	७२
पतिस्वजनहार्दं	....	....	७२
यत्प्रेमप्रवणं	....	....	७४
करोमि किं यन्न	....	....	७४

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
मार्कण्डेय उवाच			
ततस्तौ सहितौ	....	....	७४
समाधिर्नाम	....	....	७४
उपविष्टौ कथाः	....	....	७६
राजोवाच			
भगवंस्त्वामहं	....	....	७६
दुःखाय यन्मे	....	....	७६
जानतोऽपि	....	....	७६
स्वजनेन च	....	....	७८
दृष्टदोषेऽपि	....	....	७८
ममास्य च	....	....	७८
ऋषिरुवाच			
ज्ञानमस्ति	....	....	७८
विषयश्च	....	....	८०
केचिद्दिवा	....	....	८०
यतो हि	....	....	८०
मनुष्याणां च	....	....	८०

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
कणमोक्षादृतान्	....	....	८२
लोभात्प्रत्युपकाराय	....	....	८२
महामायाप्रभावेण	....	—	८२
महामाया	....	....	८२
बलादाकृष्य	....	....	८४
सैषा प्रसन्ना	....	....	८४
संसारबन्धहेतुश्च	....	....	८४
राजोवाच			
भगवन् का हि सा	....	....	८४
ब्रवीति कथमुत्पन्ना	....	....	८६
तत्सर्वं	....	....	८६
ऋषिरुवाच			
नित्यैव सा	....	....	८६
तथापि	....	....	८६
उत्पन्नेति तदा	....	....	८८
आस्तीर्य	....	....	८८
विष्णुकर्णमलोद्भूतौ	....	....	८८
दृष्ट्वा तावसुरौ	....	....	८८
विबोधनार्थाय	....	....	९०
निद्रां भगवतीं	....	....	९०
ब्रह्मोवाच			
त्वं स्वाहा	....	....	९०
सुधा त्वमक्षरे	....	....	९०
त्वमेव सा	....	....	९२
त्वयैतत्पाल्यते	....	....	९२
तथा संहृतिरूपान्ते	....	....	९२
महामोहा च	....	....	९२
कालरात्रि	....	....	९४
लज्जा पुष्टिस्तथा	....	....	९४
शङ्खिनी चापिनी	....	....	९४

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
परापराणां	....	....	९४
तस्य सर्वस्य	....	....	९६
सोऽपि निद्रावशं	....	....	९६
कारितास्ते	....	....	९६
मोहयैतौ	....	....	९६
बोधश्च	....	....	९८
	ऋषिरुवाच		
एवं स्तुता	....	....	९८
विष्णोः	....	....	९८
निर्गम्य दर्शने	....	....	९८
एकार्णवे हि	....	....	१००
क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं	....	....	१००
पञ्चवर्षसहस्राणि	....	....	१००
उक्तवन्तौ	....	....	१००
	भगवानुवाच		
भवेतामद्य	....	....	१०२

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
किमन्येन	....	....	१०२
	ऋषिरुवाच		
वञ्चिताभ्यामिति	....	....	१०२
विलोक्य ताभ्यां	....	....	१०२
	ऋषिरुवाच		
तथेत्युक्त्वा	....	....	१०४
एवमेषा	....	....	१०४
	॥ इति प्रथमाध्यायमन्त्रविभागः ॥		
	ऋषिरुवाच		
देवासुरमभूद्	....	....	१०६
तत्रासुरै	....	....	१०८
ततः पराजिता	....	....	१०८
यथावृत्तं	....	....	१०८
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां	....	....	१०८
स्वर्गान्निराकृततः	....	....	११०
एतद्वः कथितं	....	....	११०

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
इत्थं निशम्य	....	....	११०
ततोऽतिकोप	....	....	११०
अन्येषां चैव	....	....	११२
अतीव तेजसः	....	....	११२
अतुलं तत्र	....	....	११२
यदभूच्छांभवं	....	....	११२
सौम्येन स्तनयो	....	....	११४
ब्रह्मणस्तेजसा	....	....	११४
तस्यास्तु दन्ताः	....	....	११४
भ्रुवौ च	....	....	११४
ततः समस्तदेवानां	....	....	११६
शूलं शूलाद्	....	....	११६
शङ्खं च वरुणः	....	....	११६
वज्रमिन्द्रः	....	....	११६
कालदण्डाद्यमो	....	....	११८
समस्तरोमकूपेषु	....	....	११८
क्षीरोदश्चामलं	....	....	११८
अर्धचन्द्रं	....	....	११८
अङ्गुलीयकरत्नानि	....	....	१२०
अस्त्राण्यनेक	....	....	१२०
अददज्जलधि	....	....	१२०
ददावशून्यं	....	....	१२०
नागहारं	....	....	१२२
संमानिता	....	....	१२२
अमाययातिमहता	....	....	१२२
चचाल वसुधा	....	....	१२२
तुष्टुवुर्मुनय	....	....	१२४
संनद्धाखिल	....	....	१२४
अभ्यधावत	....	....	१२४
पादाक्रान्त्या	....	....	१२४
दिशो भुजसहस्रेण	....	....	१२६
शस्त्रास्त्रै	....	....	१२६
युयुधे चामर	....	....	१२६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
अयुध्यतायुतानां	....	....	१२६
अयुतानां शतैः	....	....	१२८
वृतो रथानां	....	....	१२८
युयुधे संयुगे	....	....	१२८
युयुधुः संयुगे	....	....	१२८
हयानां च	....	....	१३०
युयुधुः संयुगे	....	....	१३०
देवीं खड्गप्रहारै	....	....	१३०
लीलयैव प्रचिच्छेद	....	....	१३०
मुमोचासुरदेहेषु	....	....	१३२
चचारासुरसैन्येषु	....	....	१३२
त एव सद्यः	....	....	१३२
नाशयन्तो	....	....	१३२
मृदङ्गांश्च	....	....	१३४
खड्गादिभिश्च	....	....	१३४
असुरान्भुवि	....	....	१३४
विपोथिता	....	....	१३४
केचिन्निपतिता	....	....	१३६
श्येनानुकारिणः	....	....	१३६
शिरांसि पेतु	....	....	१३६
एकबाह्वक्षिचरणाः	....	....	१३६
कबन्धा युयुधुर्देव्या	...	....	१३८
कबन्धाश्छिन्नशिरसः	....	....	१३८
पातितै रथ	....	....	१३८
शोणितौघा	....	....	१३८
क्षणेन तन्महा	....	....	१४०
स च सिंहो	....	....	१४०
देव्या गणैश्च	....	....	१४०

॥ इति द्वितीयाध्यायमन्त्रविभागः ॥

ऋषिरुवाच

निहन्यमानं	....	....	१४२

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः	श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
स देवीं	....	....	१४४	उग्रास्यमुग्रवीर्यं	....	....	१५२
तस्य च्छित्वा	....	....	१४४	विडालस्यासिना	....	....	१५२
चिच्छेद च धनुः	....	....	१४४	एवं संक्षीयमाणे	....	....	१५२
स च्छिन्नधन्वा	....	....	१४४	कांश्चित्तुण्डप्रहारेण	....	....	१५२
सिंहमाहत्य	....	....	१४६	वेगेन कांश्चिद	....	....	१५४
तस्याः खड्गो	....	....	१४६	निपात्य प्रमथानीक	....	....	१५४
चिक्षेप च ततस्ततु	....	....	१४६	सोऽपि कोपान्	....	....	१५४
दृष्ट्वा तदापतच्छूलं	....	....	१४६	वेगभ्रमणविक्षुण्णा	....	....	१५४
हते तस्मिन्	....	....	१४८	धुतशृङ्गविभिन्नाश्च	....	....	१५६
सोऽपि शक्तिं	....	....	१४८	इति क्रोधसमा-	....	....	१५६
भग्नां शक्तिं	....	....	१४८	सा क्षिप्त्वा तस्य	....	....	१५६
ततः सिंहः	....	....	१४८	ततः सिंहोऽभवत्सद्यो	....	....	१५६
युध्यमानौ ततस्तौ	....	....	१५०	तत एवाशु	....	....	१५८
ततो वेगात्	....	....	१५०	करेण च महासिंहं	....	....	१५८
उदग्रश्चरणे	....	....	१५०	ततो महासुरो	....	....	१५८
देवी क्रुद्धा	....	....	१५०	ततः क्रुद्धा	....	....	१५८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
ननर्द चासुरः	....	....	१६०
सा च तान्प्रहितांस्तेन		....	१६०
देव्युवाच			
गर्ज गर्ज क्षणं	....	....	१६०
ऋषिरुवाच			
एवमुक्त्वा	....	....	१६२
ततः सोऽपि	....	....	१६२
अर्धनिष्क्रान्त-	....	....	१६२
ततो हाहाकृतं	....	....	१६४
तुष्टुवुस्तां सुरा	....	....	१६४
॥ इति तृतीयाध्यायमन्त्रविभागः ॥			
ऋषिरुवाच			
शक्रादयः सुरगणा	....	....	१६६
देव्या यया	....	....	१६८
यस्याः प्रभावमतुलं	....	....	१६८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
या श्रीः स्वयं	....	....	१७०
किं वर्णयाम	....	....	१७२
हेतुः समस्तजगतां	....	....	१७२
यस्याः समस्त	....	....	१७४
या मुक्तिहेतु	....	....	१७४
शब्दात्मिका	....	....	१७६
मेधासि देवि	....	....	१७६
ईषत्सहाससममलं	....	....	१७८
दृष्ट्वा तु देवि	....	....	१७८
देवि प्रसीद	....	....	१८०
ते संमता	....	....	१८०
धर्म्याणि देवि	....	....	१८२
दुर्गे स्मृता	....	....	१८२
एभिर्हतैर्जगदुपैति	....	....	१८४
दृष्ट्वैव किं	....	....	१८४
खड्गप्रभानिकर	....	....	१८६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
दुर्वृत्तवृत्तशमनं	....	....	१८६
केनोपमा भवतु	....	....	१८८
त्रैलोक्यमेतदखिलं	....	....	१८८
शूलेन पाहि नो	....	....	१९०
प्राच्यां रक्ष	....	....	१९०
सौम्यानि यानि	....	....	१९०
खड्गशूलगदादीनि	....	....	१९०
ऋषिरुवाच			
एवं स्तुता	....	....	१९२
भक्त्या समस्तै	....	....	१९२
देव्युवाच			
ब्रियतां त्रिदशाः	....	....	१९२
देवा ऊचुः			
भगवत्या कृतं	....	....	१९४
यदयं निहतः	....	....	१९४
संस्मृता संस्मृता	....	....	१९४
तस्य वित्तर्द्धि-	....	....	१९६
ऋषिरुवाच			
इति प्रसादिता	....	....	१९६
इत्येतत्कथितं	....	....	१९६
पुनश्च गौरी-	....	....	१९८
रक्षणाय च	....	....	१९८
॥ इति चतुर्थाध्यायमन्त्रविभागः ॥			
ऋषिरुवाच			
पुरा शुम्भनिशुम्भा-	....	....	२००
तावेव सूर्यतां	....	....	२०२
तावेव पवनर्द्धि	....	....	२०२
हृताधिकारास्त्रि-	....	....	२०२
तयास्माकं वरो	....	....	२०२
इति कृत्वा मतिं	....	....	२०४

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
	ऋषिरुवाच		
इत्युक्ता सा	....	....	२४०
	देव्युवाच		
सत्यमुक्तं त्वया	....	....	२४२
किं त्वत्र यत्	....	....	२४२
यो मां जयति	....	....	२४२
तदागच्छतु	....	....	२४४
	दूत उवाच		
अवलिप्तासि	....	....	२४४
अन्येषामपि	....	....	२४४
इन्द्राद्याः सकला	....	....	२४६
सा त्वं गच्छ	....	....	२४६
	देव्युवाच		
एवमेतद्बली	....	....	२४६
स त्वं गच्छ	....	....	२४८

॥ इति पञ्चमाध्यायमन्त्रविभागः ॥

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
	ऋषिरुवाच		
इत्याकर्ण्य वचो	....	....	२५०
तस्य दूतस्य	....	....	२५२
हे धूम्रलोचनाशु	....	....	२५२
तत्परित्राणदः	....	....	२५२
	ऋषिरुवाच		
तेनाज्ञप्तस्ततः	....	....	२५४
स दृष्ट्वा तां	....	....	२५४
न चेत्प्रीत्याद्य	....	....	२५४
	देव्युवाच		
दैत्येश्वरेण	....	....	२५६
	ऋषिरुवाच		
इत्युक्तः	....	....	२५६
अथ क्रुद्धं	....	....	२५८
ततो धुतसटः	....	....	२५८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
कांश्चित्करप्रहारेण	....	....	२५८
केषांचित्पाटयामास	....	....	२५८
विच्छिन्नबाहुशिरसः	....	....	२६०
क्षणेन तद्बलं	....	....	२६०
श्रुत्वा तमसुरं	....	....	२६०
चुकोप दैत्याधिपतिः	....	....	२६०
हे चण्ड हे मुण्ड	....	....	२६२
केशेष्वाकृष्य	....	....	२६२
तस्यां हतायां	....	....	२६२

॥ इति षष्ठाध्यायमन्त्रविभागः ॥

ऋषिरुवाच

आज्ञप्तास्ते ततो	....	....	२६४
ददृशुस्ते ततो	....	....	२६६
ते दृष्ट्वा तां	....	....	२६६
ततः कोपं	....	....	२६६
भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या	....	....	२६६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
विचित्रखट्वांगधरा	....	....	२६८
अतिविस्तारवदना	....	....	२६८
सा वेगेनाभिपतिता	....	....	२६८
पार्ष्णिग्राहा-	....	....	२६८
तथैव योधं तुरगै	....	....	२७०
एकं जग्राह केशेषु	....	....	२७०
तैर्मुक्तानि च	....	....	२७०
बलिनां तद्बलं	....	....	२७०
असिना निहताः	....	....	२७२
क्षणेन तद्बलं	....	....	२७२
शरवर्षैर्महा-	....	....	२७२
तानि चक्राण्य-	....	....	२७२
ततो जहासातिरुषा	....	....	२७४
उत्थाय च महासिं	....	....	२७४
अथ मुण्डोऽभ्य-	....	....	२७४
हतशेषं ततः	....	....	२७६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
शिरश्चण्डस्य	....	....	२७६
मया तवात्रोपहृतौ	....	....	२७६
ऋषिरुवाच			
तावानीतौ ततो	....	....	२७८
यस्माच्चण्डं च	....	....	२७८
॥ इति सप्तमाध्यायमन्त्रविभागः ॥			
ऋषिरुवाच			
चण्डे च निहते	....	....	२८०
ततः कोपपराधी-	....	....	२८२
अद्य सर्वबलैर्दैत्याः	....	....	२८२
कोटिवीर्याणि	....	....	२८२
कालका दौर्हृदा	....	....	२८२
इत्याज्ञाप्यासुरपतिः	....	....	२८४
आयान्तं चण्डिका	....	....	२८४
ततः सिंहो	....	....	२८४

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
धनुर्ज्यासिंह	....	....	२८४
तं निनाद-	....	....	२८६
एतस्मिन्नन्तरे	....	....	२८६
ब्रह्मे शगुहविष्णूनां	....	....	२८६
यस्य देवस्य	....	....	२८६
हंसयुक्तविमानाग्रे	....	....	२८८
माहेश्वरी वृषारूढा	....	....	२८८
कौमारी शक्ति-	....	....	२८८
तथैव वैष्णवी	....	....	२८८
यज्ञवाराहमतुलं	....	....	२९०
नारसिंही	....	....	२९०
वज्रहस्ता	....	....	२९०
ततः परिवृत-	....	....	२९०
ततो देवीशरीरात्तु	....	....	२९२
चा चाह धूम्र-	....	....	२९२
ब्रूहि शुम्भं	....	....	२९२

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
त्रैलोक्यमिन्द्रो	....	....	२९२
बलावलेपादथ	....	....	२९४
यतो नियुक्तो	....	....	२९४
तेऽपि श्रुत्वा	....	....	२९४
ततः प्रथममेवाग्रे	....	....	२९४
सा च तान्	....	....	२९६
तस्याग्रतस्तथा	....	....	२९६
कमण्डलुजला-	....	....	२९६
माहेश्वरी त्रिशूलेन	....	....	२९६
ऐन्द्री कुलिशपातेन	....	....	२९८
तुण्डप्रहारविध्वस्ता	....	....	२९८
नखैर्विदारिताँश्चान्या-		....	२९८
चण्डाट्टहासैरसुराः	....	....	२९८
इति मातृगणं	....	....	३००
पलायनपरान्	....	....	३००
रक्तबिन्दुर्यदा	....	....	३००
युयुधे स गदापाणि	....	....	३००
कुलिशेनाहतस्याशु	....	....	३०२
यावन्तः पतिता	....	....	३०२
ते चापि युयुधुः	....	....	३०२
पुनश्च वज्रपातेन	....	....	३०२
वैष्णवी समरे	....	....	३०४
वैष्णवी चक्रभिन्नस्य	....	....	३०४
शक्त्या जघान	....	....	३०४
स चापि गदया	....	....	३०६
तस्याहतस्य	....	....	३०६
तैश्चासुरा	....	....	३०६
तान्विषण्णान्	....	....	३०८
मच्छस्त्रपात	....	....	३०८
भक्षयन्ती चर	....	....	३०८
भक्ष्यमाणास्त्वया	....	....	३०८
मुखेन काली	....	....	३१०

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
न चास्या वेदनां	....	....	३१०
मुखे समुद्गता	....	....	३१०
देवी शूलेन	....	....	३१०
स पपात	....	....	३१२
ततस्ते हर्षमतुल	....	....	३१२

॥ इति अष्टमाध्यायमन्त्रविभागः ॥

राजोवाच

विचित्रमिदमाख्यातं	....	....	३१४
भूयश्चेच्छाम्यहं	....	....	३१६

ऋषिरुवाच

चकार कोपमतुलं	....	....	३१६
हन्यमानं महासैन्यं	....	....	३१६
तस्याग्रतस्तथा	....	....	३१८
आजगाम महावीर्यः	....	....	३१८
ततो युद्धमती-	....	....	३१८
चिच्छेदास्ता-	....	....	३१८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
निशुम्भो निशितं	....	....	३२०
ताडिते वाहने	....	....	३२०
छिन्ने चर्मणि	....	....	३२०
कोपाध्मातो	....	....	३२०
आविध्याथ गदां	....	....	३२२
ततः परशुहस्तं	....	....	३२२
तस्मिन्निपतिते	....	....	३२२
स रथस्थस्तथात्यु-	....	....	३२२
तमायान्तं	....	....	३२४
पूरयामास	....	....	३२४
ततः सिंहो	....	....	३२४
ततः काली	....	....	३२४
अट्टट्टहासमशिवं	....	....	३२६
दुरात्मंस्तिष्ठ	....	....	३२६
शुम्भेनागत्य या	....	....	३२६
सिंहनादेन	....	....	३२६
शुम्भमुक्ताञ्शरान्देवी		....	३२८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
ततः सा चण्डिका	....	....	३२८
ततो निशुम्भः	....	....	३२८
पुनश्च कृत्वा	....	....	३२८
ततो भगवती	....	....	३३०
ततो निशुम्भो	....	....	३३०
तस्यापतत एवाशु	....	....	३३०
शूलहस्तं समायान्तं	....	....	३३२
भिन्नस्य तस्य	....	....	३३२
तस्य निष्क्रामतो	....	....	३३२
ततः सिंहश्चखादोग्रं	....	....	३३४
कौमारीशक्ति-	....	....	३३४
माहेश्वरीत्रिशूलेन	....	....	३३४
खण्डखण्डं च चक्रेण	....	....	३३६
केचिद्विनेशुरसुराः	....	....	३३६

॥ इति नवमाध्यायमन्त्रविभागः ॥

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
	ऋषिरुवाच		
निशुम्भं निहतं	....	....	३३८
बलावलेपदुष्टे	....	....	३४०
	देव्युवाच		
एकैवाहं जगत्यत्र	....	....	३४०
ततः समस्तास्ता	....	....	३४०
	देव्युवाच		
अहं विभूत्या	....	....	३४२
	ऋषिरुवाच		
ततः प्रववृते	....	....	३४२
शरवर्षैः शितैः	....	....	३४४
दिव्यान्यस्त्राणि	....	....	३४४
मुक्तानि तेन	....	....	३४४
ततः शरशतैर्देवी-	....	....	३४४
छिन्ने धनुषि	....	....	३४६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
न चास्या वेदनां	....	....	३१०
मुखे समुद्गता	....	....	३१०
देवी शूलेन	....	....	३१०
स पपात	....	....	३१२
ततस्ते हर्षमतुल	....	....	३१२

॥ इति अष्टमाध्यायमन्त्रविभागः ॥

राजोवाच

विचित्रमिदमाख्यातं	....	....	३१४
भूयश्चेच्छाम्यहं	....	....	३१६

ऋषिरुवाच

चकार कोपमतुलं	....	....	३१६
हन्यमानं महासैन्यं	....	....	३१६
तस्याग्रतस्तथा	....	....	३१८
आजगाम महावीर्यः	....	....	३१८
ततो युद्धमती-	....	....	३१८
चिच्छेदास्ता-	....	....	३१८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
निशुम्भो निशितं	....	....	३२०
ताडिते वाहने	....	....	३२०
छिन्ने चर्मणि	....	....	३२०
कोपाध्मातो	....	....	३२०
आविध्याथ गदां	....	....	३२२
ततः परशुहस्तं	....	....	३२२
तस्मिन्निपतिते	....	....	३२२
स रथस्थस्तथात्यु-	....	....	३२२
तमायान्तं	....	....	३२४
पूरयामास	....	....	३२४
ततः सिंहो	....	....	३२४
ततः काली	....	....	३२४
अट्टट्टहासमशिवं	....	....	३२६
दुरात्मंस्तिष्ठ	....	....	३२६
शुम्भेनागत्य या	....	....	३२६
सिंहनादेन	....	....	३२६
शुम्भमुक्ताञ्शरान्देवी		....	३२८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
ततः सा चण्डिका	....	....	३२८
ततो निशुम्भः	....	....	३२८
पुनश्च कृत्वा	....	....	३२८
ततो भगवती	....	....	३३०
ततो निशुम्भो	....	....	३३०
तस्यापतत एवाशु	....	....	३३०
शूलहस्तं समायान्तं	....	....	३३२
भिन्नस्य तस्य	....	....	३३२
तस्य निष्क्रामतो	....	....	३३२
ततः सिंहश्चखादोग्रं	....	....	३३४
कौमारीशक्ति-	....	....	३३४
माहेश्वरीत्रिशूलेन	....	....	३३४
खण्डखण्डं च चक्रेण	....	....	३३६
केचिद्विनेशुरसुराः	....	....	३३६

॥ इति नवमाध्यायमन्त्रविभागः ॥

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
	ऋषिरुवाच		
निशुम्भं निहतं	....	....	३३८
बलावलेपदुष्टे	....	....	३४०
	देव्युवाच		
एकैवाहं जगत्यत्र	....	....	३४०
ततः समस्तास्ता	....	....	३४०
	देव्युवाच		
अहं विभूत्या	....	....	३४२
	ऋषिरुवाच		
ततः प्रववृते	....	....	३४२
शरवर्षैः शितैः	....	....	३४४
दिव्यान्यस्त्राणि	....	....	३४४
मुक्तानि तेन	....	....	३४४
ततः शरशतैर्देवी-	....	....	३४४
छिन्ने धनुषि	....	....	३४६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
ततः खड्गमुपादाय	....	....	३४६
तस्यापतत एवाशु	....	....	३४६
हताश्वः स तदा	....	....	३४६
चिच्छेदापततस्तस्य	....	....	३४८
स मुष्टिं पातयामास	...	....	३४८
तलप्रहाराभिहतो	....	....	३४८
उत्पत्य च	....	....	३४८
नियुद्धं खे तदा	....	....	३५०
ततो नियुद्धं	....	....	३५०
स क्षिप्तो धरणीं	....	....	३५०
तमायान्तं ततो	....	....	३५०
स गतासुः	....	....	३५२
ततः प्रसन्नमखिलं	....	....	३५२
उत्पातमेघाः	....	....	३५२
ततो देवगणाः	....	....	३५२
अवादयंस्तथैवान्ये	....	....	३५४
जज्वलुश्चाग्नयः	....	....	३५४

॥ इति नवमाध्यायमन्त्रविभागः ॥

ऋषिरुवाच

देव्या हते तत्र	....	....	३५६
देवि प्रपन्नार्त्तिहरे	....	....	३५८
आधारभूता	....	....	३५८
त्वं वैष्णवी	....	....	३६०
विद्याः समस्तास्तव	....	....	३६०
सर्वभूता यदा	....	....	३६२
सर्वस्य बुद्धिरूपेण	....	....	३६२
कलाकाष्ठादिरूपेण	....	....	३६२
सर्वमङ्गलमङ्गल्ये	....	....	३६४
सृष्टिस्थितिविनाशानां		....	३६४
शरणागतदीनार्त-	....	....	३६४
हंसयुक्तविमानस्थे	....	....	३६६
त्रिशूलचन्द्राहिधरे	....	....	३६६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
मयूरकुक्कुटवृते	....	....	३६६
शङ्खचक्रगदा-	....	....	३६८
गृहीतोग्रमहाचक्रे	....	....	३६८
नृसिंहरूपेणोग्रेण	....	....	३६८
किरीटिनि महावज्रे		....	३७०
शिवदूतीस्वरूपेण	....	....	३७०
दंष्ट्राकरालवदने	....	....	३७०
लक्ष्मि लज्जे	....	....	३७२
मेधे सरस्वति	....	....	३७२
सर्वस्वरूपे	....	....	३७२
एतत् ते वदनं	....	....	३७४
ज्वालाकरालमत्यु-	....	....	३७४
हिनस्ति दैत्यतेजांसि	....	....	३७४
असुरासृग्वसापङ्क-	....	....	३७४
रोगानशेषानपहंसि	....	....	३७६
एतत्कृतं यत्कदनं	....	....	३७६
विद्यासु शास्त्रेषु	....	....	३७८
रक्षांसि यत्रो-	....	....	३७८
विश्वेश्वरि त्वं	....	....	३८०
देवि प्रसीद	....	....	३८०
प्रणतानां प्रसीद	....	....	३८२
देव्युवाच			
वरदाहं सुरगणा	....	....	३८२
देवा ऊचुः			
सर्वाबाधाप्रशमनं	....	....	३८४
देव्युवाच			
वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते	....	....	३८४
नन्दगोपगृहे जाता	....	....	३८४
पुनरप्यतिरौद्रेण	....	....	३८६
भक्षयन्त्याश्च	....	....	३८६
ततो मां देवताः	....	....	३८६
भूयश्च शतवार्षिक्या	....	....	३८६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
ततः शतेन नेत्राणां	....	....	३८८
ततोऽहमखिलं	....	....	३८८
तत्रैव च वधिष्यामि	....	....	३८८
पुनश्चाहं यदा	....	....	३९०
तदा मां मुनयः	....	....	३९०
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये	....	....	३९०
त्रैलोक्यस्य	....	....	३९०
इत्थं यदा यदा	....	....	३९२
तदा तदावतीर्याहं	....	....	३९२

॥ इति एकादशाध्यायमन्त्रविभागः ॥

देव्युवाच

एभिःस्तवैश्च मां	....	....	३९४
मधुकैटभनाशं	....	....	३९६
अष्टम्यां च	....	....	३९६
न तेषां दुष्कृतं	....	....	३९६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
शत्रुतो न भयं	....	....	३९६
तस्मान्ममैतन्-	....	....	३९८
उपसर्गानशेषांस्तु	....	....	३९८
यत्रैतत्पठ्यते	....	....	३९८
बलिप्रदाने	....	....	३९८
जानताजानता	....	....	४००
शरत्काले महापूजा	....	....	४००
सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो	....	....	४००
श्रुत्वा ममैतन्-	....	....	४००
रिपवः संक्षयं	....	....	४०२
शान्तिकर्मणि	....	....	४०२
उपसर्गाः शमं	....	....	४०२
बालग्रहाभिभूतानां	....	....	४०२
दुर्वृत्तानामशेषाणां	....	....	४०४
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं	....	....	४०४
विप्राणां भोजनैर्होमैः	....	....	४०४

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
श्रुतं हरति पापानि	....	....	४०४
रक्षां करोति	....	....	४०६
तस्मिञ्छ्रुते	....	....	४०६
ब्रह्मणा च	....	....	४०६
दस्युभिर्वा वृतः	....	....	४०६
राज्ञा क्रुद्धेन	....	....	४०८
पतत्सु चापि	....	....	४०८
स्मरन्ममैतच्चरितं	....	....	४०८
दूरादेव पलायन्ते	....	....	४०८
ऋषिरुवाच			
इत्युक्त्वा सा	....	....	४१०
पश्यतां सर्वदेवानां	....	....	४१०
यज्ञभागभुजः	....	....	४१०
जगद्विध्वंसिनि	....	....	४१२
एवं भगवती देवी	....	....	४१२
तयैतन्मोह्यते विश्वं	....	....	४१२
व्याप्तं तयैतत्सकलं	....	....	४१२

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
सैव काले महामारी	....	....	४१४
भवकाले नृणां	....	....	४१४
स्तुता संपूजिता	....	....	४१४
॥ इति द्वादशाध्याय मन्त्रविभागः ॥			
ऋषिरुवाच			
एतत् ते कथितं	....	....	४१६
विद्या तथैव क्रियते	....	....	४१८
तामुपैहि महाराज	....	....	४१८
आराधिता सैव	....	....	४१८
मार्कण्डेय उवाच			
इति तस्य वचः	....	....	४१८
निर्विण्णोऽतिममत्वेन	....	....	४२०
संदर्शनार्थमम्बाया	....	....	४२०
स च वैश्यस्तपस्तेपे	....	....	४२०
अर्हणां चक्रतुस्तस्याः	....	....	४२०
ददतुस्तौ बलिं	....	....	४२२

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
परितुष्टा जगद्धात्री	....	....	४२२
देव्युवाच			
यत्प्रार्थ्यते त्वया	....	....	४२२
मत्तस्तत्प्राप्यतां	....	....	४२२
मार्कण्डेय उवाच			
ततो वव्रे नृपो	....	....	४२४
अत्रैव च निजं	....	....	४२४
सोऽपि वैश्यस्ततो	....	....	४२४
ममेत्यहमिति	....	....	४२४
देव्युवाच			
स्वल्पैरहोभिर्नृपते	....	....	४२४
हत्वा रिपूनस्खलितं	....	....	४२६
मृतश्च भूयः	....	....	४२६
सावर्णिको मनुर्नाम	....	....	४२६
वैश्यवर्य त्वया	....	....	४२६
तं प्रयच्छामि	....	....	४२६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
मार्कण्डेय उवाच			
इति दत्वा तयोर्देवी	....	....	४२६
बभूवान्तर्हिता सद्यो	....	....	४२८
सूर्याज्जन्म समासाद्य	....	....	४२८
॥ इति त्रयोदशाध्याय-मन्त्रविभागः ॥			
ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तम्			
ॐ अहं रुद्रेभिर्व-	....	....	४३०
अहं सोम ममानसं	....	....	४३२
अहं राष्ट्रीसङ्गमनी	....	....	४३२
मयासो अन्नमत्ति	....	....	४३४
अहमेव स्वयमिदं	....	....	४३४
अहं रुद्राय धनुरातनोमि	....		४३४
अहं सुवे पितरमस्य	....	....	४३६
अहमेव वात इव	....	....	४३६
॥ इति देवीसूक्त-मन्त्रविभागः ॥			
राजोवाच			
भगवन्नवतारा मे	....	....	४३८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
आराध्यं यन्मया	....	....	४४०
ऋषिरुवाच			
इदं रहस्यं	....	....	४४०
सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा		....	४४०
मातुलिङ्गं गदां	....	....	४४२
तप्तकाञ्चनवर्णाभा	....	....	४४२
शून्यं तदखिलं लोकं	....	....	४४२
सा भिन्नाञ्जनसंकाशा		....	४४२
खड्गपात्रशिरः	....	....	४४४
सा प्रोवाच महालक्ष्मीं		....	४४४
तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं		....	४४४
महामाया महाकाली	....	....	४४४
इमानि तव नामानि	....	....	४४६
तामित्युक्त्वा	....	....	४४६
अक्षमालाङ्कुशधरा	....	....	४४६
महाविद्या महावाणी	....	....	४४६
अथोवाच	....	....	४४८

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
इत्युक्त्वा ते	....	....	४४८
ब्रह्मन्विधे	....	....	४४८
महाकाली भारती	....	....	४४८
नीलकण्ठं रक्तबाहुं	....	....	४५०
स रुद्रः शङ्करः	....	....	४५०
सरस्वती स्त्रियं	....	....	४५०
विष्णुः कृष्णो	....	....	४५०
एवं युवतयः सद्यः	....	....	४५२
ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं	....	....	४५२
स्वरया सह संभूय	....	....	४५२
अण्डमध्ये प्रधानादि	....	....	४५२
पुपोष पालयामास	....	....	४५४
महालक्ष्मीर्महाराज	....	....	४५४
नामान्तरैर्निरूप्यैषा	....	....	४५४
॥ इति प्राधानिकरहस्य–मन्त्रविभागः ॥			
ऋषिरुवाच			
त्रिगुणा तामसी	....	....	४५६

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
योगनिद्रा हरेरुक्ता	४५८
दशवक्त्रा दशभुजा	४५८
स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा	४५८
खड्गबाणगदाशूलं	४६०
एषा सा वैष्णवी	४६०
सर्वदेवशरीरेभ्यो	४६०
श्वेतानना नीलभुजा	४६२
सुचित्रजघना	४६२
अष्टादशभुजा पूज्या	४६२
अक्षमाला च कमलं	४६२
शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं	४६४
सर्वदेवमयीमीशां	४६४
गौरीदेहात्समुद्भूता	४६४
दधौ चाष्टभुजा	४६४
एषा संपूजिता	४६६
इत्युक्तानि स्वरूपाणि	४६६
महालक्ष्मीर्यदा पूज्या	४६६

श्लोकाः	पृष्ठाङ्काः
विरञ्चिः स्वरया	४६८
अष्टादशभुजा मध्ये	४६८
अष्टादशभुजा चैषा	४६८
कालमृत्यू च संपूज्यौ	४७०
नवास्याः शक्तयः	४७०
अवतारत्रयार्चायां	४७०
महालक्ष्मीर्महाकाली	४७०
महिषान्तकरी येन	४७२
अर्घ्यादिभिरलंकारै-	४७२
रुधिराक्तेन बलिना	४७२
सकर्पूरैश्च	४७४
पूजयेन्महिषीं येन	४७४
वाहनं पूजयेद्देव्या	४७४
ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा	४७४
चरितार्घं तु न	४७६
क्षमापयेज्जगद्धात्रीं	४७६
जुहुयात्स्तोत्रमन्त्रैर्वा	४७६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
प्रयतः प्रांजलिः प्रह्वः	....		४७६
एवं यः पूजयेद्भक्त्या	....	....	४७८
यो न पूजयते नित्यं	....	....	४७८
तस्मात्पूजय भूपाल	....	—	४७८

॥ इति वैकृतिकरहस्य–मन्त्रविभागः ॥

ऋषिरुवाच

नन्दा भगवती नाम	....	....	४८०
कनकोत्तमकान्तिः	....	....	४८२
कमलांकुशपाशाब्जै–		....	४८२
या रक्तदन्तिका	....	....	४८२
रक्ताम्बरा रक्तवर्णा	....	....	४८२
रक्ततीक्ष्णनखा	—	....	४८४
वसुधेव विशाला	....	....	४८४
कर्कशावतिकान्तौ	....	—	४८४
खड्गं पात्रं च	....	....	४८६
अनया व्याप्तमखिलं	....	—	४८६
अधीते य इमं नित्यं	....	—	४८६

श्लोकाः			पृष्ठाङ्काः
शाकम्भरी नीलवर्णा	....	....	४८८
सुकर्कशसमोतुङ्गवृत्तपीनघनस्तनी			४८८
पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं		....	४८८
कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति		....	४८८
विशोका दुष्टदमनी	....	....	४९०
शाकम्भरीं स्तुवन्	....	....	४९०
भीमापि नीलवर्णा	....	....	४९०
चन्द्रहासं च डमरुं	....	....	४९२
तेजोमण्डलदुर्दर्शा	....	....	४९२
चित्रभ्रमरपाणिः	....	....	४९२
जगन्मातुश्चण्डिकायाः		....	४९४
आख्यानं दिव्य–	....	....	४९४
सप्तजन्मार्जितैः	....	....	४९४
देव्या ध्यानं मया	....	....	४९४

॥ इति मूर्तिरहस्य–मन्त्रविभागः ॥

चण्डीपूजा पद्धतिः	....	....	४९६
पूजापद्धति का हिन्दी अनुवाद		....	५१६

लौकिक कामनाओं की सिद्धि के लिए सार्ध नवदुर्गा का एक अनुभूत प्रयोग यहां दिया जाता है—

अथ सार्धनवप्रयोगो यथा वाराहीतन्त्रे रुद्रयामले च ।

नवसार्धं जपेद्यस्तु मुच्येत्प्राणान्तकाद्भयात् ।
राज्यं श्रीः सर्वसंपत्तिः सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥१॥
प्रयोगोऽयं महागुह्यो देवानामपि दुर्लभः ।
तत्तेऽहं संप्रवक्ष्थामि सावधानोऽवधारय ॥२॥
मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।
शक्रादिस्तुतिरेवातो देवीसूक्तं पुनस्तथा ॥३॥
नारायणीस्तुतिश्चैव फलानुकीर्त्तनं तथा ।
ततो वरप्रदानं च ह्यर्धपाठोऽयमुच्यते ॥४॥
अर्धपाठस्त्वयं प्रोक्तः सर्वकामफलप्रदः ।
अर्धपाठेन रहितं नवपाठफलं न हि ॥५॥

अत्रार्धपाठे पञ्चमाध्याये देवा ऊचुः—"नमो देव्यै इत्यारभ्य ऋषिरुवाचेति पर्यन्तमिति । ब्राह्मणास्त्वत्रैदश । तेषु नव ब्राह्मणाः पूर्णत्रयोदशाध्यायपाठकर्त्तारः । एकोऽर्धपाठकर्त्ता । एको यजुर्वेदीयषडङ्गाष्टाध्यायपाठकः । एवमेकादश ब्राह्मणाः प्रयोगकर्त्तार इति ॥

अथ प्रयोगपद्धतिः ।

तत्र चन्द्रतारानुकूले शुभे मुहूर्ते अथवा कृष्णाष्टमीनवमीचतुर्दशीनामन्यतमदिने कुमारीं यथोक्तलक्षणामानीय यजमानः सुस्नातः श्वेताम्बरधरः

सपत्नीकः सुप्रक्षालितपाणिपादः तां संपूज्य संभोज्य दक्षिणादानेन तां संतोष्य तस्याज्ञां गृहीत्वा गोमयोपलिप्तायां भूमौ स्वासने समुपविष्टः प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा स्वेष्टदेवं संस्मृत्य आचम्य स्वस्तिवाचनं कारयित्वा कस्मिंश्चित्पीठे विघ्नविघातार्थं गणेशमावाह्य गन्धाक्षतपुष्पमालाधूपदीपमोदकनैवेद्यताम्बूलदक्षिणाप्रार्थनान्तैः संपूज्य संप्रार्थ्य संकल्पं कुर्यात् ।

ॐ तत्सदद्य इत्यादिदेशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं राजतो व्यवहारतश्च प्रतिष्ठाश्रीवृद्धिकामः सकुटुम्बस्यात्मनः शरीरारोग्यकामश्च एकादशब्राह्मणद्वारा यजुर्वेदीयवाजसनेयिसंहितान्तर्गतैकषडङ्गपाठसहित मार्कण्डेयपुराणान्तर्गत चण्डीचरित्रस्य श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदैवतकस्य सार्धनवकस्य पुरश्चरणं कारयिष्ये । इति संकल्प्य गन्धाक्षतपुष्पकौसुम्भसूत्रवासोरूपां वरणसंभृतिमादाय तत्पात्रं करद्वयोपरि निधाय संकल्पं कुर्यात् । ॐ तत्सदद्य इत्यादि अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा पूर्वप्रतिज्ञातार्थसिद्धिकामः एभिर्वरणद्रव्यैरेकषडङ्गसहितसार्धनवकपाठान् कर्तुमेकादश ब्राह्मणान्यथानामगोत्रानहं वृणे । इति संकल्प्य जलं भूमौ निःक्षिप्य प्रदक्षिणक्रमेण प्रत्येकं ब्राह्मणं वृणुयात् । तत आचार्यः यथाविधि कलशं संस्थाप्य तत्र श्रीभवानीशंकरावावाह्य स्नान, वस्त्र, गन्धाक्षत, पुष्प, विल्वपत्र, माला, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, ताम्बूल, दक्षिणान्तोपचारैर्वक्ष्यमाणक्रमेण संपूज्य देवीं ध्यात्वा नमस्कृत्य पुस्तकं पूजयेत् । अथ पुस्तकपूजनम् । तत्र पाद्यादिभिः षडङ्गपाठाधिष्ठातृदेवतां संपूजयेत् । यथा एष गन्धः श्रीभवानीशंकराभ्यां नमः । इमे अक्षताः श्रीभवानीशंकराभ्यां नमः । इमानि पुष्पाणि श्रीभवानीशंकराभ्यां नमः । एष धूपः श्रीभवानीशंकराभ्यां नमः । एष दीपः श्रीभवानीशंकराभ्यां नमः । इदं नैवेद्यं श्रीभवानीशंकराभ्यां नमः । एष नमस्कारः श्रीभवानीशंकराभ्यां नमः ।

इति षडङ्गपुस्तकं संपूज्य । सप्तशतीपुस्तकमप्येवमेव पूजयेत् । ततः पाठार्थमनुज्ञां ब्राह्मणेभ्यो दद्यात् । ते ब्राह्मणाः पृथक् पृथक् स्वस्वपाठसंकल्पं कुर्युः । तत्र क्रमः—ॐ तत्सदद्य देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा अमुकगोत्रस्यामुकनाम्नो यजमानस्य मनोऽभीष्टसिद्धचर्थमाद्यन्ताष्टोत्तरशतनवार्णजपपूर्वकचण्डीचरित्रस्यैकपाठमहं करिष्यामि । एवं नव ब्राह्मणाः । दशमस्तु चण्डीचरित्रस्यार्धपाठं करिष्यामि इति । एकादशस्तु षडङ्गपाठं करिष्यामि इति संकल्पयेत् । स्वं स्वं पाठं यथाविधि निर्वर्त्यान्ते नवार्णजपं विधाय श्रीदेव्यै समर्प्य होमविधिसंस्कृते वह्नौ घृतपायसतिलैः पाठैकेन होमं विधाय तदन्ते मूलमन्त्रेण तर्पणमार्जनादिकं विधाय ब्राह्मणान् भोजयेत् । यथा ॐ तत्सदद्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा श्रीभवानीशंकरप्रीतये कारितषडङ्गैकपाठसहितसार्धनवचण्डीपाठाङ्गत्वेन पायसान्नेन सोपकरणेन यथानामगोत्रान् ब्राह्मणानहं संभोजये । इति संकल्प्य नानाविधव्यञ्जनैस्तान्संभोज्य ताम्बूलं भोजनदक्षिणां च दद्यात् । ॐ तत्सदद्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा श्रीभवानीशंकरप्रीत्यर्थं कारितब्राह्मणभोजनसाङ्गतासिद्धचर्थमिदं दक्षिणाद्रव्यं यथानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दातुमहमुत्सृजे । इति संकल्प्य भोजनदक्षिणां दत्वा पाठदक्षिणां दद्यात् । ॐ तत्सदद्येत्युक्त्वा अमुकगोत्रोऽमुकशर्मा प्रतिज्ञातार्थसिद्धचर्थं श्रीभवानीशंकरप्रीत्वर्थं सषडङ्गसार्धनवपाठसाङ्गत्वसिद्धये इदं दक्षिणाद्रव्यं तन्मूल्योपकल्पितं हिरण्यमग्निदैवतं रजतं चन्द्रदैवतं वा यथानामगोत्रेभ्यो यथाभागमाचार्याय द्विगुणं दत्त्वा ॐ यतो यतः समीहसे इत्यादि पठित्वा पुष्पाक्षतयुतमाशीर्वादं यजमानाय दत्त्वा श्रीदेवीं विसृज्य विहरेदिति शिवम् ।।

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
जयपुर परिसर, जयपुर
पुस्तकालय
क्रमांक 11711